इछामती

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

इछामती

विभूतिभूषण वंद्योपाध्याय

अनुवाद

पुष्पमाला जैन

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-2132-3

पहला संस्करण : 1988
पहली आवृति : 1997 *(शक 1919)*

Original Title : Ichhamati (*Bangla*)
Translation : Ichhamati (*Hindi*)

रु. 39.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया,
ए-5 ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित।

भूमिका

इछामती विभूतिभूषण वंद्योपाध्याय का अंतिम उपन्यास है। यह उपन्यास उनकी मृत्यु के कुछ महीने पहले जनवरी 1950 में प्रकाशित हुआ था। उनका प्रथम उपन्यास *पथेर पांचाली* इक्कीस वर्ष पहले प्रकाशित हुआ था। उन इक्कीस सालों में विभूतिभूषण ने अनेक उपन्यास व लघु कथाएं लिखी थीं, जिनमें से अधिकांश विषय वैचित्र्य एवं कल्पनाभंगिमा की मौलिकता के लिए बंगला साहित्य में स्मरणीय है। बावजूद इसके इसमें संदेह नहीं है कि उनका प्रथम उपन्यास ही उनकी श्रेष्ठ कृति थी। *पथेर पांचाली* ने अपनी आंतरिकता एवं गंभीरता के लिए अविर्भाव के साथ ही पाठकों का मन जीत लिया था। उसमें पाठकों को परिचित जगत का अपरिचित सौंदर्य दिखाई दिया था। एक शिशु के सामने समस्त जगत का विचित्र रूप और संभावना जैसे साक्षात हो उठी थी। संसार के दुख, दारिद्र्य, मृत्यु, मनुष्य की ममता, उदासीनता, प्रकृति के रूप एवं विस्मय को विभूतिभूषण ने जैसे एक अखंड तथा अपने में संपूर्ण जगत में गढ़ दिया था। पाठकों ने उनको प्रकृति के रूप एवं सामान्य दृष्टिगोचर घटनाओं तथा वस्तुओं के आंतरिक गंभीर तात्पर्य एवं सौंदर्य के आविष्कारक कलाकार के रूप में जाना पहचाना। वे अपने पूर्ववर्ती एवं समकालीन सभी उपन्यासकारों से भिन्न थे। बंगला उपन्यास के प्रथम संस्थापक बंकिमचंद्र के साथ विभूतिभूषण का कोई मेल नहीं है। प्रेम और सामाजिक नीति का जो संघर्ष बंकिमचंद्र के उपन्यास का केंद्र बिंदु है, विभूतिभूषण को वह जरा भी आकर्षित नहीं कर पाया। इसके अलावा बंकिम के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की विषयवस्तु की ओर भी उन्होंने कोई आग्रह नहीं दिखाया। रवीन्द्रनाथ के उपन्यासों के सूक्ष्म मनोविश्लेषण की पद्धति की ओर भी वे आकृष्ट नहीं हुए। रवीन्द्रनाथ के *चोखरे बालि* उपन्यास में मनुष्य के असीम अनुराग के साथ सामाजिक अनुशासन के संघर्ष का भी अनुसरण उन्होंने नहीं किया। *गोरा* के समकालीन धर्मचिंतन और समाजचिंतन की परस्पर विपरीत धाराओं के संघर्ष को भी उन्होंने नहीं स्वीकारा। यहां तक कि वे शरतचंद्र से भी प्रभावित नहीं हुए थे जिनका प्रभाव उस काल के बंगला साहित्य में अप्रतिहत था तथा जिनकी जनप्रियता ने जनता में एक किंवदंती का रूप ले लिया था। शरतचंद्र ने अपने उपन्यासों का विषय बंगाली मध्यवित्त परिवारों के दैनिक जीवन से लिया था, परंतु विभूतिभूषण उस पथ पर भी

अग्रसर नहीं हुए। उनके पूर्ववर्ती एवं समकालीन लेखक जिन सामाजिक और नैतिक समस्याओं से प्रभावित हुए थे, उन्हें भी उन्होंने अपने साहित्य की विषयवस्तु नहीं बनाया। मनुष्य के व्यक्तित्व एवं सामाजिक समस्याओं के द्वंद्व से उत्पन्न संघर्ष के प्रति भी उनका आकर्षण अत्यंत सीमित था। उन्होंने अपना एक अलग ही जगत ढूंढा और अपने प्रथम उपन्यास *पथेर पांचाली* से लेकर अंतिम उपन्यास 'इछामती' तक वे उसी जगत में विचरण करते रहे।

विभूतिभूषण का निजी जगत नागरिक सभ्यता का जगत नहीं है, कभी वह ग्रामीण जीवन का है तो कभी अरण्य जीवन का। इसका अर्थ यह नहीं है कि उनके उपन्यासों में नगर अथवा नागरिक सभ्यता का संघात नहीं है, ऐसा भी नहीं कि उनके उपन्यास आधुनिक जीवन के संघर्ष को पूर्ण रूप से अस्वीकार करके एक शांत, सुरम्य प्रकृति में पलायन की चेष्टा मात्र हों। उनमें नगर है, नागरिकता है, शहरी मनुष्य का चरित्र भी है, परंतु उनसे भी ऊपर मनुष्य और प्रकृति के प्रति शहरी मनुष्य का आकर्षण व सौंदर्यबोध मात्र न होकर और भी आदिम एवं जैविक है। उनके प्रकृतिबोध के साथ एक ऐसे कालबोध की भावना संलग्न है जो मनुष्य के जीवन प्रभाव को विश्व प्रकृति की एक धारा के रूप में देखती है। एक ऐसा कालबोध जो वर्तमान को अनादि अनागत काल के साथ जोड़ देता है। उनके उपन्यास की विषयवस्तु कभी-कभी सामान्य और कभी अकिंचन एवं तुच्छ भी लगती है, किंतु अंत में उसका सम्मिलित रूप मन पर एक चलायमान जीवन की छाप छोड़ जाता है। यही चलायमान जीवन और प्रवहमान काल दोनों मिलकर उनके जगत को एक निस्सीम विशालता प्रदान करते हैं।

इछामती की परिकल्पना उनके मन में अपने प्रथम उपन्यास *पथेर पांचाली* की रचना के समय ही शुरू हो गयी थी, यह बात अत्यंत महत्वपूर्ण है। वास्तव में प्रस्तुति पूर्व इतना दीर्घकालीन चिंतन और किसी बंगला उपन्यास का रहा हो, इससे हम अभिज्ञ नहीं। सन् 1928 में जब वह *पथेर पांचाली* लिख रहे थे तभी उन्होंने *स्मृति-रेखा* में लिखा था--वह रही हमारे गांव की नदी *इछामती*। पिछले पांच सौ वर्षों में इसके किनारे कितने फूल झड़े, कितने पक्षी आये और गये, कितनी अगली झाड़ियां उगीं और सूखीं, पानी पर जमी हरित काई की गंध हवा के साथ चारों ओर फैलीं, मछुआरों ने इसमें जाल डाले, कितने गृहस्थों ने यहां घर बसाये जिनके हास्य और रुदन वातावरण में गूंजे, कितने सरलमन हंसते बच्चे जो अपनी मांओं के साथ इसमें नहाने आये--सालों बाद वृद्धावस्था में इसी के किनारे, बांसबन के घाट के नीचे उनकी चिताएं तैयार हुईं। कितनी मांएं, कितने बेटे-बेटी, कितने तरुण-तरुणियां महाकाल के धाराप्रवाह में आये और गये। उसी शांत नदी के किनारे के मदार के फूल, हरित काई और जंगली

झाड़ियों की कहानी लिखूंगा, जिसका नाम होगा--*इछामती*। *पथेर पांचाली* में भी उन्होंने एक जीवन प्रवाह की कहानी लिखी थी। जो एक शक्ति की पृष्ठभूमि एवं भविष्य जीवन के इंगित को लक्ष्य बनाकर लिखी गयी थी। धीरे-धीरे वह कहानी अशेष पथ को अशेष काल के साथ मिला देती है। इसलिए सन् 1932 में लिखे गये अपराजित उपन्यास में हमें फिर से *इछामती* की बात लक्षित होती है, जिसमें उन्होंने उस *चंचल जीवनधारा का प्रतीक* कहा है। *इछामती* के बारे में जिस भाषा में उन्होंने *स्मृति-रेखा* में लिखा था, उसी भाषा में *अपराजित* में लिखा है--*कितने हंसते-मुस्कुराते बच्चे मांओं के साथ नहाने को इछामती में उतरते हैं और फिर वृद्धावस्था में उनके नश्वर शरीर की राख उसकी लहरों के साथ बह जाती है।* जन्म मृत्यु का आवर्त्तन ही उनके उपन्यासों का केंद्र बिंदु है। यही बोध सन् 1948 में लिखे गये उनके यात्रा विवरण *हे अरण्य कथा कओ* में दृष्टिगोचर होता है--*इछामती के किनारे के गांव अपूर्व जीवन प्रवाह का, असंख्य सूर्योदय एवं सूर्यास्त का इतिहास है।* इस प्रकार हम देखते हैं कि *इछामती* की परिकल्पना उनके मन में बीस साल से भी अधिक काल तक चलती रही। वह मनुष्य के जीवन-प्रवाह का इतिहास लिखना चाहते थे और केवल मनुष्य नहीं, वरन् उसके साथ-साथ उन्होंने इतिहास और ईश्वरबोध दोनों को अभिन्न रूप से जोड़ा है, यह बात उनकी *पथेर पांचाली, अपराजित, आरण्यक* और *इछामती*—इन चार श्रेष्ठ रचनाओं में स्पष्ट दिखाई देती है। *इछामती* में विश्व के एक खंड का सौंदर्य और गंभीरता, काल प्रवाह की विशालता और ईश्वर बोध, ये तीनों धाराएं आकर मिल गयी हैं। यही कारण है कि यह उपन्यास उनकी श्रेष्ठ रचना न होते हुए भी उनके जगत के पूर्ण परिचय की झांकी है।

इछामती की कहानी लेखक की समकालीन कथा न होकर अतीत की कथा है, उस अर्थ में हम इसे ऐतिहासिक उपन्यास भी कह सकते हैं। किंतु बंगला साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यास की धारा से विभूतिभूषण का लेखन भिन्न था। बंकिमचंद्र और रमेशचंद्र दत्त उस काल की इस धारा के प्रमुख लेखक थे। *इछामती* के प्रकाशन के बाद बंगला साहित्य में फिर से ऐतिहासिक उपन्यास की ओर आकर्षण दिखाई दिया। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से मध्यभाग तक बंगाल में उपन्यास के क्षेत्र में इतिहास की ओर विशेष रुचि दिखाई नहीं देती। रवीन्द्रनाथ और शरतचंद्र के अलावा विभूतिभूषण के समकालीन ताराशंकर और माणिक ने भी कोई ऐतिहासिक उपन्यास नहीं लिखा। बाद में ताराशंकर किसी-किसी उपन्यास में अवश्य अतीत की ओर गये हैं। *इछामती* का एक महत्व यह भी है कि इससे प्रभावित होकर बंगला उपन्यास की यह विस्मृत धारा फिर सजीव हो उठी। विमल मित्र, प्रमथनाथ विशि, महाश्वेता

देवी से आरंभ करके सांप्रतिक सुनील गंगोपाध्याय इस विधा को नये रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। परंतु *इछामती* इस विधा की एक अनन्य कृति है।

ऐतिहासिक उपन्यास साधारणतया विशिष्ट ऐतिहासिक चरित्रों और घटनाक्रमों के एक काल को लेकर लिखे जाते हैं। उनमें ऐतिहासिक स्थानों, पात्रों, युद्ध, विप्लव अथवा अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं के वर्णनों की प्रमुखता होती है। उन वर्णनों में लेखक का अपनी कल्पना का विस्तार भी रहता है। इसीलिए ऐतिहासिक उपन्यास संभव असंभव की सीमा पार करके *नो मैंस लैंड* बन जाता है।

इछामती में ऐतिहासिक उपन्यास के इस परिचित रूप को भग्न कर दिया गया है। इसमें न रोमांचकारी घटनाएं हैं, न उत्तेजना है, न युद्ध है और ना ही इसका नायक तथा अन्य प्रधान व गौण चरित्र इतिहास के उल्लेख योग्य पात्रों में से हैं। ऐसा होते हुए भी इसमें अतीत के एक निर्दिष्ट काल का परिचय मिलता है। इसमें बंगाल के एक छोटे से गांव के अतीतकाल का सजीव चित्र उभरकर आया है। इसकी प्रधान ऐतिहासिक घटना है पिछली शताब्दी में बंगाल में नीलकर साहबों का आगमन, नील की खेती का प्रारंभ होने से किसानों की विडंबना, और अंत में उनका विद्रोह। उपन्यास में इन बातों का विस्मृत वर्णन होते हुए भी यह इसका केंद्र बिंदु नहीं है। विभूतिभूषण का उद्देश्य किसी विशेष सामाजिक व आर्थिक घटना का विश्लेषण करके समाज परिवर्तन को दर्शाना नहीं था। उन्होंने तो एक विशेष काल खंड को चुनकर उसके मानविक रूप का वर्णन किया है। परंतु अंत में उनका मन कालांतर अथवा यों कहिये कि कालातीत की ओर जा पहुंचा है। इस रचना में *इछामती* नदी कहानी की गति को नियंत्रित तो करती है पर ताराशंकर की *कालिंदी*, मानिक बंद्योपाध्याय की *पद्मानदीर मांझी*, अद्वैत मल्लवर्मन की *तितास एकटि नदीर नाम* या समरेश वसु की *गंगा* में जिस प्रकार नदी की सशरीर उपस्थिति है, *इछामती* में वह नहीं है। इसमें वह मात्र प्रतीक रूप में है। जिनके बारे में लेखक इसमें लिखता है उनका विलय हो जाता है और रह जाती है केवल नदी *इछामती* की जलधारा चंचल वेग से जा रही है मुहाना, रायमुगल और फिर गंगासागर पार करके महासमुद्र की ओर।

लेखक की इतिहास संबंधी अपनी उपलब्धि हमें उनकी इसी रचना में दिखाई देती है। सन् 1927 के अंत में उन्होंने *स्मृतिरेखा* में प्रश्न उठाया है—मनुष्य का वास्तविक इतिहास कहां है ?—उनकी धारणा थी, बड़े-बड़े इतिहासकार युद्ध की कल्पना में सम्राट, साम्राज्ञी, सेनापति व मंत्रियों की चमकीली पोशाकों के आडंबर में गरीब गृहस्थ को भूल गये हैं। सड़क किनारे के आम्रवृक्ष के नीचे बैठे दीन व्यक्ति की पोटली का सत्तू कब शेष हो गया, कब उसका बच्चा वृक्ष की डाल पर बैठे

पक्षी की ओर मुग्ध दृष्टि से टकटकी लगाये बैठा रहा, घोड़ों की हाट से सांझ को घोड़ा खरीदकर लाकर मध्यमवर्गी परिवार के लड़के ने मां के मन में कैसे आनंद की अनुभूति जगा दी--इन छोटी-छोटी बातों का वर्णन जो अन्य इतिहासकारों के लिए बेमानी था, विभूतिभूषण के लिए वही मानव का इतिहास था। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि *पथेर पांचाली* के लेखक की ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की इच्छा होने पर *इछामती* की रचना अनिवार्य थी।

मैंने पहले ही कहा है कि उनके इस उपन्यास में किसी भी प्रकार की उत्तेजना, तीव्रता अथवा संघर्ष नहीं है। उन्होंने इसमें आपातदृष्टि में तुच्छ दीखने वाले एक ऐसे अनुराग को उभारा है जो उनके जीवन दर्शन का प्रतीक है। इसी कारण उनका पात्र राजाराम जो प्रजापीड़क है, साहबों का मुसाहिब है और प्रजा के द्वारा ही मारा जाता है। उसके गृहस्थ जीवन का सहज मानवीय चित्रण उनकी दृष्टि में अत्यंत मूल्यवान था। नीलकर साहबों के अत्याचारों के साथ-साथ उनके स्वयं के जीवन के दुख और विवशता का भी वैसा ही मार्मिक वर्णन मिलता है। आधुनिक काल में हम जिसे कमिटमेंट कहते हैं वह *इछामती* में नहीं मिलता। वे किसी विशिष्ट सामाजिक दृष्टिकोण के प्रवक्ता नहीं हैं। उनके लेखन में अनुराग-विराग, ममता और उदासीनता का अद्भुत समन्वय मिलता है। गिबन रचित *रोम साम्राज्य का इतिहास* पढ़ते हुए उनके मन में एक निर्लिप्तता का बोध आया था—*महाकाल के इस जुलूस में मैं अपने को एक कौतूहली दर्शक के रूप में अनुभव कर रहा हूं। इन सम्राट, साम्राज्ञी, खोजा, भृत्य, सेना, सेनापतियों का तृणवत महाकाल के प्रवाह में बह जाने वाला इतिहास का पक्ष मुझे बरबस मुग्ध करता है।*—यही विशाल काल प्रवाह मनुष्य की समस्त कीर्तियों के अप्रतिरोध अवसान का बोध जगाता है। यही अच्छा बुरा, अत्याचारी, अत्याचारित अंत में अनिवार्य मृत्यु के प्रवाह में एक हो जाते हैं। यही सत्य लेखक के मन के ईश्वरबोध का उत्स है। *महाकाल निरंतर अपना सिंगा बजा रहा है--वह ध्वनि साम्राज्ञी युस्तेशिया ने नहीं सुनी थी, संत काइसोटिस ने सुनी थी। ...संध्या की सूर्यघटा में सीरिया की मरुभूमि की सिकता पर उस संत ने इसी गतिशीला का स्वप्न देखा होगा।* विभूतिभूषण ने महाकाल की इस ध्वनि को अपनाया है जीवन के प्रति आसक्ति के साथ, ईश्वरबोध के साथ और इतिहासबोध के साथ।

इछामती

इछामती एक छोटी-सी नदी है। वैसे भी यशोर जिले से होकर प्रवाहित होते समय वह एक छोटी नदी के रूप में ही बहती है। दक्षिण में मगर, कछुए, घड़ियाल, आदि हिंस्र जल-जंतुओं से भरी वह नदी विराट नमकीन गंगा में परिणत होकर कहां किस सुंदर वन में, सुंदरी व गहन वृक्षों के जंगल की आड़ में बंगाल सागर में जाकर मिली है, इसकी खबर यशोर के ग्राम्य अंचल के किसी भी व्यक्ति को नहीं है।

परंतु इछामती का जो अंश नदीया एवं यशोर जिले से प्रवाहित होता है, वह अंश कितना अद्भुत, कितना सुंदर है, यह तो वही जानता है जिसने उसे देखा है। देखने वालों ने भी बस उसकी सुंदरता ही देखी होगी। वास्तव में उसका लाभ तो उन्हें ही मिला होगा, जो लोग इस अंचल में लंबी अवधि तक रहे होंगे। भगवान की एक अनुपम रचना इसके किनारे है, जो वृक्षों, लताओं से हरे-भरे और पक्षियों के अनवरत गुंजन से मुखरित रहते हैं।

मड़िघाटा अथवा बजितपुर के घाट से नाव द्वारा चांदुड़िया जाने पर रास्ते में दोनों ओर लाल फूलों से भरे मदार के पेड़, जलज वनस्पतियों की झाड़ियां, शैवाल के जाल, पीले फूलों से झुकी जंगली तित्पल्लव की लताएं, कहीं ऊंचाई पर बरगद व पीपल के वृक्षों की घनी छाया, बांसों के झुरमुट, आंखों को तृप्ति प्रदान करते हैं। किनारों पर आबादी कम है। दूर-दूर तक दूब के हरित चरागाह, रेत में जंगली फूलों की झाड़ियां और पक्षियों की मधुर-ध्वनि से मुखरित वनस्थली दिखाई देती है। कभी-कभी कोई इक्का-दुक्का गांव नजर आ जाता है, जिसके घाट पर चार-छह डोंगियां बंधी होती हैं। कुछ ऊंचाई पर सेमल के वृक्ष की सूखी टेढ़ी-मेढ़ी डाल पर समाधि लगाये बैठा गिद्ध ऐसा लगता है कि जैसे चीन के किसी चित्रकार द्वारा रचित चित्र हो। किसी घाट पर कुछ औरतें नहाती एवं नहाकर भीगे वस्त्रों में कमर पर जल भरी कलसी रखे आपस में बतियाती नजर आ जाती हैं। एक दो जगह ऊंचे किनारे पर मैदान में गांव का प्राइमरी स्कूल भी दीख जाता है। सरई अथवा बांस की चटाई से घिरा छप्पर छाया एक लंबा कमरा, जिसमें असबाब के नाम पर एक टूटी-फूटी कुर्सी और दो-चार बेंचें दिखायी पड़ जाती हैं। नदी से यात्रा करते हुए दूर तक फैली दूधिया चांदनी में, मंद बयार में मदार की फूलों से भरी झूमती डालियां मन को मोह लेंगी। नदी के किनारे, पुराने जले मकान की जमीन पर लटकती कड़ियां नजर आ जायेंगी।आकन्की झाड़ियों के बीच कहीं-कहीं दीमक का मिट्टी का ढूह भी दिखायी दे जायेगा। इन खंडहरों को देखकर तुम अतीत के स्वप्न देखने लगोगे। वे लोग, जिनका जीवन इनके साथ जुड़ा रहा होगा, तुम्हारी आंखों के सामने मूर्त हो उठेंगे। वर्षा ऋतु की जलधारा द्वारा अंकित क्षीण रेखा की तरह उनके सुख-दुख का अलिखित इतिहास शताब्दियों से उनके वक्ष

पर अपनी जो छाप छोड़ गया है, उसे पढ़ पाओगे। सूरज अपनी किरणें बरसाता है इन पर, हेमंत का आकाश ओस में भिगोता है इन्हें और ज्योत्सना पक्ष का चांद चांदनी में नहलाता है।

वही हमारा वास्तविक जातीय इतिहास है। मूक जनगण का इतिहास है, राजाओं-रजवाड़ों की विजय गाथाएं हमारा इतिहास नहीं है।

1270 (बंगीय वर्ष) की बरसात बीत गयी थी।

परंतु सड़कों पर अभी भी कीचड़ थी, मैदानों में पानी जमा था। शाम के वक्त बबूल की फूलों से भरी डाल पर फिंगा बैठा था।

नालू पाल को सिर पर पान-सुपारी की गठरी उठाकर मुल्लाहाटि के हाट जाना था। मुल्लाहाटि जाने के लिए नील की कोठियों के साहबों द्वारा कब्जा की हुई जमीन के बरगद के घने वृक्षों की छाया वाले रास्ते से जाना पड़ता है। थका मांदा नालू पाल गठरी उतारकर एक बरगद के पेड़ के नीचे सुस्ताने बैठ गया।

यही कोई बीस इक्कीस साल का होगा नालू। काला रंग, दुबला-पतला शरीर, घुंघराले बाल, कंधे पर लाल गमछा—इस जमाने के गांवों की शौकीन वेषभूषा। अभी तक विवाह नहीं किया था, कारण यह था कि अब तक मामाओं के यहां पर रहा था, हाथ में पैसा नहीं था। इधर एक साल से गठरी सिर पर उठाकर हाट-हाट में पान-सुपारी बेच रहा था। उसकी एस मौसी ने इसके लिए किसी तरह सत्रह रुपयों की पूंजी जुटा दी थी। एक साल में वही सत्रह बढ़कर सत्तावन हो गये थे। खर्चा-पानी निकालकर कुल लाभ के रुपये।

उसका मन इस कारण बहुत खुश था। अब मामाओं के घर की झूठन गले से नहीं उतारनी पड़ती थी। इक्कीस साल के जवान लड़के को दूसरे का बोझा बनना शोभा नहीं देता। उस दिन सिर में डालने के लिए एक चुल्लू तेल ज्यादा मांग लिया था तो मामी का थोबड़ा कैसा चढ़ गया था!

सिर हिलाकर, हाथ नचाकर बोली थीं, इतना तेल कहां से आयेगा? लड़के का शौक तो देखो! एक तो घुंघराले, उस पर इतने लंबे बाल रखे हैं। ऐसे शौक पूरे करने के लिए खुद कमाई करनी पड़ती है।

यही सब सोचते हुए यह शायद सो ही जाता। हाट लगने में अभी बहुत देर थी, थोड़ा आराम कर सकता था वह... लेकिन तभी एक घुड़सवार उसके सामने आकर रुका। हड़बड़ाकर उठ खड़ा हुआ नालू पाल। बोला, राय मोशाय, अच्छे है न? प्रातोपन्नाम...

—कल्याण हो। अरे नालू तू है, हाट जा रहा है?

—जी हां।

—जरा सीधा होकर बैठ। शिप्टन साहब इसी तरफ आ रहा है।

— बाबू, रास्ता छोड़कर मैदान में उतर जाऊं? सुना है, बहुत मारता है।

— नहीं नहीं, मारेगा क्यों? यह सब गलत है, यहीं बैठो।

— घोड़े पर आयेंगे?

— नहीं शायद टमटम पर आयेंगे। मैं अब चलूंगा।

मुल्लाहाटि नील कोठी के बड़े साहब शिप्टन से इस इलाके के लोग ऐसे ही डरते हैं, जैसे कि बाघ से। लंबा चौड़ा शरीर, बाघ जैसा लाल मुंह! हाथ में हमेशा चाबुक रहती थी। इस इलाके के लोगों ने चाबुक का नाम "श्याम चांद" रख दिया था। कब किसकी पीठ पर "श्याम चांद" का अवतरण होगा, इसका पता न होने से साहब के निकलने पर सब लोग डर से कांपने लगते थे।

तभी हाट में सामान बेचने वाला एक और आदमी सतीश कलु, सिर पर सरसों के तेल की बड़ी सी हंडिया रखे वहां आ पहुंचा। सड़क किनारे नालू को देखकर बोला—चलो, चलना नहीं है?

—बैठो, तमाखू खा लो।

—मेरे पास तमाखू नहीं है।

—मेरे पास है। पर ठहर जाओ, शिप्टन साहब को चले जाने दो।

—साहब आ रहा है! किसने कहा?

—राय मोशाय कह गये हैं...बैठो...

यह सुनते ही सतीश कलु ने भयभीत दृष्टि से सामने की ओर देखा और जल्दी से झाड़ियों के बीच से नीचे धान के खेत में उतर गया। जाते-जाते बोला, चले आओ, साहब निकला है...

पान-सुपारी की गठरी पेड़ के नीचे ही छोड़कर नालू पाल ने भी सतीश कलु का अनुसरण किया। दूर से आती टमटम के घोड़े की टाप धीरे-धीरे पास आने लगी थी। जरा देर बाद ही सड़क को कंपाती हुई साहब की टमटम पास आ गयी और आकर ठीक उसी बरगद के पेड़ के सामने रुकी, जहां नालू पाल विश्राम कर रहा था और अपनी गठरी छोड़ गया था।

पेड़ के नीचे पड़ी बिना मालिक की गठरी देखकर साहब ने हांक लगाई—ए...! गठरी किसकी है?

धान की बालों की आड़ में नालू पाल और सतीश कलु दोनों जैसे काठ हो गये। किसी ने जवाब नहीं दिया।

टमटम के पीछ से नफर मोची ने, जो साहब का अर्दली था, हांक लगाई—अरे, किसकी गठरी पड़ी है पेड़ के नीचे?

साहब बोला—उट्टर डो... कौन है?

नालू पाल डरते-डरते, हाथ जोड़े हुए सामने आकर बोला—साहब, मेरी है। उसकी ओर देखकर साहब चुप रहा, कुछ नहीं बोला।

नफर मोची बोला—तुम्हारी गठरी है?

—जी हां।

—धान के खेत में क्या कर रहे थे?

—जी-जी...

साहब बोला—मुझे मालूम है। मुझे देखकर सब छिप जाते हैं। मैं सांप हूं या बाघ? हैं?

प्रश्न नालू के मुंह की ओर देखते हुए किया गया था, अतः भयभीत स्वर में उसने उत्तर दिया—नहीं साहब।

—ठीक है। गठरी में क्या है?

—पान हैं, साहब।

—मुल्लाहाटि के हाट में ले जा रहा है?

—हां।

—क्या नाम है टुमारा?

—जी, श्री नाल मोहन पाल।

—उठाओ सिर पर। और भविष्य में मुझे देखकर छिपना मत। मैं बाघ नहीं हूं, आदमी नहीं खाता। जाओ, समझे!

—जी...

साहब की टमटम चली गयी। नालू का दिल तब भी जोर-जोर से धड़क रहा था। बाप रे, बड़ी भारी मुसीबत टल गयी आज। सीटी बजाते हुए पुकारा उसने—ओ सतीश चाचा!

सतीश कलु धान की बालों में छिपते-छिपते और दूर चला गया था। लौटकर पास आते हुए बोला, आता हूं।

—अरे, कितनी दूर भाग गया था? लगता है, साहब को मुझे पुकारते देख धान के खेत को रौंदते हुए दौड़ लगायी थी?

—क्या करूं बताओ? हम लोग ठहरे गरीब-गुरबे। 'श्यामचांद' पीठ पर जड़ देता तो क्या करता! साहब ने क्या कहा तुमसे?

—ठीक ही बोला।

—राय मोशाय ने तुमसे क्या कहा था?

—कहा था, साहब आ रहा है। सीधे होकर बैठो।

—कहेगा क्यों नहीं? यही लोग तो साहब के दलाल हैं। कोठी की दीवानी करके अच्छी कमाई की है राय मोशाय ने! उस साल इतना बड़ा दुमंजिला मकान बना लिया।

राय मोशाय का पूरा नाम राजाराम राय था। मुल्लाहाटि नील कोठी के दीवान थे। साहब के खैरख्वाह होने व प्रजा का उत्पीड़न करने के लिये लोग उनसे जितना डरते थे, उतनी ही घृणा भी करते थे। परंतु मुंह से कुछ भी कहने का साहस नहीं था किसी में। निकटवर्ती पांचपोता गांव में घर था।

संध्या का सूर्य बगीचे के घने वृक्षों के पीछे चला गया था। तभी राजाराम राय अपने

मकान में घुसकर घोड़े से उतरे। नफर मोची के एक चचेरे भाई भजा ने आकर घोड़े की लगाम पकड़ी। चंडीमंडप की ओर दृष्टि उठाई राय मोशय ने, बहुत लोग जमा थे। नील कोठी के दीवान के चंडीमंडप में ऐसी भीड़ बारहों महीने लगी रहती थी। कितनी ही तरह की फरियादें लेकर अलग-अलग गांव से लोग आते थे, किसी की जमीन पर जबर्दस्ती फसल उखाड़कर नील बोया गया था, किसी की नील के दादन के लिये जिस जमीन पर निशान लगाना तय हुआ था, उसके बदले दूसरी उत्कृष्ट जमीन पर निशान लगा गया था कोठी का अमीन... ऐसी ही तरह-तरह की फरियादें।

फरियादें सुनी जाती थीं। नहीं तो दीवान के चंडीमंडप में रोज लोगों की भीड़ नहीं लगती। इसके लिये घूस-ऊस नहीं ली जाती थी। राजाराम राय किसी से घूस-ऊस नहीं लेते थे, पर काम हो जाने पर कोई अगर रोहू मछली, थोड़ा मानकंद या दो हंडिया खजूर का ताजा गुड़ भेंट स्वरूप भेज देता, तो उसे वापस करने की बात नहीं सुनी थी किसी ने।

राजाराम की पत्नी जगदंबा कभी सुंदर थीं, लाल पाड़ की पाड़ी पहने रहतीं। हाथों में पोंहची, लोहे का कड़ा और शांखा, माथे पर सिंदूर की बड़ी सी बिंदी, दुहरे बदन की भारी भरकम, रौबवाली।

पास आकर जगदंबा बोलीं—इस समय बाहर मत निकलना। संध्या कर लो पहले।

हंसकर राजाराम ने पत्नी के हाथ में एक छोटा थैला देकर कहा—यह रख दो। क्यों, कुछ जलपान है?

—हां, है। मूड़ी और छोले तले हैं।

—वाह, वाह! रुको, हाथ पैर धो लूं। तिलु, बिलु, निलु कहां हैं?

—तरकारी काट रही हैं।

—मैं आता हूं। तिलु को पानी देने को कह दो।

संध्या बीत जाने पर राजाराम बरांडे के एक कोने में पूजा करने बैठे। तिलु वहां पहले से ही कुशासन बिछा गयी थी। प्रायः घंटे भर तक पूजा पाठ करते रहे वह, कितने ही स्तुति-स्तोत्र पढ़े उन्होंने।

इतनी देर इसलिए लगती थी कि संध्या गायत्री के बाद राजाराम विविध देवताओं का स्तुतिपाठ करते थे। तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं में लक्ष्मी, सरस्वती, रक्षाकाली, सिद्धेश्वरी एवं मां मनसा को प्रतिदिन संतुष्ट करना उचित समझते थे। इनमें से एक को भी नाराज नहीं किया जा सकता था। मन में हर वक्त धुकधुकी लगी रहती थी। इन्हीं की कृपा से गुजारा कर रहे थे। कहीं किसी देवी को सुनाई देने से रह न जाये, इस ख्याल से वह प्रतिदिन स्पष्ट शब्दों को खींच-खींच कर जोर-जोर से स्तुति पढ़ते थे।

तिलु ने आकर पूछा, भैया, डाब पियोगे?

—नहीं। मिश्री का शरबत नहीं है?

—मिश्री खतम हो गई है भैया।

—डाब रहने दे, तू जलपान ले आ।

तिलु कांसे के कटोरे में चने और मूड़ी में सरसों का तेल मिलाकर ले आयी। पीछे-पीछे बिलु कांसे की थाली में कटहल के बीज और निलू पानी का लोटा और पत्थर की कुंडी में आध पाव के करीब खजूर का गुड़ ले आयी।

राजाराम ने स्नेहार्द्र स्वर में निलु से कहा—बैठ निलु, कटहल खायेगी?

—नहीं भैया। तुम खाओ, मैंने बहुत खाया है।

—बिलु, तु लेगी?

—नहीं तुम खाओ भैया।

तभी जगदंबा भी आरती करके आ गयी और पास बैठकर बोली—तुम दिन भर खटकर आये हो, खाओ ना। बिना खाये शरीर कैसे चलेगा? मुंह जले साहब की कोठी में जी तोड़ मेहनत करनी पड़ती है।

राजाराम बोले—हरी मिर्च नहीं है क्या? मंगा दो।

—पंखा झलूं? ओ तिलु, अपनी छोटी भाभी से दो-चार मिर्चें मांग ला। जाओ नेतबुआ, देखती क्यों नहीं जाकर दाल जल रही है? छोटी बहू, जाकर देखो तो...।

और पास खिसककर जगदंबा पंखा झलते हुए बोली——अजी, नाश्ता करके बाहर मत निकल जाना, एक बात कहनी है...

—क्या? बताती हूं। तीनों बीबी जी को चली जाने दो।

—चली गयी हैं। मामला क्या है?

—गांव में एक सुपात्र आया है। तीनों बहनों के ब्याह की कोशिश करके देखो, शायद हो जाये।

—कौन है?

—संन्यासी बन गया था। अच्छा सुपुरुष है। चंद्र चाटुज्जे का दूर के रिश्ते का भानजा है। सुना है कल चला जायेगा... एक बार हो आओ न वहां...

—तुम्हें कैसे पता चला?

—दीदी ने आकर बताया। दो बार आ चुकीं सुबह से।

—देखता हूं।

—देखता हूं कहने से नहीं चलेगा। तितु की उमर तीस हो गयी और बिलु की सत्ताइस। इसके बाद कहां से लड़का मिलेगा, जरा मैं भी तो सुनूं? नील कोठी की कचर-पचर एक दिन बंद रखने से कोई आसमान नहीं टूट पड़ेगा।

—ठीक है, जाता हूं। लाओ चद्दर ले आओ। हुक्का पीकर जाऊंगा।

चंडीमंडप के सामने से निकलकर नहीं गये राजाराम। अगर सामने से जाते तो जा नहीं सकते थे, रोक लिये जाते। महरअली मंडल की सम्पत्ति के बंटवारे का दिन था, स्वयं उन्होंने ही निश्चित किया था। सब लोग आकर इंतजार कर रहे थे—रमजान, शकूर, प्रहलाद मंडल, बनमाली मंडल वगैरह मुसलमान पाड़ा के गणमान्य व्यक्ति थे।

चंद्र चाटुज्जे गांव के एक और प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। सत्तर-बहत्तर बीघा ब्रह्मोत्तर जमीन की आय से गृहस्थी ठीक-ठाक चल रही थी। पांचपोता गांव के ब्राह्मणपाड़ा का कोई भी व्यक्ति नौकरी नहीं करता था। थोड़ी-बहुत जमीन व संपत्ति सभी के पास थी। संध्या के बाद रात के दस-ग्यारह बजे तक अपने-अपने चंडीमंडप में चौसर खेलना इनका प्रतिदिन का नियम था।

चंद्र चाटुज्जे ने खड़े होकर राजाराम की अभ्यर्थना करते हुए कहा, आओ, बाबाजी। यह बिना बादल बरसात कैसी! कैसे याद आ गयी आज? बैठो-बैठो। एक हाथ हो जाये।

तभी नीलमणि समाद्दार बोल पड़े—अरे दीवान जी हैं, जरा इधर आकर मंत्री को संभलवाओ तो दादा भाई...

फणी चकत्ति बोले—यहां आकर मेरे पास बैठो भाई। हुक्का भरवाऊं?

सबको प्रसन्न करते हुए, मुस्कुरा कर राजाराम बोले—बैठो दादा चंद्र काका, आपके यहां तो खूब महफिल जमी हुई है...

चंद्र चाटुज्जे बोले, तुम तो कभी आते नहीं बाबा जी! एक किनारे पड़े हुए हैं हम लोग, तुम नजर उठाकर देखते ही नहीं।

राजाराम के शतरंजी पर पैर रखते ही हर व्यक्ति उनके लिए जगह बनाने के लिए खिसकने लगा। नीलमणि की आर्थिक दशा बहुत अच्छी नहीं थी, इस कारण हर एक को खुश करने का प्रयत्न करते रहते थे। बोले—दीवान जी भला कैसे आ सकते हैं, उनके चंडीमंडप में रोज शाम को कचहरी लगती है। फरियादियों की इतनी भीड़ होती है कि घुसना मुश्किल होता है। उन्हें क्या चौसर के अड्डे में आने का वक्त मिल सकता है?

फणी चकत्ति बोले—यह तो हम सभी जानते हैं, तुमने कौन सी नई बात सुनायी है।

नीलमणि बोले—चौसर में मंजा हुआ हाथ है। एक बाजी खेलोगे भाया?

राजाराम ने आगे बढ़कर फणी चकत्ति के हाथ से हुक्का ले लिया, परंतु वयोवृद्ध चंद्र चाटुज्जे के सामने तमाखू न पीने के कारण अंदर के कमरे में चले गये और जरा देर बाद आकर हुक्का नीलमणि के हाथ में पकड़ा कर पूर्वस्थान पर बैठ गए।

चौसर का खेल बंद हो गया। दस बज चुके थे। एक-एक करके सभी लोग चले गये।

राजाराम ने चंद्र चाटुज्जे को अपने आने का कारण बताया तो उनका मुख खुशी से चमक उठा। राजाराम का हाथ पकड़कर बोले—बस इसीलिए आये बाबाजी। यह कौन सी मुश्किल बात है? पर एक बात है बेटा, भवानी संन्यासी हो गया था, यह बता देना अपना फर्ज समझता हूं।

—घर जाकर आपकी बहुओं को बता दूं। तिलू को भी बताना पड़ेगा। वही बतायेंगी...

—ठीक है।

फिर स्वर जरा धीमा करके बोले—एक बात कहूं? मेरी इच्छा भवानी को यहीं बसाने

की है। तुम अपनी तीनों बहनों का ब्याह उसके साथ कर दो। पांच बीघा जमीन दहेज में दे देना। अभी सब पक्का किये देता हूं।

राजाराम ने जरा चिंतित स्वर में कहा—घर पर पूछे बिना कुछ भी नहीं कह पाऊंगा, काका! कल बताऊंगा आपको।

—तुम बेफिक्र होकर ब्याह कर दो। मेरा भानजा है इसलिए नहीं कह रहा। बंदिघाटि का विशुद्ध ब्राह्मण है, एक पीढ़ी में दोष हुआ था बस। कहो तो अभी वंशावली सुना दूं। शुद्ध कुलीन है। नाम लेते ही कोई भी बता देगा।

—पात्र की उम्र कितनी होगी?

—पचास के आसपास होगी वह तो। पर तुम्हारी बहनों की भी तो उमर कम नहीं है। भवानी संन्यासी नहीं बन गया होता तो अब तक सात बच्चों का बाप बन गया होता। देख लो पहले उसे... रोज नदी किनारे एक घंटा संध्या करता है, फिर अपने में डूबा वहीं किनारे पर घूमता रहता है, क्या शरीर है! हाथों की मछलियां देखकर जी खुश हो जाता है।

—तीनों बहनों से एक साथ ब्याह करने को भवानी राजी हो जायेंगे?

—यह जिम्मेदारी मेरी है बाबाजी। तुम निश्चिंत रहो।

बांस वन वाले रास्ते पर अंधेरा हो गया था। गुंजा और बबूल के वृक्षों की गहनता में जुगनू चमक रहे थे। दूर से छतिवन के फूलों की सुरभि हवा में तैरती आ रही थी।

दोपहर बीत जाने पर तिलोत्तमा को बात पता चली। बांस—वन के पीछे नदी की तरफ कृष्ण पक्ष का चांद आकाश में उदित हुआ ही था। छोटी बहन बिलु को बुलाकर उसने पूछा—ए बिलु, भाभी ने तुमसे कुछ कहा था?

—क्यों नहीं कहतीं! ब्याह वाली बात ना?

—हाय मर जाऊं मैं। मुंहजली को शरम नहीं आती जरा भी?

—शरम की क्या बात है? इतनी उमर तक क्वारी बैठा रहना बहुत सम्मान की बात है शायद?

—एक ही उस्तरे से तीनों के सिर मुंडेंगे, यह सुना है?

—हां, सब कुछ पता है।

—तैयार हो?

—अगर सच पूछो तो मेरा तो यह कहना है कि अगर यही होना है तो हो जाय।

—मेरी भी यही राय है। निलू से कल सुबह पूछना पड़ेगा।

—वह क्या कहेगी, बच्ची है। हम जो भी करेंगे, वह भी करने को तैयार हो जायेगी।

तिलु बहुत देर तक छत पर बैठी सोचती रही। तीस साल की हो गयी थी वह। पति का मुंह देखने की कल्पना स्वप्न में भी नहीं कर सकती थी अब। अभी भी विवाह होने की बात का विश्वास नहीं हो रहा था उसे। क्या सचमुच ससुराल जायेगी वह? वह भी बहनों

के साथ? घर-घर यही तो हो रहा था। चंद्र काका के बाप के सत्रह ब्याह हुए थे। कुलीन घरों में यह आम बात थी। पता नहीं भैया ने विवाह का कौन-सा दिन निश्चित किया था। वर की उम्र पचास थी, ठीक ही है, वही कौन सी बच्ची थी?

उमंग के कारण तिलु की सारी रात पलक भी नहीं झपकीं। बाहर जंगल में मच्छरों का गुंजार कितना तीव्र था।

तिलु रात को जिस समय छत पर बैठी विचारों में गोता लगा रही थी, नालू पाल ने मुल्लाहाटि की हाट से लौटकर खाना बनाया, खाया और फिर हिसाब मिलाकर सोने की तैयारी की।

नालू ने एक दुश्चिंता मोल ले ली थी।

व्यापार के मामले में उसकी बुद्धि बहुत अच्छी थी, यह बात उसे आज ही पता चली थी। सात रुपये नौ आने की बिक्री हुई थी आज। एक रुपये तीन आने का शुद्ध लाभ हुआ था। खर्च में केवल दो आने के ढाई सेर चावल और दो पैसे की एक पाव ताजा हिलसा मछली। इच्छा तो आधा सेर मछली लेने की थी, पर इतनी मछलियां तलने के लिए तेल नहीं था। इधर सरसों के तेल के दाम आसमान को छू रहे थे, तीन आने (अठारह नये पैसे) सेर से एकदम साढ़े तीन आने (21 नये पैसे) सेर हो गया था, ज्यादा तेल कैसे खर्च कर सकता था वह?

पूंजी बढ़ानी पड़ेगी। पान सुपारी बेचकर उन्नति नहीं कर सकता था वह। उन्नति तो कटपीस का कपड़ा बेचने में थी। मुकुंद दे उसका मित्र था, उसी ने समझाया था उसे। तीस रुपये जमा हो जाने पर कपड़े का व्यापार शुरू कर देगा वह।

नालू की आंखों से नींद उड़ गयी। जीवन भर मामा पर बोझ बने रहने से छूट गया वह। अब वह बच्चा नहीं रहा, मामी का गुस्से से पटका खाना हजम करने की उम्र नहीं रही। अपने अंदर अदम्य उत्साह का अनुभव करता है वह। इस झींगुरों की आवाज से रात जैसे बहुत दूर तक देख पा रहा था वह। जीवन का लंबा पथ।

राजाराम सुबह उठते ही घोड़े पर बैठकर नीलकोठी चले गये। नीलकोठी का रास्ता छायामय एवं हरा-भरा था। गूलर के पेड़ों की डाल पर बैठे पक्षी किचिर-मिचिर कर रहे थे। जेठ खत्म हो रहा था, परंतु अभी भी मैदान के किनारे-किनारे पेड़ों पर फूल लदे हुए थे।

नील कोठी के घर इछामती नदी के किनारे ही थे। बड़े-बड़े खंभों वाली सफेद कोठी बड़े साहब शिप्टन की थी। कोठी से काफी पहले ही राजाराम घोड़े से उतर गए और एक झाऊ के पेड़ से घोड़ा बांधकर कोठी के सामने पहुंचे। कंधे उचकाकर इधर-उधर झांका, फिर जूते उतार कर बीच के बड़े हाल में प्रविष्ट हुए।

शिप्टन और उनकी मेम के अलावा एक और साहब हाल में बैठा हुआ था। शिप्टन बोले—डीवान इडर आओ... लुक हियर, ग्रांट, दिस इज अवर डीवान राय...

दूसरा साहब विलायत से नया-नया आया लग रहा था। उम्र तीस-पैंतीस के बीच होगी। पादरियों की तरह ऊंचे कालर का लबादा पहने था, लंबा दुहरा शरीर था। शिप्टन ने बताया नाम कोल्सवर्दी ग्रांट था। भारत-भ्रमण के लिए आया था। बहुत अच्छा चित्रकार था और किताब भी लिखता था। मिस्टर ग्रांट ने सिर उठाकर पल भर को दीवान की ओर देखा और हंसते हुए कहा—यस, ही विल बी ए फाइन सबजेक्ट फॉर माइ स्कैच ऑफ ए बंगाली जैंटिलमैन, विद हिज टरबन...

शिप्टन साहब बोले—दिस इज ए शामला, नाट टरबन...

—आई वुड नेवर मैनेज इट, ओह!

—यू वुड विद हिज टरबन एंड ए गुड बिट ऑफ रागुअरी दैट ही हैज...

—इन ह्यूमन नेचर आई बिलीव सो फार एज आई कैन सी हिम नो मोर।

—आल राइट, आल राइट... प्लीज योरसेल्फ...

मिसेस शिप्टन बोलीं—आई एम नॉट गोइंग टू सी यू फाल आउट विद ईच अदर... विकेड मैन, दैट यू आर!

मिस्टर ग्रांट हंसकर बोले—सो आई बेग योर पार्डन, मैडम!

तभी भजा-मोची का बड़ा भाई श्रीराम मोची बेयरा साहब लोगों के लिए कॉफी ले आया। साहब लोगों के नौकर बेयरा सब स्थानीय मोची बाग्दी वगैरह रखे जाते थे। उनमें मुसलमान शायद ही कोई होता हो, सभी निम्नवर्ण के हिंदू होते थे। वैसे इस कोठी का साईस मदार मंडल मुसलमान था।

राजाराम लज्जा व भय से संकुचित हो उठे थे। शिप्टन बोले—टुम जाओ डीवान। यह साहब टुमको डेखकर चित्र बनाने को बोलटा है। टुमको बनाना होगा।

—बहुत अच्छा हुजूर।

डाडन का खाटा सब डेखकर रखो।

राजाराम वहां से छूटे तो चैन की सांस ली। दफ्तर में जाकर काम में डूब गए। परंतु कुछ देर बाद ही श्रीराम मोची ने आकर कहा—राय मोशाय आपको बुलाया है। वह नया साहब आपको देखकर चित्र बनायेगा। वह देखिए, इस धूप में नदी किनारे के उस विलायती पेड़ के नीचे जाने क्या-क्या टांग रखा है। जाकर तमाशा देखिए। राय मोशाय, बड़े साहब से कहकर मुझे एक रुपया दिलवा दीजिए। चावल के दाम बढ़ गए हैं, रुपये के चार पसेरी से ज्यादा देता ही नहीं। गुजारा नहीं होता।

अच्छा देखूंगा। बड़े साहब से कहने से नहीं होगा। डेविड साहब से कहना पड़ेगा।

संकटग्रस्त भाव से राजाराम नदी के किनारे पेड़ के नीचे पहुंचे। इंडियन-कार्क का वृक्ष था। शिप्टन साहब से पहले जो बड़े साहब थे, वह पहले पटना जिले के नारायणगढ़ नील कोठी के मैनेजर थे। बड़े शौक से वहां से ला कर बंगाल की धरती में

रोपा था उन्होंने। यह पच्चीस साल पहले की बात है। बहुत बड़ा हो गया था वृक्ष, डालियां नदी के पानी को छू रही थीं। इस इलाके में ऐसा पेड़ न होने के कारण जनसाधारण ने इसका नाम विलायती पेड़ रख दिया था।

चारों ओर दृष्टि घुमायी तो चक्कर में पड़ गये राजाराम। क्या हो रहा है यह सब? और यह सब क्या टांग रखा है? आखिर मामला क्या है? अगर शिप्टन साहब की मेम वहां न होती तो वह खिलखिलाकर हंस पड़ते। यह यहां क्या कर रही है? अच्छी मुसीबत है!

रंगीन पेंसिल हाथ में पकड़े कोल्सवर्दी ग्रांट टंगे हुए कैनवस के पास गये और दोनों ओर जाने क्या देखा। फिर मेमसाहब से कहा—विल ही बी सो गुड एज टू स्टैंड इरेक्ट एंड स्टैंड स्टिल, से फार टैन मिनिट्स, मैडम?

मेम बोलीं— सीधे खड़े रहो डीवान!

अच्छा हुजूर।

राजाराम के छाती फुलाकर, पीठ सीधी करके सहमे-सहमे से भाव से खड़े होते ही ग्रांट साहब बोले—नो, नो, योर डीवान वियर्स ए थियेट्रीकल मास्क, मैडम। विल ही जस्ट स्टैंड एट ईज?

हाथ से इशारा करके मेम साहब ने कहा—ऐसे तन कर नहीं। और छाती ठीक करो।

घबराकर बात पूरी समझे बिना ही राजाराम और भी तन कर खड़े हो गए।

यह देखकर ग्रांट खिलखिलाकर हंस पड़े। बोले—ओह, नो, माई गुड मैन! दिस इज हाउ—कहकर उनके निकट जाकर हाथ से तनी देह को झुकाकर सीधा कर दिया उन्होंने।

फिर बोले—आई होप टू गुडनैस, ही विल स्टिक टु दिस! गॉड्स डैथ!

फिर मेम साहब की ओर देखकर बोले—आई आस्क योर पार्डन मैडम, फॉर माई वर्डस ए मोमेंट अगो।

मेम साहब बोलीं—ओह, यू विकेड मैन!

अब राजाराम ठीक से खड़े हो गए। साहब ने तो मेम साहब के सामने जान ही निकाल ली थी, बाप रे! छू दिया सो अलग! सोचा था, आज दोबारा नहीं नहायेंगे। पर नहाना पड़ेगा ही! ये साहब-वाहब सब मलेच्छ होते हैं, न जाने क्या-क्या खाते हैं। बिना नहाये घर में कैसे घुसेंगे।

करीब घंटे भर में रिहाई मिली तो जान में जान आयी। पर कमाल कर दिया साहब ने। कागज पर बिल्कुल वही खड़े थे। हालांकि अभी नाक आंख नहीं बनी थी। शाम को फिर आने को कहा था। उस वक्त भी छुएगा क्या? बेवक्त नहीं नहा पायेंगे वह।

कोल्सवर्दी ग्रांट बड़ी टमटम में छोटे साहब डेविड और शिप्टन की मेम के साथ पांच-पोता में आकर नदी के रुक जाने वाले स्रोत की तरफ घूमने निकले। सड़क सीधी थी और दृश्य मनोरम। एक ओर शीशे सा स्वच्छ रुका हुआ नदी का प्रवाह और दूसरी

तरफ खुला मैदान, नील के और धान के खेत। ग्रांट साहब केवल चित्रकार ही नहीं थे, कवि और लेखक भी थे। बंगाल के देहात के दृश्य ने जैसे उनकी आंखों के सामने एक नया जगत खोल दिया। बंधनहीन झाड़ियों में पक्षियों का गुंजन—यह सब देखने लायक दृष्टि उस हंडिया से मुंह वाले डेविड अथवा गोबरगणेश शिप्टन की थी ही नहीं। वे लोग ग्रामीण इंगलैंड के किसान परिवारों से आये हैं—वेस्टर्न मिडलैंड के ब्लाइ एवं फेयरिंग फोर्ड गांवों से। यहां नील कोठी के बड़े मैनेजर बनकर नहीं आते तो पैटैक्स-मैनर के जमींदार के अधीन अपने-अपने फार्म हाउस में हल चला रहे होते। यहां आकर गरीब काले लोगों पर राजा बने बैठे थे। हे भगवान! पर ग्रांट जैसे लोग भी थे, जो केवल इस देश का भ्रमण करने ही नहीं आए थे, वरन् बंगाल के जीवन पर एक पुस्तक लिखने की, जन-जीवन का चित्रण करने की परिकल्पना लेकर आये थे। किताब का नाम तक सोच लिया था—"एंगलो इंडियन लाइफ इन रूरल बंगाल।" काफी सामग्री इकट्ठी कर ली थी।

तभी नालू सिर पर गठरी उठाए मुल्लाहाटि की हाट से लौटता दिखायी दिया। आज उसे पहले दिन से दुगना लाभ हुआ था। प्रसन्नता के कारण तार-सप्तक में गा रहा था—

"हृदय-रास मंदिरे दांड़ा मां त्रिभंग हये..."

जैसे ही वह थोड़ा आगे आया, ग्रांट साहब के सामने पड़ गया। उसे देखते ही ग्रांट साहब ने डेविड से कहा—रोको, रोको। जरा इसे अच्छी तरह देख लूं। वाह, वाह! क्या करता है यह?

डेविड साहब लंबी अवधि से बंगाल में होने के कारण स्थानीय लोगों की तरह ही आंचलिक भाषा बोलने लगे थे। उन्होंने मेम साहब की ओर देखकर कहा—ही कैन हैव हिज ओल्ड यीऊ कट डाउन, कान्ट ही, मैडम।

फिर नालू की ओर नजर घुमाकर बोले—अरे ओ कर्ता, जरा रुको तो...

नालू जैसे बाघ के सामने पड़ गया... पर तकदीर अच्छी थी कि छोटा साहब है। आदमी बड़े साहब जैसा नहीं था, मारता-पीटता नहीं था कम से कम। पर यह मेम कौन है? शायद बड़े साहब की है।

जहां का तहां रुक गया नालू। बोला — जी, सलाम। क्या कह रहे हैं?

—वहीं खड़े रहो।

ग्रांट साहब बोले— थोड़ी देर खड़ा रह सकता है यह यहां? जरा अच्छी तरह देख लूं।

डेविड बोले—इधर खड़े हो जाओ। साहब तुम्हें देखकर चित्र बनायेंगे।

ग्रांट साहब ने पूछा—यह क्या करता है? आदमी तो अच्छा लगता है! चेहरा-मोहरा भी ठीक है।

—हमारे हाट में सामान बेचने आया था। यू वोन्ट वान्ट हिम एनी मोर?

—नो आई वान्ट यू थैंक हिम डेविड, ऑर शैल आई...

यह कहकर ग्रांट साहब को जेब में हाथ डालते देख डेविड ने जल्दी से अपनी जेब से अठन्नी निकालकर सामने फेंकते हुए कहा—लो साहब ने तुम्हें बखशीश दी है...

आश्चर्यचकित नालू ने मिट्टी में से अठन्नी उठाकर कहा—सलाम साहब, सलाम! अब जाऊं मैं?

—जाओ।

पांच-पोता के उस स्थान पर संध्या का दृश्य उस दिन अत्यंत मनोरम था। ईषत् तप्त बयार में जंगली फूलों की मादक महक थी। दूर तक विस्तृत धान के हरे-भरे खेतों के पार अस्ताचंल के आकाश में लाल सुरमई बादलों की छटा निराली ही थी। मैना और गौरैया के झुंड चहचहा रहे थे। कोल्सवर्दी ग्रांट मंत्र-मुग्ध से अपलक देख रहे थे। उनका मन एक शांत गंभीर सुखानुभूति से भर उठा। यह अनुभूति मनुष्य को बहुत दूर ले जाती है। आकाश की विराटता का सचेतन स्पर्श होता है उस अनुभूति में। दूर से हवा में तैरते आते बंशी के मधुर स्वरों-सा करुण आवेदन होता है उसका।

ग्रांट साहब ने सोचा, वास्तविक भारतवर्ष तो यही है। इतने दिन बेकार ही बंबई, पूना कैंटोंमेंट के पोलो ग्राऊंड और एंग्लो इंडियंस के क्लबों में घूमता रहा। इस देश की धरती पर पैर रखते ही अंग्रेज इतने बदल क्यों जाते हैं? जिस भारतवर्ष का वर्णन उन्होंने मॉनियर विलियम्स के "शकुंतला नाटक" के अनुवाद में पढ़ा था, जिस भारत की उपलब्धि एडविन आर्नल्ड के काव्य में की थी, जिसे देखने इतनी दूर आये थे—इस अनिंद्य सुंदर, महाकवित्वमय, प्राचीन भारत के दर्शन उन्हें आज इतने दिन बाद गांव की इस छोटी नदी के किनारे हुए थे। उनका भ्रमण सार्थक हुआ था।

राजाराम की तीनों बहनों की उम्र क्रमशः तीस, सत्ताइस और पच्चीस थी। सबसे बड़ी होते हुए भी तिलु ही देखने में सबसे अच्छी लगती थी, यहां तक कि उसे सुंदरियों की श्रेणी में सहजता से रखा जा सकता था। वैसे रंग तीनों का ही गोरा था, राजाराम स्वयं भी सुपुरुष थे, परंतु तिलु के रंग में एक ऐसी ललाई थी जो चूल्हे की आग की तपन अथवा धूप में बहुत ही सुंदर लगने लगता था। तन्वी सुडौल, सुकेशी, बड़ी-बड़ी आंखें और मोहक मुस्कान। दृष्टि पड़ जाने पर सहसा हटती नहीं थी। परंतु तब भी वह शांत ग्राम्य-बाला थी, उसकी दृष्टि में यौवन का चंचल कटाक्ष नहीं था। विवाह हो गया होता तो बाल-बच्चों वाली अर्द्धप्रौढ़ा गृहिणी हो गयी होती। लेकिन विवाह न होने के कारण तीनों बहनें अभी तक सरल बालिकाएं ही थीं।

जगदंबा ने तिलु को बुलाकर कहा—चावल कूटने का काम कर डालो बीबी जी।

—और तिल?

—दीनू बुड्ढे से कह दिया है। शाम को दे जायेगा। निलू से आरती का थाल सजाने को कह देना। मैं तो खाने पीने में लगी रहूंगी।

—तुम रसोई छोड़कर मत जाना भाभी। कारज का घर है। सामान चोरी चला जायेगा।

तीनों बहनें अपने ब्याह के इंतजाम में लगी हुई थीं। पास-पड़ोसियों का भी आना-जाना लगा हुआ था। गांगुलियों की मझली बहू ने आकर कहा—ए बीबी जी, आज बहुत व्यस्त हो, देखो अपना वासरघर सजाना मत भूल जाना। मैं पहले ही कहे देती हूं कि वह काम हममें से कोई नहीं करेगा। क्यों दीदी, तिलू बीबी जी आज कितनी सुंदर लग रही हैं! नहीं! अभी हल्दी भी नहीं चढ़ी, तब तो यह हाल है, आगे तो भगवान ही मालिक है, जाने कितने लोग गश खाकर गिरेंगे।

गांगुलियों की ही विधवा बहन सरस्वती बोली—भाभी की बात सुनो, अरे गश खाकर गिरेगा तो उसका पति ही गिरेगा, और किसे ढूंढ़ने जायेगी वह।

उपस्थित सभी नारियां खिलखिलाकर हंस पड़ीं।

अगले दिन शुभ गोधूलि – लग्न में एक साथ तीनों बहनों का विवाह भवानी बांडुज्जे के साथ हो गया। पात्र वास्तव में सुपुरुष था। पचास की उम्र होने पर भी सिर के सारे बाल काले थे, गोरा रंग और सुडौल शरीर, चेहरे पर घनी मूंछें।

वासरघर से औरतों व लड़कियों के चले जाने पर भवानी बोले—तिलु, अपनी बहनों से परिचय कराओ।

हाथ के कंगन से खेलती हुई तिलु ने कहा—आप क्या उन्हें पहचानते नहीं?

—तुम्हीं बता दो ना!

—इसका नाम स्वरबाला है और उसका नीलनयना।

—और तुम्हारा?

—मेरा कोई नाम नहीं है।

—बताओ ना। क्या है तुम्हारा नाम?

—ति-लो-त्त-मा।

—विधाता ने शायद तुम्हें तिल-तिल करके गढ़ा था?

तीनों एक साथ खिलखिला पड़ी। तिलु बोली—नहीं जी, आप तो शास्तर का खाक भी नहीं जानते...

बिलु बोली—विधाता ने पृथ्वी की सारी सुंदरियों के...

बीच में ही निलु बोली—रूप का थोड़ा-थोड़ा सबसे अच्छा अंश...

तिलु ने आगे पूरा किया—लेकर धीरे-धीरे...

भवानी हंस दिये, बोले—ओ... समझ गया! तिलोत्तमा को बनाया था।

तिलु हंसकर बोली—आप इतना भी नहीं जानते।

निलु और बिलु एक साथ बोल पड़ीं—हम आपका कान मल दें...

आंखों से डांटते हुए तिलु उनकी ओर देखकर बोली—यह क्या हो रहा है? छिः

बिलु बोली—छिः क्यों, हम क्या कहें भी नहीं? सती दीदी ने तो कान मला ही था आज। नहीं मला था?

मुख गंभीर बनाकर भवानी बोले—वह तो रिश्ते में साली लगती है। तुम लोग तो वह नहीं हो। तुम्हें क्या अपने पति के कान मलने का अधिकार है? सोच-समझ कर बोलना।

निलु बोली—आप ही बताइये फिर हम आपकी कौन लगती हैं?

बहन की ओर गुस्से से घूरकर तिलु बोली—फिर!

भवानी हंसकर बोले—तुम सब मेरी पत्नियां हो। सहधर्मिणी।

बिलु बोली—आपकी कितनी उमर है?

भवानी ने पलटकर पूछा—तुम्हारी कितनी है?

—आप बुड्ढे हैं।

तिलु ने फिर से आंख दिखायी बहन को।

भवानी का राजाराम द्वारा दी गयी जमीन पर रहना ही तय हुआ। परंतु जब तक मकान नहीं बन जाता तब तक ससुराल में ही रहना था। एक नया जीवन था वह। वह तो सन्यासी बनकर धर छोड़ गये थे। जाने कितने तीर्थ घूमे थे। वहां से लौटे तो इस उमर में संसार के जंजाल में पड़ गये।

पर कुछ बुरा नहीं लग रहा था। तिलु सचमुच बड़ी अच्छी गृहिणी थी। उसका ख्याल आते ही भवानी का मन उत्फुल्ल हो उठता था। वह मानों जगद्घात्री की तरह हमेशा उन्हें अपने दसों हाथों से घेरे रहती थी। क्या मजाल कि उन्हें किसी तरह की जरा सी भी असुविधा हो जाये।

प्रतिदिन कुछ देर ध्यान करना उनका नियम था। अपने सन्यासी जीवन का यह अभ्यास अभी तक निभाते आ रहे थे वह। तिलु ने कह दिया था — जल्दी लौटा करिये, नहीं तो ठंड लग जायेगी। एक दिन लौटने में थोड़ी देर हो गयी थी तो तिलु दुश्चिंता से अधमरी हो गयी थी। उनकी दृष्टि में निलु और बिलु बच्चियां थीं, उनको उतना महत्व नहीं देना चाहते थे, परंतु तिलु से पार पाना मुश्किल था।

एक दिन वह चलने को तैयार हो रहे थे कि निलु ने आकर गंभीर स्वर में कहा — अजी ओ रस के नागर, अभी आप नहीं जा सकते...

—अच्छा, बताओ तो तुम हर समय यह बचपना क्यों करती हो? मेरी उम्र का ख्याल करके बात किया करो निलु।

—ओ-हो... रस के नागर का गुस्सा तो देखो। यह कहकर आंख मटकाकर इशारा किया निलु ने।

भवानी बोले — मालूम है, असल में बात क्या है? तुम्हारे भैया बड़े आदमी हैं, लाड़-प्यार, ऐशो आराम में पली हो। कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य कुछ नहीं सीखा। मेरे मन को

कष्ट पहुंचाना क्या तुम्हारे लिए उचित है। जैसी तुम हो, वैसी बिलु है। दोनों ही बेहया और बेहूदी हो।

—बेहया, बेहूदी... यह बातें बहुत अच्छी हैं, क्यों?

—मैं कभी नहीं कहता, पर तुमने ही कहलवाया है।

—हां कहूंगी, और कहूंगी।

—कहो। हमेशा ही कहती हो। तुम्हारी जुबान पर लगाम थोड़े ही है।

उसी समय तिलु तालाब से ढेर सारे कपड़े धोकर आती दिखायी दी। अमरूद के पेड़ के नीचे पहुंची तो पति की बात का अंतिम अंश कानों में पड़ा। खड़ी होकर बोली — क्या हुआ?

डूबते को जैसे सहारा मिला। तिलु को देखकर मन प्रसन्न हो गया। उसके साथ कभी किसी मामले में उलझन नहीं होती थी।

बोले — यह देखो तुम्हारी बहन मुझसे जाने क्या-क्या अश्लील बातें कह रही है।

समझ में न आ पाने के कारण जरा जिज्ञासु स्वर में तिलु ने पूछा — कैसी बातें?

—अश्लील बातें। ऐसी बातें जो मुंह से नहीं कही जा सकती।

निलु एकदम से बोली — अच्छा दीदी, तू ही बता, उस दिन बारोयारी उत्सव के समय पंचाननतला में पांचाली छंद में "रस का नागर" नहीं कहा था? मैंने यही कहा था। तुम्हीं बताओ इसमें क्या गलती की मैंने? पति से भी नहीं कह सकती?

भवानी ने हताश स्वर में कहा — सुन लिया!

तिलु ने सांत्वना देते हुए कहा — आप नाराज मत होइये। मैं डांट दूंगी उन्हें। पर आप जा कहां रहे हैं इस वक्त?

—मैदान की ओर घूमने जा रहा हूं।

—ज्यादा देर मत लाइयेगा, जल्दी आकर जलपान कर लीजियेगा। भाभी ने आपके लिए मूगतक्ति बनायी है।

—गलत। मूगतक्ति अभी बन ही नहीं सकती। वह तो माघ के महीने में जब नयी मूंग आती है तब बनती है।

—देख लीजियेगा, बनती है कि नहीं। मेरे सिर की कसम, जल्दी आ जाइएगा।

निलु बोली—मेरे भी...

तिलु बोली — जा, तू जा जहां से।

घर के बाहर भवानी की जैसे जान में जान आयी। शरद ऋतु आने वाली थी। फसल कट जाने के कारण धान के खेत खाली पड़े थे। चारों तरफ जहां भी नजर जाती थी, झाड़ियों की फुनगियों पर बस तित्पल्ला के पीले फूल दिखायी देते थे। यह उन्मुक्तता भवानी को बहुत अच्छी लगती थी। घर के अंदर तीनों पत्नियों के साथ प्राण कंठ को आ जाते थे और उस पर पराया घर। वह लोग चाहे जितना प्यार करते हों, आदर-सम्मान करते हों, परंतु स्वाधीनता नहीं थी। समय पर वापस आना पड़ता था।

अप्रसन्न वदन भवानी नदी किनारे एक वटवृक्ष के नीचे जाकर बैठ गये। विशाल वृक्ष था, चारों ओर जटाएं नीचे जमीन में समाकर तनों में परिणत हो गयी थीं। गहन शांति थी वहां। जगह-जगह से पक्षियों ने आकर बसेरा डाल रखा था पेड़ पर। आगे जाने वाले पक्षी उस पेड़ पर नहीं बैठते थे।

भवानी ने यह बात पहले भी लक्ष्य की थी। पेड़ के नीचे जगह-जगह सांझ को खिलने वाले इक्का-दुक्का फूल खिले हुए थे। चारों ओर दृष्टि घुमाकर भवानी ने पेड़ के नीचे बैठकर आंखें बंद कर लीं। थोड़ा एकांत चाहिए था। किसी को कहीं अकेले बैठे देखकर लोगों को कौतूहल होने लगता हैं। पहले तो ताक-झांक करते हैं और फिर तरह-तरह के प्रश्न पूछने लगते हैं।

प्रतिदिन की तरह आज भी ध्यान में बैठ गये वह। परंतु कुछ देर बाद ही किसी अपरिचित एवं विजातीय व्यक्ति की आवाज कानों में पड़ी तो चौंक कर आंखें खोल दीं। एक साहब पेड़ के तने से जरा दूर एक मोटी जटा पकड़े खड़ा विस्मय व श्रद्धा की दृष्टि से उनकी ओर अपलक देख रहा था।

साहब और कोई नहीं कोल्सवर्दी ग्रांट थे। वटवृक्ष की शोभा दूर से देखकर चकित हो गये थे वह एवं अच्छी तरह देखने के लिए पास आकर जटाओं की भीतर आ गये थे। वहां भवानी को बैठे देखकर ठिठक गए थे। मुंह से अनायास निकल गया था — ऐन इंडियन योगी!

टमटम दूर सड़क पर खड़ी थी, साथ में कोई नहीं था। केवल साइस भजा मोची घोड़ी की लगाम थामे टमटम में ही बैठा था।

भवानी के एकदम सामने आकर कोल्सवर्दी ग्रांट ने आश्वासन भरे स्वर में कहा — ओह, आइ एम वेरी सॉरी टु डिस्टर्ब यू। प्लीज गो आन विद योर मेडिटेशंस। कुछ भी समझ में नहीं आया भवानी बांडुज्जे के। आश्चर्य से साहब की ओर देखते रहे वह। पहले भी दो-चार बार दूर से उन्होंने इस साहब को देखा था, पर इतने पास से आज पहली बार देख रहे थे।

साहब ने फिर अपनी भाषा में कहा — आइ आफर यू माइ सैल्युटेशंस। आइ विश आइ कुड स्पीक योर टंग।

वटवृक्ष के नीचे साहब को इतनी देर तक खड़े रहते देख भजा को लगा कि कुछ गड़बड़ है। टमटम से उतरकर वह वहां आया। वह भी भवानी को नहीं पहचानता था। हाथ जोड़कर बोला—परनाम बाबा ठाकुर! यह साहब चित्र बनाता है न, इसलिए इस वक्त कोठी से निकलकर मुझे लेकर घूमता फिरता है। यह कह रहा है कि आप उसे बहुत अच्छे लगे हैं। यह सुनकर भवानी ने साहब की ओर देखा और मुस्कुराकर हाथ जोड़ दिये।

ग्रांट ने भी उसी प्रकार प्रति नमस्कार करके कहा—लेट मी नाट डिस्टर्ब यू... आई सिंसियरली रिग्रेट, आइ हैव ट्रेसपास्ड इनटु योर नाइस सैंक्चुरी। मे आइ हैव द

पर्मिशन टु ड्रा योर स्केच?... यू मैन विल यू मेक हिम अंडरस्टैंड? यह कहकर उन्होंने भजा मोजी को हाथ के इशारे से अपनी बात समझाने का प्रयत्न किया।

भजा मोची ने भवानी की तरफ देखकर कहा — वह आपका चित्र बनाने को कह रहा है। यह साहब हमेशा यही करता है। जिसे भी देखता है, तस्वीर बनाने को कहता है। आप थोड़ी देर चुप बैठे रहिये...

अच्छी मुसीबत है! भवानी ने कुढ़कर मन ही मन कहा। थोड़ी देर ध्यान लगाना भी मुश्किल है। जाने कितनी देर बैठना पड़ेगा? अब जो होगा देखा जायेगा, इसे भी मन की कर लेने दो।

ग्रांट साहब ने भजा मोची से कहा—डोंट यू स्टैंड अगेप, जस्ट गो ऑन एंड ब्रिंग माइ स्केचिंग थिंग्स फ्राम द कार्ट...

फिर हाथ हिलाकर जाने का इशारा करके कहा — जाओ....

पिछले कुछ दिनों से 'जाओ' कहना सीख गए थे वह।

घर लौटने में देर हो गयी। पहुंचते ही तिलु को एक फटे कपड़े से अपने कमरे को देहली पोंछते देखकर बोले –– क्या हुआ?

हाथ पूर्ववत चलाते हुए तिलु ने कहा — रेड़ी का तेल गिर गया, दीपदान टूट गया और पानी फैल गया।

उन दिनों देहातों में दोतला दीवट व्यवहृत होता था। नीचे वाले तले में पानी रहता था और ऊपर वाले में तेल। इससे तेल कम जलता था। भवानी ने इधर-उधर नजर दौड़ायी तो खाट के नीचे टूटा दीवट पड़ा दिखायी दिया।

बोले—सब के सब अनाड़ी हैं। तोड़ दिया न?

मैंने नहीं तोड़ा।

—तो फिर किसने तोड़ा? निलु ने?

—जी नहीं मोशाय। चुप रहिए आप। मैं आपसे नहीं बोलूंगी।

—क्यों, मैंने क्या किया है?

क्या किया है? मेरी बात मानी आपने? शाम को जल्दी आकर जलपान करने को कहा था कि नहीं?

—अरे, आता कैसे! मैं तो मुसीबत में ही पड़ गया था।

कौतूहलपूर्ण दृष्टि से तिलु ने पति की ओर देखते हुए पूछा — कैसी मुसीबत? कहीं सांप-वाप तो पीछे नहीं लग गया था?

—अरे नहीं! सांप नहीं, एक पगला साहब था। टमटम के साइस ने बताया कि नील कोठी के साहबों का मित्र है, घूमने आया है। वटवृक्ष के नीचे ध्यान लगाये बैठा था, उसकी गिटपिट सुनकर आंखें खुलीं तो एकदम सामने खड़ा पाया। साइस बोला कि आपकी तस्वीर बनाने को कह रहा है...

—ओ... वह तस्वीर बनाने वाला साहब। हां हां, भैया ने बताया था उसके बारे में। आपकी तस्वीर बनायी उसने?

—हां बनायी तो, पर बुत बना बैठना पड़ा इतनी देर।

—हाय राम!

—अब बताओ किसकी गलती है?

बातें करते-करते अचानक तिलु उन्हें अपूर्व सुंदरी प्रतीत होने लगी। अधरों पर हमेशा मुस्कान और आंखों में चमक। बड़ा ही मोहक रूप था उसका। गोधूलि की उस बेला में देवी की मूर्ति सी लग रही थी वह।

क्षण भर चुप रहकर बोले — अगर वह साहब तुम्हारी तस्वीर बनाता तो पता चलता उसे कि रूप किसे कहते हैं?

—जाइये। आप तो...

फिर हंसकर बोली — चलिये, आपकी संध्या की तैयारी कर दूं।

भवानी का मन संध्या में भी नहीं लगा। घर लौटकर तिलु को देखने के बाद से बार-बार मन में एक ही बात आ रही थी कि अगर कल अपने साथ तिलु को भी ले जायें तो कैसा रहे। उन्हें तो जाना ही पड़ेगा साहब का हुकुम है। परंतु अगर तिलु भी चली चले और साहब उसका भी चित्र बना दें तो बहुत अच्छा हो। किंतु ले जाना ही तो मुश्किल था। अगर किसी को भनक भी लग गयी तो गांव में ढोल पिट जायेगा। उनके साले राजाराम का हुक्का-पानी बंद हो जायेगा।

संध्या से उठते ही तिलु एक तश्तरी में जलपान ले आयी। नारियल के संदेश, भुना चिवड़ा और मूंग की बरफी। तश्तरी सामने रखते हुए मुस्कुराकर बोली — क्यों! मूंग की बरफी इन दिनों नहीं बनती ना? अब बोलिये क्या देंगे?

निलु तिलु के पीछे-पीछे पानी का गिलास ला रही थी, बोली — इसी बात पर कान मल दूं...

बीच में टोका तिलु ने — चल मरी! जरा भी अक्ल नहीं है कि किससे "क्या" कहना चाहिए?

तब तक बिलु भी आ गयी और खिलखिला कर हंस दी। भवानी ने खिन्न स्वर में कहा — एक यह मुसीबत की जड़ है। जाने कितनी हंसी आती है! तुम दोनों की जुबान पर लगाम ही नहीं है। छि...

बिलु बोली — इतना छिः छिः मत करिये, कहे दे रही हूं...

निलु बोली — हां, हम ऐसे बेकार नहीं हैं कि हमेशा दुत्कारते रहें आप।

तिलु ने भवानी को शांत करते हुए कहा — आप बुरा मत मानिए। भैया ने लाड़ कर करके सिर पर चढ़ा लिया है इन्हें। फिर बहनों की ओर देखकर बनावटी गुस्से से कहा— चलो, दोनों जाओ यहां से। पान ले आओ जाकर।

दोनों के चले जाने पर भवानी धीरे से बोले — एक बात कहूं तिलु?

—क्या?

—जरा देख आओ आस-पास कोई है तो नहीं।

—नहीं, कोई नहीं है। कहिए।

—कल मेरे साथ वटवृक्ष के नीचे चलोगी?

—क्यों?

—साहब से तुम्हारा चित्र बनवाऊंगा। ढाकाई साड़ी पहनकर चलना। चलोगी?

—हाय राम।

—क्यों, क्या हुआ?

—ऐसा कैसे हो सकता है? दिन के उजाले में आपके साथ कैसे निकलूंगी। लोग क्या कहेंगे। पहले ही सारे गांव में आपके सामने दिन के वक्त निकलने बोलने की वजह से तरह-तरह की बातें हो रही हैं। भाभी अकेले अब सब कुछ नहीं संभाल पाती, इसलिए मजबूरन मुझे दिन के समय आपके सामने आना पड़ता है। नहीं तो रात के अलावा पति के सामने पड़ने का नियम नहीं है गांव में।

—सुनो। तरकीब लड़ानी पड़ेगी। मैं कल भी आज के ही वक्त चला जाऊंगा। तुम कलसी और कपड़े लेकर घाट पर नहाने जाना। मैं वहां से ले जाऊंगा तुम्हें, किसी को पता नहीं चलेगा। रानी मेरी बहुत इच्छा है मेरी।

—बड़ी अजीब इच्छा है आपकी। यह सब समाज में चलता है कहीं? आप संन्यासी बनकर घर छोड़कर निकल गये थे इसलिए सामाजिक नियम व बंधनों के बारे में आपको जानकारी नहीं है। पर मैं तो मनमानी नहीं कर सकती।

परंतु अंत में तिलु को जाना ही पड़ा। पति के मन को कष्ट तो वह स्वप्न में भी नहीं पहुंचा सकती थी। ढाकाई साड़ी पहनकर बगल में कलसी लेकर घाट की ओर चली तो रास्ता सुनसान देखकर जी को तसल्ली हुई। आधा रास्ता गयी थी कि जाने कहां से बोष्टम की बहू सामने आ गयी।

तिलु को देखते ही बोली—अरे दीदीमणि तुम? इतनी सजधज कर कहां जा रही हो? आज तो बिजलियां गिरा रही हो।

—अरी जाती कहां, घाट पर नहाने, कपड़े धोने जा रही हूं।

तिलु के दिल की धड़कन तेज हो गयी। अगर भेद खुल गया तो। वह तो बोष्टम की बहू रुकी नहीं। उधर घाट भी सुनसान था। जरा जान में जान आई।

ग्रांट साहब ने तिलु को आते देखा तो जल्दी से सिर से टोप उतार आगे बढ़े और सामने आकर विनयपूर्वक बोले — ओह, शी इज ए क्वीनली ब्यूटी! ओह! आइ एम ग्रेटफुल टु यू, सर...

यह कहकर उन्होंने तिलु का चित्र बनाने के लिए जल्दी-जल्दी हाथ चलाना शुरू कर दिया।

सन् 1854 में प्रकाशित कोल्सवर्दी ग्रांट की "एंग्लो इंडियन लाइफ इन रूरल बेंगाल"

नामक पुस्तक के चौवन एवं सत्तावन पृष्ठ पर "ए बेंगाली वुमन" और "एन इंडियन योगी इन द वुड्स" शीर्षक से जो दो चित्र हैं, वे क्रमशः तिलु और भवानी बांडुज्जे के ही हैं।

गांव में किसी को पता नहीं चला। चांदनी रात होने के कारण किसी के देख लेने का डर था। तिलू, भवानी को आम रास्ते से बचते हुए घुमा-फिरा कर घर ले आयी। भवानी ने भजा को किसी से भी कहने के लिए मना कर दिया था। घर पहुंचकर तिलु बोली — बाप रे! मेरी तो डर के मारे जान निकली जा रही थी। कोई देख लेता तो लेने के देने पड़ जाते।

राजाराम राय को छोटे साहब ने बुलवा भेजा था। क्यों बुलवाया था, वह जानते थे। किसी की जमीन पर जबरदस्ती नील का निशान लगाना होगा। राजाराम दुर्धर्ष दीवान थे, प्रजा को कैसे वश में करना चाहिए, यह उन्हें सिखाना नहीं पड़ेगा। अट्ठारह साल हो गए थे कोठी में काम करते, प्रजा को काबू में रखने के गुण के कारण ही बड़े साहब के प्रियपात्र बन गये थे।

पांचू शेख का घर तेघरा शेखहाटि में था। वहां की प्रजा ने आपत्ति जताते हुए कहा था— दीवान जी, आप लोग अपनी खास जमीन पर नील बोइए, इस बार हम यहां की जमीन पर नील नहीं बोने देंगे।

राजाराम इस पर भी जबरदस्ती पांचू शेख और उसके ससुर विपिन गाजी एवं नबू गाजी की जमीनों पर निशान लगा आए थे। ये लोग उस गांव के अवस्थापन्न गृहस्थ थे। विपिन गाजी के घर धान के आठ-आठ कोठे थे। बीस पच्चीस बैल और छह जोड़ी हल थे। उसके भाई नबू गाजी ने पिछले कुछ दिनों से तिजारत करके अच्छी कमाई कर ली थी। दोनों भाइयों की मिली-जुली जोत में कम से कम सौ बीघे धान की फसल बोयी जाती थी। गांव के सभी लोग उनके कहे में चलते थे और वह लोग भी आपद-विपद में हर वक्त जी जान से सहायता करते थे।

नबू गाजी ने छोटे साहब के पास आकर नालिश की होगी, इसीलिए साहब ने बुला भेजा होगा। क्या मालूम? राजाराम किसी से नहीं डरते। जो करना हो कर ले नबू गाजी।

बंगाल में बहुत अरसे से रहने के कारण छोटे साहब वहां के गांवों की भाषा खूब अच्छी बोल लेते थे। राजाराम पहुंचे तो बोले — यह नबू गाजी क्या कह रहा है राजाराम?

—क्या कह रहा है, हुजूर?

—तुम उसकी तमाखू वाली जमीन पर निशान लगा आये हो?

—बिना लगाए उस गांव को काबू में नहीं रखा जा सकता, हुजूर।

—वह कह रहा है कि तुमने इन लोगों के पीर की दरगाह के सामने वाली जमीन भी ले ली है?

—सरासर झूठ बोल रहा है, हुजूर। आप बुलवाइए उसे।

नबू गाजी अच्छा जवान पट्ठा मर्द था और शांत प्रकृति का भी नहीं था। परंतु छोटे

साहब और दीवान जी के सामने निरीह सा आकर खड़ा हो गया। नील कोठी की चहारदीवारी के अंदर सिर उठाकर, छाती तानकर बात करने की हिम्मत रैयत में किसी की नहीं थी।

छोटे साहब ने कहा—क्यो नबू, इस बार गुड़ जमाया था?

नबू ने विनम्र स्वर में कहा — नहीं साहब, अभी नहीं बनाया।

—बनायेगा तो खाने को देगा ना?

—आप लोगों को नहीं दूंगा तो किसको दूंगा भला।

—जरूर देगा ना?

—जरूर दूंगा , साहब।

—राजाराम तुमने इनकी दरगाह वाली जमीन पर निशान लगाया है?

—नहीं हुजूर। उस जमीन का बस नाम ही दरगाह वाली जमीन है। पुराने खातों में भी यही है। पर वहां किसी पीर की दरगाह या मस्जिद है क्या, यह इसी से पूछिए ना क्यों, है वहां तुम्हारी दरगाह?

—पहले थी, अब नहीं है दीवान बाबू।

—तो फिर? साहब से झूठ क्यों बोला?

—बाबू, दया करिए। उस जमीन पर हम लोग हाजत करते है। अगहन के महीने में संक्रांत के दिन पीर के नाम रांधकर खाते हैं। आप एक दिन आकर खुद देख लीजिए। मैं आप लोगों से झूठ क्यों बोलूंगा, आप लोग ठहरे देश के राजा। मेरी जमीन छोड़ दीजिए। दया करिए मुझ पर।

राजाराम की ओर देखकर सिफारिश की छोटे साहब ने — चलो, छोड़ दो। जाने क्या करते हैं ये लोग उस पर...

नबू गाजी बोला— हाजत हुजूर।

—वह क्या होता है?

—अभी बताया न साहब, खुदा के नाम पर भात गोश्त रांधकर फकीरों को देकर जो बचता है, सब मिलकर खाते हैं।

खुश हो गए छोटे साहब। बोले— ठीक है, ठीक है। मुझे भी दिखाना एक दिन।

—जरूर दिखाऊंगा साहब।

—राजाराम! उसकी जमीन छोड़ दो। जाओ नबू...

जमीन तक झुककर सलाम करके नबू चला गया। पर वह बेवकूफ नहीं था, दीवान राजाराम को बहुत अच्छी तरह जानता था। बाहर जाकर पेड़ की आड़ में खड़े रहकर प्रतीक्षा करने लगा।

राजाराम ने छोटे साहब से कहा — हुजूर, आपने तो मेरा सारा किया धरा मिट्टी में मिला दिया।

—क्यों?

—एक नंबर की जमीन है वह। बीघे में साढ़े तीन मन उपज होगी। ऐसी जमीन भी कहीं छोड़ी जाती है? और अगर आप प्रजा को इसी तरह शह देते रहे तो फिर मेरी बात कौन मानेगा?

छोटे साहब मुंह से सीटी बजाते हुए चले गए। राजाराम गुस्से से आगबबूला हो गये। तुरंत सलाह-मशविरा करने सदर अमीन प्रसन्न चकत्ति के कमरे में पहुंचे। प्रसन्न चकत्ति की उम्र चालीस पार कर गयी थी, काला स्याह रंग, दुहरा बदन। खूब बड़ी घनी मूंछें और भट्टे सी आंखें। सब कहते थे कि नील कोठी में उन जैसा बदमाश आदमी दूसरा नहीं था। दिन को रात और रात को दिन बनाने में उस्ताद थे। अमीनों को बहुत से अधिकार भी दिए हुए थे। जरीब के काम की जटिल कार्यप्रणाली सीधे-सादे किसानों की समझ के बाहर थी। इसकी जमीन उसके नाम करके, गलत नाप जोख करके नील की जमीन निकालना ही अमीन का काम था। प्रजा डरती थी, इसलिए घूस भी देती थी। घूस के मामले में राजाराम का भी हिस्सा रहता था। गुड़गुड़ी का कश लगाकर प्रसन्न चकत्ति बोले — इस तरह तो हम लोगों की बात कोई भी नहीं सुनेगा, दीवान जी!

यह बात राजाराम अच्छी तरह जानते थे। बोले — तो अब क्या किया जाए, सलाह दो ना।

—बड़े साहब के कहिए सारी बात।

—उस बाघ के कमरे में इस समय जायेगा कौन?

—आप जाएंगे, और कौन जाएगा?

बड़े साहब शिप्टन बड़े रोबीले एवं निर्दयी व्यक्ति थे। छोटे साहब का दिल तो उदार था। बड़े साहब के पास जाने का साहस हर ऐरे-गैरे में नहीं था। परंतु आत्म-सम्मान की खातिर राजाराम को जाना पड़ा। शिप्टन बैठे हाथ भर लंबा पाइप मुंह में दबाए कागज-पत्र देख रहे थे।

राजाराम सलाम करके चुपचाप एक ओर खड़े हो गए। कुछ देर बाद शिप्टन की उन पर नजर पड़ी तो बोले — गुड़ मार्निंग। राजाराम ने भी फिर से सलाम किया। जीभ तालू से चिपकी जा रही थी उनकी। जाने क्या कह अथवा कर बैठे। ऐसे आदमी का कोई भरोसा नहीं होता। इससे तो वह चित्र बनाने वाला पगला साहब अच्छा था। उसने लोगों की चोरी से तिलु और भवानी के चित्र बनाए थे। जाने से पहले उन्होंने उससे यह बात बताकर पच्चीस रुपये भी ऐंठ लिए थे। हालांकि भवानी इस संबंध में कुछ नहीं जानता था। वह पगला साहब और भवानी दोनों ही एक जैसे थे — दुनिया जहान से बेखबर अपने में मस्त।

शिप्टन ने खिन्नता से कहा — किसलिए आए हो यहां? कोई विशेष काम है? अभी मैं बहुत बिजी हूं। वक्त कम है।

—और कुछ नहीं है हुजूर। मैंने तेघरा के एक किसान की जमीन पर निशान लगाया था, छोटे साहब ने उसे माफी दे दी है।

शिप्टन ने भवें सिकोड़कर कहा— जो हुकुम दिया है, वही होगा। इसमें तुम्हें क्या परेशानी है।

थूक गटककर राजाराम ने कहा — जी नहीं, परेशानी तो कुछ नहीं है। पर ऐसा करने से प्रजा को काबू में नहीं रखा जा सकता।

—क्या नहीं किया जा सकता?

—प्रजा को काबू में नहीं रखा जा सकता। नील की खेती नहीं हो पायेगी हुजूर।

—नील की खेती नहीं हो पायेगी तो तुम किस लिए रखे गए हो?

—वह तो ठीक है हुजूर। पर प्रजा के सामने मुझे नीचा दिखाने पर मेरा काम कैसे होगा हुजूर...

—नीचा दिखाने पर? ओ हो, यू आर इन डिस्ग्रेस यू ओल्ड स्काउंड्रल, आइ अंडरस्टैंड। क्या करना चाहते हो तुम?

—आप ही देखिए हुजूर। मैंने नबू गाजी नाम के एक बदमाश किसान की जमीन पर निशान लगाया था, उन्होंने वह जमीन छोड़ने का हुकुम दे दिया। अब उस गांव में किसी भी जमीन पर हाथ नहीं लगाया जा सकता। नील की खेती कैसे होगी?

—इस साल कितनी जमीनों पर निशान लगाया है, कल दिखाना मुझे। इंप्रेशन रजिस्टर तैयार कर लिया?

—हां, हूजूर।

—जाओ। नहीं दिखा पाये तो जुर्माना होगा। कल लेकर आना।

बस बात खतम हो गयी। मुंह लटकाए प्रसन्न चकत्ति के पास लौट गए राजाराम। — नहीं, बात नहीं बनी। यह लोग पहले अपनी जाति का मान-अपमान देखते हैं। पाजी सूअरखोर जात है न। मेरे तुम्हारे अपमान से उन्हें क्या लेना देना।

प्रसन्न चकत्ति कांइयां आदमी थे। वह पहले से ही जानते थे कि क्या होगा। चिलम पीते-पीते बोले — अपमान पुरस्कृत्य मानं कृत्वा च पृष्टके — चाणक्य का यह श्लोक बचपन में पढ़ा था दीवान जी। इनके साथ रहकर मान-अपमान देखने से काम नहीं चलेगा। जाइए, आप अपना काम करिए जाकर...

—उल्टे मुझ पर जुर्माने की बात कर रहे हैं...

—अरे राम, राम ! जुर्माना कर दिया क्या?

—जुर्माना उसके लिए नहीं। इस साल का इंप्रेशन रजिस्टर कल नहीं दिखा पाया तो जुर्माना भरना पड़ेगा।

—ऐसा ही न्याय है इनका।

—गये थे नमाज पढ़ने रोजे गले पड़ गये।

राजाराम बुझे मन से जैसे ही बाहर निकले, सदर दरवाजे के पास नबू अपने दलबल के साथ खड़े होकर हंसकर बातें करते दिखायी दिया। वह अभी तक राजाराम को

पहचान नहीं पाया था। स्वयं साहब भी शायद नहीं पहचानते थे। गंभीर स्वर में हांक लगायी उन्होंने — ए नबू गाजी, यहां आकर एक बात सुन जाओ जरा!

राजाराम की आवाज सुनते ही नबू गाजी को जैसे सांप सूंघ गया। वह आज की बात पर नहीं हंस रहा था। इतना साहस नहीं था उसमें। उसी के एक अकृतज्ञ हलवाहे ने उसकी जो गाय चोरी करके नौहाटा के हाट में बेच दी थी, उसकी उद्धार उसने कैसे किया था, यह कहानी रोचक शब्दों में सुनाकर अपने कृतित्व की रसानुभूति से हंस रहा था वह। जल्दी से सामने आकर आदर सहित बोला — जी बाबू?

—नील उसी जमीन पर बोया जाएगा, जिस पर मैंने निशान लगाया था। समझे?

विस्मित होकर नबू गाजी बोला — यह क्यों बाबू? छोटे साहब ने तो कह दिया था कि...

बीच में ही टोका राजाराम ने — छोटे साहब के कह देने से क्या हुआ। बाप के ऊपर भी बाप है। बड़े साहब का यही हुकुम है। बड़े साहब के दफ्तर से ही तो आ रहा हूं मैं। ज्यादा चालाकी दिखाने से काम नहीं बनता, समझे नबू गाजी? नील कोठी के चूने के गोदाम में बंद करके तुम्हें मजा नहीं चखाया तो मेरा भी नाम राजाराम नहीं। तुम कैसे आदमी हो, यह अच्छी तरह जानता हूं मैं। तुम्हें निर्वंश करके नहीं छोड़ा तो...

भय से रोंगटे खड़े हो गए नबू गाजी के। नीलकोठी की सीमा में राजाराम से न डरता हो ऐसा एक भी आदमी नहीं था। चाहने पर बहुत कुछ कर सकते थे वह। हाथ जोड़कर बोला— माफी दीजिए, दीवान जी, माफ कर दीजिए। माइ-बाप हैं, आप चाहें तो मार सकते हैं, चाहे छोड़ सकते हैं। मैं तो मूरख आदमी हूं, मूझ पर गुस्सा मत करिए। मर जाऊंगा मैं...

—अरे अभी हुआ ही क्या है? अबकी बार तो तुम्हारे आंगन में निशान लगाकर आऊंगा। आये बचाकर तुम्हें, तुम्हारे साहब बाप। देखूं तुम कहां तक...

जमीन में लौटकर नबू गाजी ने राजाराम के दोनों पैर पकड़ लिए।

राजाराम ने पैरों को हल्का सा झटका देते हुए कहा — नहीं, मेरे पैर क्यों पकड़ रहे हो? जाओ अपने उसी साहब बाप के पास।

नबू गाजी ने और कसकर पैर पकड़ लिए।

राजाराम बोले — क्यों?

—आपने नहीं बचाया तो जिंदा नहीं रहूंगा। मूरख आदमी हूं, गल्ती हो गयी। माफ कर दीजिए बाबू। मां-बाप हैं आप।

—ठीक है, अब सीधे हो जाओ। तुम्हारी जमीन छोड़ सकता हूं, पर...

—यह बात आपको मुंह से नहीं कहनी पड़ेगी बाबू। आपका मान रखना जानता हूं मैं।

—जाओ छोड़ दी। कल अमीन बाबू जाकर ठीक कर आयेंगे। पर जरीब के कुलियों को निशान लगाने की मजदूरी दे देना। जाओ...

जमीन तक झुककर सलाम करके चला गया नबू गाजी। दीवान राजाराम और प्रसन्न चकत्ति के चेहरे खुशी से चमक उठे।

एक लंबी अवधि से इनका शासन इसी प्रकार चलता आ रहा था। बड़े साहब, छोटे साहब छोड़ भी देते तो ये नहीं छोड़ते थे। नील की बुवाई के लिए किसानों व सम्पन्न संभ्रात गृहस्थों की अच्छी जमीनों पर जबरदस्ती निशान लगा आते। जो नहीं बोता उसका भी इंतजाम था।

बड़े साहब इस इलाके के फौजदारी के न्यायाधीश थे। हफ्ते में तीन दिन नील कोठी में कचहरी लगती थी। डंगरों की चोरी, मारपीट, दंगे-फसाद के अभियोगों का फैसला वहीं होता था। बड़ी कोठी के हाल में आस पास के गांवों से लोग नालिश करने आते। कुछ ही दिन पहले तिराहे पर सनेकपुर के मैदान में फांसी का तख्ता भी लगा दिया गया था। राजाराम ढिंढोरा पीटते फिर रहे थे कि अब बड़े साहब को फांसी की सजा देने का अधिकार दे दिया है गवर्नमेंट ने।

लेकिन बड़े साहब अच्छे जज थे। दोनों पक्षों की बातें ध्यान से सुनकर ही फैसला सुनाते थे। अपराधी के लिये यम समान थे वह, छोटे से अपराध की भी कड़ी सजा देते थे। नील कोठी के काम में छोटी सी गलती करके स्वयं दीवान की भी निष्कृति नहीं थी। तब भी लोग छोटे साहब से अधिक बड़े साहब को पसंद करते थे।

कोठी में जिले के मजिस्ट्रेट बहादुर आ रहे थे। दीवान राजाराम सुबह से ही इधर से उधर भाग रहे थे। भेड़, मछली, अच्छे आम और घी का जुगाड़ करने का भार उन्हीं पर था। यह तो जब-तब होता ही रहता था, महीने में दो तीन बार ऐसे मेहमान आते ही रहते थे।

सुअर के लिए उन्होंने मूड़ोपाड़ा के तिनकड़ि को बुलवा लिया था। तिनकड़ि जात का काबरा था, सुअरों के व्यापार में अच्छी कमाई कर ली थी। पक्का दुमंजिला मकान, धान का कोठा, तालाब, नौकर-चाकर सब कुछ था। बहुत से ब्राह्मण, कायस्थ तक उसका आदर करते थे। राजाराम को उपहार देने के लिए वह घर से दस सेर कच्ची घानी का सरसों का तेल लाया था, लेकिन राजाराम ने वापस कर दिया था। काबरा के घर की चीज उनके घर में नहीं घुस सकती थी।

तिनकड़ि ने कहा — एक पांच महीने का है और एक दो साल का है। जो पसंद हो बता दीजिए। पर आप क्या बतायेंगे, आप तो उसका स्वाद जानते नहीं दीवान बाबू। एक बार खा लिया तो जिंदगी भर नहीं भूलेंगे। पांच महीने का बच्चा खालिस घी में भून कर खाइये...

हंसकर राजाराम ने कहा — दुर बामन से भी कहीं ऐसी बात कही जाती है। तुम लोगों के पास पैसा आ गया है तो क्या हुआ, जात का धरम कहां चला जायेगा?

—अरे... बाबू! मैं तो भूल ही गया था कि आप लोग नहीं खाते। माफ करियेगा।

—नहीं, नहीं, तेरी बात पर गुस्सा नहीं आता मुझे। पर यह याद रखना कि सूअर का इंतजाम तुझे ही करना है।

—याद क्या रखना, मैं कल ही दो साल का और पांच महीने का दोनों भिजवा दूंगा। कहा भेजूं? यहीं आपके घर दे जाए मेरा नौकर?

—नहीं, नहीं, मेरे घर क्यों? कोठी पर भेज देना। ब्राह्मण के घर सूअर? तू भी बस...

तिनकड़ि के जाने के लिए उठते ही राजाराम ने कहा — ब्राह्मण के घर आये हो, प्रसाद लिए बिना जाओगे? जाना चाहिए? पैसा आ गया है तो औकात भी भूल गये?

जीभ काटकर तिनकड़ि बोला — ऐसा मत कहिए दीवान जी। ब्राह्मण की झूठी पत्तल खाकर बड़ा हुआ हूं मैं। मुंह से निकाल कर फेंका हुआ भी मेरे सिर माथे पर। पर आज आपने मेरे मन को बहुत कष्ट पहुंचाया है।

—क्यों, क्यों?

—आपके लिए अच्छा तेल लाया था, रखा नहीं।

—रखा नहीं, माने, हमारे वंश में शूद्र का दान नहीं लिया जाता। इसके लिए मन को दुखी मत करो तिनकड़ि। अगर तुम्हें इतना दुख हो रहा है तो तेल रख जाओ, मैं कीमत दिए देता हूं।

—कीमत? क्या कीमत देंगे आप?

—एक रुपया।

—तब तो आप पांच सेर तेल के दाम दे देंगे मालिक। मैं क्या आपके पास तेल बेचने आया था? इतनी दया मत करिए। छोटा आदमी हूं तो क्या हुआ...

—नहीं तिनकड़ि! इसके लिए मन खराब मत करो। तुम्हें एक रुपया ही लेना पड़ेगा। इससे कम में नहीं रखूंगा मैं। अरे कोई है...। सीतेनाथ, बेटा यहां आकर तिनकड़ि से तेल की हंडिया ले जाओ...।

उसी समय छोटे साहब हड़बड़ाते हुए वहां आए। राजाराम से कुछ कहने जा रहे थे, पर तिनकड़ि को देखकर रुक गये।

उनको देखते ही राजाराम उठकर खड़े हो गये और बोले — एक पांच महीने के सुअर के बच्चे का इंतजाम हो गया हुजूर...

—ओह, द सकिंग पिग इज द बैस्ट। पांच महीने का बच्चा तो बड़ा हो जाता है। कोई दूध पीता बच्चा नहीं दे सकते, तुम?

—नहीं, उतना छोटा तो नहीं है साहब। इतना छोटा बच्चा कहां मिलेगा?

—जिले से हाकिम आ रहा है, यहां भोजन करेगा। बच्चा होता तो खाने में मजा आ जाता।

—इस बार होगा तो रख दूंगा। सलाम साहब। मैं चलता हूं। परनाम दीवान जी।

साहब को देखते ही राजाराम समझ गये थे कि किसी गंभीर मामले को लेकर आए थे वह। तिनकड़ि के आंखों से ओझल होते ही उन्होंने पूछा — क्या हुआ साहब?

—बड़ी गड़बड़ हो गयी। रसूलपुर और रहातुनपुर के मुसलमान किसान क्षुब्ध हो गये हैं। कह रहे हैं नील नहीं बोयेंगे।

—किसने कहा?

—कारिंदा निशान लगाने गया था... उन लोगों ने लाठियां लेकर भगा दिया।

—उनकी इतनी हिम्मत?

—तुम घोड़े तैयार कराओ, दोनों चलते हैं वहां। अभी बड़े साहब से कुछ मत कहना।

—अगर यह बात सच है तो क्या करना चाहिए यह मुझे बताना नहीं पड़ेगा साहब। आप बस मुझे फौजदारी के मुकदमे से बचा लीजिएगा।

—नहीं, नहीं तुम बड़े रैश हो। कुछ भी कर बैठोगे। तुम्हारा विश्वास नहीं होता मुझे। इसीलिए साथ चल रहा हूं।

जरा देर बाद ही दोनों जने घोड़ों पर चले गए। किसी को पता नहीं कि दीवान कब वापस लौटे। लेकिन अगले दिन सुबह चारों तरफ खबर फैल गयी कि रात को रहातुनपुर गांव जलकर राख हो गया। बड़े-बड़े किसानों का गांव था, किसी-किसी के घर तो बीस-बीस, तीस-तीस धान के कोठे थे, बड़े-बड़े घर थे, सब भस्म हो गए। आग कैसे लगी किसी को नहीं मालूम, पर रात के अंधेरे से पहले छोटे साहब और दीवान जी रहातुनपुर के मुखिया के यहां गए थे और किसानों को बुलाकर नील न बोने की कैफियत मांगी थी। वे लोग किसी भी तरह तैयार नहीं हुए थे। हताश होकर दोनों रात को ग्यारह बजे के बाद लौट आए थे। रात के तीसरे पहर में जाने कैसे आग लगी और सब राख हो गया। दोनों बातों में कार्य-कारण सम्पर्क होने का संदेह हुआ था हरेक को।

अगले दिन जिला मजिस्ट्रेट मिस्टर डंकिंसन दलबल सहित नील कोठी के बड़े बंगले में आ पहुंचे। कोठी की फिटन से जिस समय वह सदर दरवाजे पर उतरे, अभ्यर्थना के लिए केवल छोटे और बड़े साहब उपस्थित थे। राजाराम बैठक मे चुरूट का डब्बा आगे बढ़ाने के लिए टेबिल के पास खड़े थे। डंकिंसन केवल नील कोटी का आतिथ्य ग्रहण करने नहीं आए थे, बड़े साहब ने एक विशेष उद्देश्य से ही मजिस्ट्रेट को आमंत्रित किया था।

राजाराम को बुलाकर बड़े साहब ने कहा — इन्हें बताओ टुमने क्या देखा? ये जिला मजिस्ट्रेट हैं... दिस मैन इज आवर डीवान मिस्टर डंकिंसन, एंड ए वेरी गुड ओल्ड मैन टू... गो आन, बताओ, रहातुनपुर में टुमने क्या देखा...

दुहरे होकर सलाम करके राजाराम ने कहा — वह लोग बहुत गुस्से में थे, लाठियां

लेकर मुझे मारने दौड़े। नील बोने के लिए किसी भी तरह तैयार नहीं हुए। मैंने बहुत हाथ जोड़े, पैर पकड़े, विनती की। कहा...

डंकिंसन साहब ने बीच में ही बड़े साहब से पूछा — व्हाट ही डिड, ही सेज?

—एंट्रीटेड देम...

—आइ अंडरस्टैंड। आस्क हिम हाउ मैनी पिपुल वर देअर...

—किटने आदमी थे वहां?

—करीब दो सौ लोग होंगे। सब लाठी-बल्लम लेकर आये थे।

—केम विद लाठीज एंड अदर वेपंस।

—ओह, दे डिड, डिड दे? द स्काउंड्रल्स!

—फिर टुमने क्या किया?

—चला आया साहब। दुखी होकर चला आया। सारे रास्ते यही सोचता रहा कि इतनी सारी नील की जमीन पड़ी है, पर नील नहीं बोया जाएगा। कोठी का कितना भारी नुकसान होगा।

कुछ देर बाद सदर कोठी के सामने वाला मैदान लोगों से भर गया। वे लोग मजिस्ट्रेट साहब से फरियाद करने आये थे कि दीवान जी उनका गांव रहातुनपुर जलाकर राख कर आए।

मजिस्ट्रेट ने राजाराम को बुलवा भेजा। आते ही बोले— टुमने क्या किया? आग लगाया?

राजाराम जैसे आसमान से गिरे। आंखें विस्फारित करके बोले — आग! क्या कह रहे हैं साहब? आग?

मानों वह जानते ही न हों कि आग किस चिड़िया का नाम होता है।

मजिस्ट्रेट को संदेह हुआ। उन्होंने राजाराम से बहुत देर तक जिरह की। पर राजाराम नंबरी धूर्त्त थे। ऐसी जिरह बहुत देखी थी उन्होंने, इससे जरा भी नहीं डरते थे वह। मजिस्ट्रेट ने गांव के लोगों में से भी अनेकों को बुलाकर पूछताछ की, पर कोठी की सीमा में खड़े होकर ज्यादा कुछ कह नहीं पाए वे लोग। मजिस्ट्रेट तो आज आया था और कल चला जायेगा, लेकिन छोटे साहब और दीवान जी से तो रोज का वास्ता था। उनमें भी विशेष कर दीवान जी से। उन लोगों के सामने खड़े होकर उन्हीं के विरुद्ध बोलना असंभव था। फिर मजिस्ट्रेट स्वयं रहातुनपुर देखने गए। बड़े साहब और छोटे साहब भी साथ गए। दो-दो हाथी तैयार किए गए उन लोगों को ले जाने के लिए।

बहुत बड़ा गांव नहीं था रहातुनपुर। एक तरफ घास का बहुत बड़ा मैदान था, मैदान के पूरब में गांव था — एक भी पक्का मकान नहीं था। किसानों के छप्पर वाले घर एक दूसरे से लगे हुए थे। सब जलकर भस्म हो गए थे। किसी-किसी घर का इक्का-दुक्का अधजला काला बांस खड़ा था बस। मिट्टी की दीवालों का रंग कुम्हार की बर्त्तन पकाने

वाली भट्टी सा हो गया था। कबीर शेख के तो दो बैल भी जलकर मर गए थे। हरेक के घर के आंगन में अधजले धान का ढेर लगा हुआ था, जिसमें से औरतें अच्छा धान बीन रही थीं, ताकि बच्चों के पेट में तो कुछ डाला जा सके।

कई लोग तो रो पड़े। बहुतों ने कहा कि यह दीवान जी का काम था, पर प्रमाण तो कुछ था नहीं। किसी ने उन्हें या उनके आदमी को आग लगाते देखा था, यह प्रमाणित नहीं हुआ। मजिस्ट्रेट ने जांच-पड़ताल पूरी तरह की। बड़े साहब को बुलाकर कहा — आइ एम रियलि सारी फार द पुअर बेगर्स... यू मस्ट डू समथिंग फार देम।

बड़े साहब बोले — आइ वंडर हू हैज कमीटेड दिस ब्लैक डीड... आइ सस्पेक्ट माइ आयली-टंग डीवान।

—यू थिंक इट इज ए केस आफ आर्सन?

—आई कांट टेल... इयर्स अगो सा ए केस लाइक दिस, एडं दैट वाज ए केस आफ आर्सन... माइ डीवान वाज रिस्पांसिबिल फार दैट... द डेविल।

मजिस्ट्रेट साहब ने सहायता के लिए सौ रुपये मंजूर किए, बड़े साहब ने भी दो सौ रुपये दिए। साहबों की जय-जयकार होने लगी।

सब एक ही बात कह रहे थे — ऐसा विचारक नहीं देखा। कुछ भी हो, है तो लाल मुंहवाला।

उस रात कोठी के हाल में नाच गाने की महफिल जमी। लाल मुंह वाले सभी साहबों ने जमकर शराब पी। अंगरेजी गानों पर मेमों की कमर में हाथ डालकर नाचे। भजा मोची ने वर्दी पहनकर सबको शराब परोसी।

अमीन प्रसन्न चकत्ति अपनी ड्योढ़ी वाली छोटी कोठरी में बैठे तमाखू पी रहे थे। सामने वरदा बाग्दिनी बैठी थी। उम्र प्रसन्न चक्रवर्ती से भी अधिक थी, बाल सन हो गए थे। अपने काम के लिए वह जब तब उसे याद कर लिया करते थे।

प्रसन्न ने पूछा — गया अच्छी है?

—आपके आशीर्वाद से ठीक ही है।

—बड़ी अच्छी लड़की है। इधर उस जैसी लड़की कहां दिखायी देती है? एक काम था वरदा दीदी...।

—बोलो, क्या काम है?

—गया से कहकर एक बोतल विलायती माल मंगा दो। आज बहुत सी अच्छी-अच्छी चीजें मिली हैं। साहब लोगों का खाना-पीना है, तुम तो समझती ही हो। बहुत दिन से अच्छी चीज पेट में नहीं पड़ी...

—इसका वायदा नहीं कर सकती मैं भैया। गया इस समय आस-पास नहीं है... साहब लोगों के खाने के समय वह सामने नहीं रहती...

—मेरी अच्छी बहन, मैं कुछ नहीं सुनूंगा। मेरा इतना सा काम तो करना ही पड़ेगा तुम्हें। जाओ, दीदी, गया से कहकर एक बोतल का जुगाड़ तो करना ही पड़ेगा तुम्हें।

आखिर वरदा को जाना ही पड़ा। गया मेम की मां होने के कारण इस इलाके में वरदा की असाधारण ख्याति थी। मुल्लाहाटि नीलकोठी के अधीन सारे गांवों की प्रजा गया मेम को जानती और मानती थी। वरदा बाग्दिनी की लड़की होते हुए भी गया की बड़े साहब से विशेष घनिष्ठता थी और इसी कारण वह गया मेम कहलाती थी।

गया खराब लड़की नहीं थी। आवश्यकता पड़ने पर साहब से कह सुनकर बहुतों की छोटी मोटी विपदाएं दूर करा देती थी। आखिर तो औरत थी, पाप के रास्ते पर उतरने पर भी मन का दया धर्म बरकरार था। उमर पच्चीस से ज्यादा नहीं थी। गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आंखें। काले घने बाल खोल देती तो पूरी पीठ ढक जाती। सुडौल सुगठित शरीर। भद्र घरों की सुंदरियां भी पानी भरती थीं उसके सामने। सामने से निकल जाती तो आंखें ठहर जातीं।

इलाके में सबको पता होते हुए भी उसे कभी किसी ने बड़े साहब के साथ प्रत्यक्ष नहीं देखा था। बड़े साहब की आया थी और हमेशा उनकी खास कोठी, पीली कोठी में रहती थी। काले पाड़ की सफेद साड़ी के अलावा दूसरी साड़ी नहीं पहनती थी। हाथों में पहुंची बाजूबंद, कानों में मकड़ी जैसे टाप्स और गहन वन के पहाड़ी पथ के समान सोने का हार वक्षसंधि में पड़ा रहता।

डोम बाग्दी की लड़कियां कहतीं — गया दीदी ने खूब तमाशा दिखाया।

अच्छे घरों की नौकरानियां नाक सिकोड़कर कहतीं — भाड़ में जायें ऐसे बाजूबंद हार।

बहुत सी अवश्य ही जलती भी थीं उससे। और इसका प्रमाण भी थी। वह लोग प्रतियोगिता में उससे हार जो गयी थीं। ईर्ष्या कैसे नहीं करतीं।

अपने कमरे में अप्रत्याशित रूप से उसे आया देखकर प्रसन्न चकत्ति हड़बड़ा से गए। एकदम से खड़े होकर बोले — अरे गया तुम! आओ बेटी आओ... कहां बैठाऊं तुम्हें?

हंसकर गया ने कहा — परेशान मत होइये काका। मैं दरवाजे की देहली पर ही बैठ जाऊंगी... हां, अब बताइए... क्या कह रहे थे?

—एक बोतल का इंतजाम कर सकती हो बेटी?

—लीजिए और सुनिए। मां ने तो मुझसे कहा कि भाई जी को एक अच्छी बोतल देनी ही पड़ेगी। मैं वही तो लेकर आयी थी।

यह कहकर गया ने साड़ी के पल्ले के नीचे छुपाई हुई मोटे पेट की बोतल निकालकर उनके सामने रख दी। प्रसन्न चकत्ति की कंजी आंखें लोभ और खुशी से चमक उठीं। जल्दी से हाथ बढ़ाकर बोतल उठाते हुए बोले — अरे वाह बेटी वाह! अंग्रेजी में क्या लिखा है पढ़ सकती हो?

—नहीं काका, अंगरेजी वंगरेजी नहीं पढ़ सकती मैं।

प्रसन्न चकत्ति ने प्रशंसनीय दृष्टि से गया की ओर देखा, शायद उसमें किंचित मुग्ध भाव भी था। उसका मदमाता यौवन बहुतों का काम्य था। पर बहुत ऊंची डाल का फल था, सबके हाथ कहां आ सकता था। क्षण भर बाद बोले — क्यों गया, साहबों और मेमों के नाच में क्या हुआ? देखा तूने?

—नहीं काका। मुझे वहां नहीं रहने दिया जाता।

—शिप्टन साहब की मेम क्या छोटे साहब के साथ नाच रही थी?

—सबकी तकदीर फूट गयी है। सब एक दूसरे की कमर पकड़कर नाचते हैं। झाड़ू मारिए उनके मुंह पर। मैं तो देखकर शरम से गड़ जाती हूं काका।

—क्या?

—हां काका, झूठ नहीं कह रही। विश्वास न हो तो खुद जाकर देख आइए एक बार। बड़े साहब का चपरासी नफर मोची बरांडे में खड़ा है।

—भजा कहां है? वह तो मेरी थोड़ी बहुत मानता है।

—वह भी वहीं है।

—बड़ा साहब भी है?

—वह क्यों नहीं होगा, और कहां जाएगा?

—अच्छा, भीतर से कैसा आदमी है बड़ा साहब?

गया ने नजरें जमीन की ओर झुकाकर कहा — वैसा ही। बाहर से जितना सीधा दिखता है, है नहीं। वैसे और सब तो ठीक है, पर उसके बदन...

—बीच में ही काटा प्रसन्न चकत्ति ने—बदबू आती है?

—बदबू तो आती ही है। इसके अलावा सारा बदन घमौरियों से भरा रहता है। रोज रात को मेरे जूड़े का कांटा मांगकर वह घमौरियां फोड़ता है। कह तो दिया गया ने, पर तुरंत ख्याल आया कि वृद्ध अमीन से, विशेषकर जिसे काका कहती थी, यह बात कहना उचित नहीं हुआ। उस शर्म को ढकने के लिए जल्दी से उठकर बोली, चलूं काका, बहुत रात हो गयी। बिस्कुट खायेंगे आप? खायें तो ला दूं अभी। एक और वस्तु खाते हैं यह लोग — उसे चीज कहते हैं। बड़ी बदबू आती है। मैंने एक बार जरा सी मुंह में डाल ली थी, सिर घूम गया था, जी मिचलाने लगा था। पर कहते हैं कि खाने से ताकत आती है।

गया के चले जाने पर अमीन ने बड़ी साध से बोतल खोलकर विलायती शराब का घूंट भरा। दीवान जी की कृपा से जब-तब अच्छी कमाई तो हो जाती थी, लेकिन ऐसा माल केवल पैसे से नहीं मिलता। इसके लिए तो जुगत लड़ानी पड़ती है। दीवान जी को यह सब नहीं चलता था, विशुद्ध वैष्णव थे वह तो। वह तो बस दंगा-फसाद ही कर सकते थे। रात को किस खूबी से रहातुनपुर जला दिया। इसी कमरे में बैठकर सब कुछ

तय हुआ था, वह क्या जानता नहीं है। मजिस्ट्रेट आए या कमिश्नर, नील कोठी की सीमा में घुसते ही सब ठंडे हो जाते हैं।

और फिर राजा की जात वाले अपनी जात वालों का पक्ष न लेकर क्या हम कालों का पक्ष लेंगे?

खाओ पियो और मेमों की कमर में हाथ डालकर नाचो, बस मामला खतम।

भवानी के दिन आराम से कट रहे थे।

पिछले दो साल से राजाराम के घर से कुछ दूर बांस वन के किनारे पूस के छप्पर के दो कमरे बनाकर रह रहे थे। तिलु के एक लड़का भी हो गया था। काम-वाम नहीं करते थे वह। दहेज में जो तीन-चार बीघे जमीन मिली थी, उसकी फसल से गुजारा हो जाता था। जिस साहब ने उन दोनों के चित्र बनाए थे, उसने कुछ दिन पहले विलायत से उनके नाम एक चिट्ठी और पुस्तक की एक प्रति भेजी थी। दोनों चीजें नीलकोठी की मार्फत आयी थीं, राजाराम ने लाकर दी थीं। देकर कहा था — हां भवानी, इसमें तिलु का चित्र कैसे आया? साहब ने बनाया था शायद? बहुत अच्छा बनाया है, जान डाल दी है। पर उसका चित्र बनाया कैसे साहब ने? चलो छोड़ो, पर इस गांव में किसी को दिखाना मत। जाने क्या बातें बनायें लोग। अंगरेजी किताब है, उसमें क्या लिखा है यह तो कोई बता नहीं पाएगा, बस इस गांव और यशोर के इलाके के बहुत से चित्र अवश्य समझ में आ जाते हैं। साहब भला आदमी था।

तिलु ने हंसकर कहा — देखा मेरी तस्वीर कितनी अच्छी आयी है।

—मेरी भी तो।

—बिलु निलु को दिखाइए, बहुत खुश होंगी। ठहरिए मैं बुलाती हूं।

निलु ने आकर हल्ला मचाना शुरु कर दिया — हर बात में दीदी ही क्यों आगे रहती है? क्या उसकी तस्वीर नहीं बन सकती थी। रस के नागर को तो बस दीदी ही दिखायी देती है हर समय।

तब भी आजकल उनका चंचलपना बहुत कम हो गया था। बातचीत में भी पहले जैसा बचपना नहीं रह गया था। बिलु तो बहुत ही बदल गयी थी। दो तीन महीनों में वह भी मां बनने वाली थी।

परंतु तिलु अजीब थी। अधेड़ गृहस्थ के घर लाड़ में पलने के बावजूद भवानी की फूस की झोंपड़ी में उतनी ही खुश थी। सारा काम हाथ से करती, दिन भर चाकरों सी घूमती रहती।

बिलु भी काम में उसका हाथ बंटाती। दोनों बहनें छाया की तरह बहन के साथ लगी रहतीं।

भाभी कभी न आने का उलाहना देती तो विनम्रतापूर्वक कहतीं — घर पर काम कितना रहता है। दीदी अकेली कैसे करेगी, मुन्ना भी छोटा है।

भाभी ताना देती — हां, हां हमारी तो घर-गृहस्थी थी नहीं, एक तुम लोगों की तो हुई है।

इसी तरह दिन व्यतीत हो रहे थे।

एक दिन निलू भाभी के पास गयी तो भाभी बोली — निलू आज शाम को तिलु को भेज देना थोड़ी देर को। वह कोठी से जब जल्दी लौट आते थे तो तिलु ही उनकी चिलम भरती थी, तू तो जानती है है। आजकल वह रोज वापस आकर कहते हैं कि तिलु के बिना घर बड़ा सूना लगता है।

—कह दूंगी दीदी से।

—पर मुन्ने को लेकर न आए संध्या के बाद।

—पर तुम्हारे जमाई के लौटने से पहले तो दीदी आएगी नहीं और वह महाशय लौटते हैं रात को।

—कहां से?

—यह नहीं मालूम।

—जरा पता लगा। आदमी का बाहर रहना अच्छा नहीं है।

—वह सब दोष नहीं है तुम्हारे जमाई में भाभी। वह तो दूसरी ही तरह के इंसान हैं। साधु आदमी हैं। तुम्हें तो पता है कि संन्यासी बन गए थे। अभी भी वैसे ही हैं। घर संसार की किसी बात से मतलब नहीं। जैसा दीदी करे ठीक।

—बहुत ही भले आदमी हैं। मिलने की बहुत इच्छा है। आज शाम को दोनों को भेज देना। जमाई बाबू यहीं संध्या करके नाश्ता कर लेंगे।

—भवानी के लौटते ही निलु ने कहा—सुनिए, आपको और दीदी को गठजोड़े से उस घर जाना है—भाभी का हुकुम है।

—और तुम और बिलु?

—अजी हमें कौन पूछता है? नागर-नागरी का जाना काफी है...

—फिर ऐसी बातें?

झट से कान पकड़कर निलु बोली—गलती हो गयी। माफ करिए मोशाय।

अभी तिलु आ पहुंची। दोनों को बातें करते देख हंसकर बोली—यहां गप्पें लड़ाई जा रही हैं, संध्या-वंध्या नहीं करनी आज?

भवानी बोले—निलु कह रही है कि हम दोनों को भाभी ने बुलाया है।

—ठीक है, चलिए। मुन्ने को इन दोनों के पास छोड़ जाती हूं।

शुक्ल पक्ष का चांद शाम को ही आकाश में खिला हुआ था। हवा में अभी तक खुनकी थी, आम्रवृक्षों पर बौर तो आ गया था, लेकिन अभी खुशबू फैलने में वक्त था। कभी कभार कोई कोयल कहीं दूर कुहुक उठती थी।

भवानी बोले—तिलु, चलो थोड़ी देर नदी किनारे बैठा जाए। बाद में भाभी के यहां चलेंगे।

तिलु ने कहा—चलिए। पर कोई देखेगा तो नहीं?

—देख भी ले तो क्या?

—जैसी आपकी मर्जी।

—चलो, रायबाबुओं के टुटे मकान के पीछे से चलें। भूत के डर से उस रास्ते से लोग नहीं आते-जाते।

—नदी किनारे आकर दोनों बांस के झुरमुट के नीचे सूखे पत्तों पर बैठ गए।

—भवानी बोले— क्यो, अच्छा लग रहा है ना?

मुस्कुराकर तिलु ने कहा—सचमुच बहुत अच्छा लग रहा है। आजकल तो काम के मारे घर से निकलना ही नहीं होता। निलु बिलु अभी बच्चियां हैं, घर गृहस्थी का कुछ भी तो नहीं जानतीं।

भवानी ने तिलु को पास खींचकर अपने से सटा लिया। पत्तों से छनकर चांदनी उसके वदन पर पड़कर और भी मोहक बना रही थी। तीस साल उम्र हो जाने पर भी पति प्राप्ति के बाद से उसका तन मन जैसे किशोर की चंचलता से भर गया था, यौवन लहरें मालने लगा था। कुलीन कन्या के लिए चांद सी दुर्लभ वस्तु पति इस उम्र में मिला था और वह भी ऐसा पति। विवाह को दो वर्ष हो जाने पर भी उसे आज भी विश्वास नहीं होता था।

तिलु बोली—जानते हैं कभी-कभी मेरे मन में क्या ख्याल आता है? आप नहीं आए थे इसीलिए हम लोगों का विवाह नहीं हो रहा था... कुलीन की लड़की का ब्याह....

बीच में ही भवानी ने पूछा—अच्छा, एक बात समझ में नहीं आयी। तुम लोगों को पदवी राय है, फिर कुलीन कैसे हुए? राय तो श्रोत्रिय होते हैं?

—यह तो आप भैया से पूछिएगा। मुझे तो बस इतना मालूम है कि हम कुलीन हैं। मेरी दो बुआ थीं, उनका कैसे भी ब्याह नहीं हुआ। छोटी बुआ के मर जाने के बाद बड़ी बुआ को कोई कुलीन का लड़का ब्याह कर दूर देश ले गया।

—फिर?

उस समय बड़ी बुआ की उम्र चालीस से ऊपर थी। ससुराल में सौत के बीस-बीस, तीस-तीस साल के बच्चे थे। सौत तो मर गयी थी। बच्चे बहुत दुख देते, पर बुआ मुंह बंद किये सब सह लेतीं। सबसे बड़ी विधवा, लड़की, जो वहीं रहती थी, चूल्हे की जलती लकड़ियों से मारती थी। कहती थी—तू कौन लगती है हमारी? बाबूजी की दूसरी ब्याहता है तू तो। बाबूजी की बुद्धि भ्रष्ट हो गयी थी इसीलिए तुझे ब्याह लाए। वह सब भी बुआ सहती रही। अंत में बुड्ढा पति भी चल बसा।

—उसके बाद?

—उसके बाद सबने मिलकर उसे धक्के मारकर घर से निकाल दिया। एक परिवार ने दया करके अपने यहां शरण दी और फिर यहां पहुंचा गए। चौबीसों घंटे रोती

रहती थी बस बुआ। फिर ज्यादा दिन एकादशी के उपवास नहीं करने पड़े उन्हें, भगवान ने उठा लिया।

—यह कितने दिन पहले की बात है?

—बहुत दिन पहले की। मैं बहुत छोटी थी। बुआ की सूरत याद नहीं है। भाभी नई ब्यावली आयी थी। मैंने तो बड़े होने पर मां और भाभी से सुना है।

इतना कहकर तिलु चुप हो गयी। भवानी भी चुप बैठे सोचने लगे कि वह व्यर्थ में सन्यासी हो गए थे। समाज की इन अत्याचारितों की सेवा करने के लिए तो जितने भी जन्म लिए जायें, थोड़े हैं। इसकी तुलना में मुक्ति वृत्ति तो नितांत तुच्छ है।

ऐसा प्रतीत हुआ जैसे उसी कुलीन कुमारी की स्मृति वहन करता हुआ इछामती का जल उनके सामने से प्रवाहित हो रहा था, जिसमें उसकी पूरी न होने वाले पति की साध में बहाए जाने वाले आंसू मिले हुए थे। और आज इस शुभ्र ज्योत्स्नालोकित रात में स्वर्ग से उतर कर सामने खड़ी हुई कह रही हो—बेटा, मेरी जो साध पूरी नहीं हुई, अपने सामने बैठी इस लड़की की वह साध तुम अवश्य पूरी करना। अच्छे पति बनना। यही मेरा आशीर्वाद है।

भवानी ने तिलु को आलिंगन में आबद्ध कर लिया।

जिस समय वे दोनों दीवान जी के यहां पहुंचे एक घड़ी रात बीत गयी थी। जगदंबा बोलीं—तुम लोग थे कहां? जरा देर पहले निलु आयी थी। कह रही थी कि तुम लोग तो बड़ी देर के घर से निकले हो। मैं तो जमाई के लिये संध्या की तैयारी करके नाश्ता सजाकर बैठे-बैठे सूख गयी।

तिलु बोली—किसी से कहना मत भाभी, ये नदी किनारे ले गए थे। जल्दी से इन्हें नाश्ता करा दो। मुन्ने के लिए मेरा मन कैसा तो कर रहा है। कितनी देर हो गयी देखे बिना। निलु ने क्या कहा, रो तो नहीं रहा।

—नहीं, निलु कर रही थी कि मुन्ना सो गया है। तू खा ले?

—उन्हें संध्या कर लेने दो पहले। भैया नहीं आये अभी?

—घोड़ा गया है लेने।

जमाई के सामने नाश्ते की तश्तरियां लगा दीं जगदंबा ने। सलहज होते हुए भी भवानी उनका सास से समान आदर करते थे। जगदंबा भी उनके सामने बिना घूंघट नहीं निकलती थीं।

तिलु ने खाते-खाते पूछा— निलु बिलु के लिए भिजवा दिया?

—निलु तो आकर खा गयी थी, बिलु के लिए दे दिया था।

—अब चलूं भाभी। मुन्ना उठ गया तो रोयेगा।

—जमाई को लेकर फिर आना तिलु। अंदरसे बनाऊंगी जमाई के लिए। खजूर के

रस की खीर बनाऊंगी। आज तो भजा का भाई कुल हंडिया रस दे गया था, नहीं तो आज ही बनाती।

—अच्छा, परसों आऊंगी।

सड़क पर आकर तिलु घूंघट निकाले भवानी के पीछे-पीछे चलने लगी। मुहल्ले के बीच से रास्ता था, एक साथ चलना या आपस में बात करना वर्जित था।

चंद्र चाटुज्जे का चंडीमंडप भी पड़ता था रास्ते में। वहां का चौसर का अड्डा सारे गांव में विख्यात था। चंद्र चाटुज्जे रिश्ते में तिलु के ममिया ससुर लगते थे। तिलु का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा कि कहीं वह उसे इतनी रात को पति के साथ देख न लें।

जैसे ही चंडीमंडप के सामने पहुंचे, भीड़ में से जाने किसने आवाज लगाई—कौन जा रहा है?

—भवानी ने खंखारकर कहा—मैं हूं।

—कौन भवानी?

—हां।

—ओ...।

इतना कहकर आदमी चुप हो गया। तिलु जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाकर भवानी ने निकट पहुंचकर फुसफुसाई—कौन था?

—महादेव मुखेज्जे।

—अच्छी मुसीबत है। मुझे देख लिया क्या?

—देख भी लिया हो तो क्या हुआ। इतना डरती क्यों हो, मेरे साथ ही तो हो?

—आप इस गांव के लोगों को नहीं जानते। हो सकता है कल सबकी जुबान पर यही बात हो। रस ले-लेकर एक दूसरे से कहेंगे कि फलाने की बहू रात को पति के साथ जा रही थी।

यह सब बदल जायेगा तिलु। वह दिन दूर नहीं है, जब यह सब कुछ नहीं रहेगा। मेरे तुम्हारे दिन चले जायेंगे। अगर मुन्ना जीवित रहा तो वह इसी सड़क पर अपनी बहू की बगल में चलेगा और परवाह भी नहीं करेगा।

नालू पाल ने दुकान कर ली थी। मुल्लाहाटि की हाट में सामान बेचने के लिए जाते समय नालू की नजर में हमेशा नदी के पास की वह जगह पड़ती थी, जहां पानी का स्रोत रुक गया था और जगंली घास-पत्ते उग आये थे। तभी उसने निश्चय कर लिया था कि दुकान करेगा तो उसी जगह करेगा। आस-पास कोई दुकान न होने के कारण अच्छी बिक्री की संभावना थी।

दुकान पर ग्राहक आये। आदिवासी थे, उनके पूर्वज संथाल से नील कोठी के काम के

लिए आए थे। कई पीढ़ियों से वहां होने के कारण बंगला ही बोलने लगे थे, रीति रिवाज मानने लगे थे, यहां तक कि पहनने ओढ़ने भी बंगालियों की ही तरह लगे थे।

एक औरत बोली—दो पैसे का तेल और नमक दो तो जल्दी से, बादल हो रहे हैं, बारिश आयेगी।

दूसरी ने पल्ले की गांठ खोलकर चार पैसे निकाले। वह उनकी कौड़ियां भुनाने आयी थी। एक पैसे की पांच कौड़ियां मिलती थीं। आज सबाइपुर की हाट थी, कौड़ी से साग-भाजी खरीदनी थी।

नालू बहुत व्यस्त था। हाट का दिन था, सबाइपुर वहां से आधा मील था। हाट से लौटते हुए लोग दुकान से सामान खरीदते हुए जा रहे थे। पैसों और कौड़ियों के अलग-अलग डिब्बे थे। सामान तोलकर जो भी मिलता, उसी डिब्बे में डाल देता।

अपनी दुकान पर बैठे-बैठे वह सस्ते में सामान खरीद लेता था। एक औरत को टोकरी सिर पर रखे लौकी का साग बेचते जाते देखा तो पुकार कर पूछा—कितने में दोगी?

—आठ कौड़ियां।

—चल परे, कल ही तो छह कौड़ियों में टोकरी खरीदी थी। मेरे बाप ने भी आठ कौड़ी की टोकरी नहीं सुनी होगी। छह कौड़ी ले ले और रख जा।

—बहुत नुकसान हो जायेगा। एकदम ताजा है, अभी तो तोड़कर ला रही हूं।

—अरी दे जा ना। बासी कौन बेचता है?

तभी उसकी नजर दुकान के सामने से जाते एक आदमी पर पड़ी जो एक टोकरी में दो बड़ी-बड़ी लौकियां लिए बेचने जा रहा था।

जल्दी से आवाज लगाई नालू ने—ओ दबिरूछि भाई, जरा सुनो तो...

क्या है? ये लौकियां तुम नहीं खरीद सकते। सस्ते में नहीं दूंगा।

—कितने में दोगे?

—दो पैसे की एक।

दुकान पर खड़े लोग यह सुनकर चौंके और उसकी ओर मुंह बायें देखने लगे। एक ने कहा—मजाक कर रहा है क्या?

सिर की टोकरी जमीन पर उतारकर दबिरूछि ने एक के हाथ से चिलम लेकर मुस्कुराते हुए कहा—मजाक क्यों करूंगा! मेरी हैसियत मजाक करने की है क्या?

नालू ने हंसकर कहा—चल, चल हो गया। जल्दी बोल, क्या लेगा?

—एक पैसा दस कौड़ी दे देना।

—नहीं, एक पैसा पांच कौड़ी। बस और तंग मत कर, दोनों लौकी दे जा, देनी हों तो।

बूढ़ा हरि नाई बैठा एक पत्ते में तमाखू की गोली बांध रहा था। भूधर घोष ने पूछा—यह क्या कर रहे हो?

—दांत मांजूंगा। लौकी खरीदने की सोच रहा था, पर दाम देखकर हिम्मत नहीं

पड़ी। जानसन साहब के जमाने में इसी मुल्लाहाटि की हाट में ऐसी लौकी छह लौड़ी में खरीदी है मैंने। दस कौड़ी में दो लौकी मिल जाती थी। मेरा नया-नया ब्याह हुआ था, पार्श्वनाथ घोष के घर उसके लड़के की ज्योना में एक रुपये में ढेरों साग-भाजी आयी थी। ऐसी पंद्रह-बीस लौकी थीं उसमें। परवल, कुम्हड़ा, बैंगन, पालक बगैरह तो बेहिसाब था। आज उतनी तरकारी दो रुपये से कम में आयेगी क्या?

अक्रुर मछुवारे में दीर्घ श्वास छोड़कर कहा — आदमी के खाने की चीजों की तो दिन पर दिन कमी होती जा रही है। आदमी के खाने के दिन चले जा रहे हैं, खायेगा क्या कोई? इसी सबाइपुर में कभी दूध रुपये का तेइस-चौबीस सेर मिलता था और अब कोई भी अट्ठारह सेर से ज्यादा नहीं देना चाहता।

नालू बोली —अरे काका अट्ठारह सेर की क्या बात कर रहे हो? हमारे गांव में तो सोलह सेर से ज्यादा नहीं मिलता। संदेश के लिए छेना लेने अघोर घोष के पास गया था, दो आने की थैली दे रहा था। एक थैली में ज्यादा से ज्यादा पांच पाव छेना होगा।

अक्रूर ने निराशा भरे स्वर में कहा — हमारे जैसे गरीब गुरबे तो बिना खाये ही मर जायें अब तो।

—लगता तो ऐसा ही है।

इन सब बातों से स्वयं को अत्यंत तिरस्कृत महसूस किया दबिरूछि ने और दो पैसों में दोनों लौकियां देकर हाट की ओर चला गया। जाते हुए नालू ने एक पैसा देकर कहा — एक काम करना, हाट से मेरे लिए एक पैसे की झींगा मछली खरीद लाना। लौकी के साथ झींगा। मछली पकाकर खाने का और ही मजा है। अच्छी देखकर लाना।

हरि नाई बोला — घर का छप्पर छवाने के लिए सोना छवैवा के पास गया था। हमेशा चार आने रोज लेता था, इस दिन कहने लगा कि चार आने में कही करेगा, पांच आने लेगा। छवैया के पांच आने और मजूर के दो आने — एक घर की छाजन के पांच-छह रुपये लग जायेंगे।चढ़ती महंगाई की तस्वीर ने अक्रूर को इतना निराश भयभीत कर दिया कि वह बेचारा चिलम पिये बिना ही उठकर लंबे-लंबे डग भरता हुआ चला गया।

लेकिन थोड़ी दूर जाते ही फिर वापस लौटना पड़ा उसे। वह निकटवर्ती गांव पुस्तिघाट में रहता था। उसके बड़े लड़के ने मछलियां पकड़ने के लिए सबाइपुर में नदी के बद्ध स्रोत वाले हिस्से में जाल डाल रखा था। सहसा वह सिर पर टोकरी में बड़ी सी मछली रखे आता दिखायी दिया। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि उसके लड़के को इतनी बड़ी मछली मिल गयी थी। आज हाट से सामान खरीदने के लिए पैसे भी नहीं थे। जैसे-जैसे लड़का पास आता गया उसके चेहरे की चमक बढ़ने लगी।

दूर से लड़के ने पूछा — कहां जा रहे हो बापू?

—घर जा रहा था। अब फंसी जाकर।

—वजन कितना है?

—आठ सेर, दस छंटाक। तुम मछली लेकर हाट चले जाओ।

—तू कहां जायेगा?

—नाव वहीं बंधी छोड़ आया हूं। तेज बारिश हुई तो बह जायेगी।

नालू की दुकान पर भीड़ शाम को होती थी। दिन का वक्त वह बातचीत करके बिताता था। सबने मिलकर अक्रूर को दुकान पर ही घेर लिया। एक सुर में बोले — मछली तो बहुत अच्छी है।

नालू बोला — अक्रूर दा, मछली हम लोगों को दे जाओ।

—ले लो ना। मैं यहीं बेच जाऊं, हाट जाने से बच जाऊंगा।

—कितने की दोगे?

—चार रुपये दे देना।

—सोच समझ कर बोलो अक्रूर दा। बहुत दिनों से बड़ी मछली न बेचने के कारण तुम्हें दाम नहीं मालूम। हरि काका, कितने दाम होने चाहिए?

हरि नाई ने अच्छी तरह उलट-पलट कर मछली देखकर कहा — हमारी जवानी में इस मछली की कीमत डेढ़ रुपया होती। अब तीन रुपये दे दो।

—माफ करो भैया, पड़ता नहीं खाता। बहुत नुकसान होगा।

—अच्छा, साढ़े तीन रुपये मिलेंगे। अब कुछ मत कहना। आज दो रुपये ले जाओ, बाकी कल ले लेना।

मछली खरीदकर कोई भी बहुत खुश नहीं हुआ क्योंकि अक्रूर को वे लोग खास ठग नहीं पाये थे। हाट में जितने में मिलती, उससे कुल आठ आने कम लगे थे।

नालू ने कहा — जिस जिसको लेनी हो, तैयार हो जाओ। नगद पैसे देने पड़ेंगे। चलो जल्दी, पैसे फेंको और हाथों में तेल लगाओ।

पांच-छह जने नगद पैसे देकर खरीदने को तैयार हो गये। सबने मिलकर दुकान के पीछे बांसों के झुरमुट के नीचे मछली के टुकड़े कर डाले और मानक के पत्ते लाकर अपना-अपना हिस्सा बांध लिया।

नालू ने भी एक हिस्से में से आधा लिया।

अक्रूर बोला — पाल मोशाय, आधा क्यों पूरा लीजिए न।

—नहीं रे! दुकान की हालत बहुत अच्छी नहीं है आजकल। इतनी मछली खाने लगा तो हो गया बस।

—तुम लोग तो बस मां बेटे हो, एक बहन है शायद। गृहस्थी का खर्च ही कितना है?

—दुकान अच्छी तरह जमाये बिना ऐसी विलासिता नहीं कर सकता मैं।

—अब इस अगहन में बहू को ले आओ। हम भी तो देख लें।

—पहले जरा धंधा जमा लूं। फिर सब कुछ होगा।

इसके बाद नालू को बात करने की फुर्सत नहीं मिली। दुकान पर भीड़ हो गयी। कौड़ी का सामान खरीदने वाले अधिक थे, पैसे के कम। रुपया भुनाने तो कोई भी नहीं

आया। रात के आठ बजे तक ग्राहकों की भीड़ लगी रही, पर रुपया किसी ने भी नहीं निकाला।

नालू जिस समय हिसाब मिलाने बैठा, एक पहर रात बीत गयी थी। कौड़ियां एक तरफ रखता गया और पैसे एक तरफ। सब मिलाकर दो रुपये सात आने पांच कौड़ियां हुए।

चकित रह गया नालू। एक वक्त में करीब ढ़ाई रुपये की बिक्री। विश्वास करना मुश्किल था। मां सिद्धेश्वरी की कृपा से अगर रोज ऐसी बिक्री हो तब कुछ बात बने।

ढाई रुपये की बिक्री की तो उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी। बिसाती का सामान सिर पर उठाये हाट-हाट घूमा करता था। सर्दी-गर्मी, धूप-बरसात, कीचड़ क्या नहीं गुजरा शरीर पर से। गोपाल नगर के बड़े दुकानदार कभी सीधे मुंह बात नहीं करते थे। बिसाती के सामान की फेरी लगाने वाला भी कोई इंसान होता है।

आज वे दिन नहीं रहे। अपनी खुद की दुकान है, मिट्टी की दीवालों का छप्पर छाया घर है। दुकान पर लगाई गद्दी पर बैठे-बैठे सामान बेचता है। कहीं जाना नहीं पड़ता उसे, धूप-बारिश में निकलना नहीं पड़ता। शाम को चार जने आकर दुकान के सामने पड़ी खटिया पर बैठकर बातचीत करते हैं, इज्जत करते हैं।

पर बिक्री अभी और बढ़ानी पड़ेगी। पांच रुपये रोज की बिक्री जब करने लगेगा तभी वह अपने को गोवर्धन पाल का उपयुक्त पुत्र समझेगा। मां सिद्धेश्वरी जल्दी ही वह दिन दिखाए।

पिछले कुछ दिनों से वह धान की जमीन की तलाश में था। रात को घर पहुंचकर उसने तय किया कि सुबह उठते ही सात बेड़े के कनाई मंडल के पास जाएगा। खबर मिली थी कि वहां अच्छी जमीन थी।

—और ब्याह?

हरि नाऊ ने कुछ गलत नहीं कहा था। घरनी बिन घर सून।

उसकी खोज भी कर ली थी उसने — विनोदपुर के अंबिक प्रामाणिक की मझली लड़की तुलसी को देखा था।

पिछली बार जब तुलसी पानी देने आयी थी तो बेल के पेड़ के नीचे खड़े होकर उसकी ओर देख रही थी। ग्यारह साल से कम की नहीं थी। सांवला रंग था और बड़ी-बड़ी आंखें। गोल-गोल हाथ-पैर। आजकल वह भी विनोदपुर अपनी मौसी के यहां जल्दी-जल्दी चक्कर लगाने लगा था। इसके मूल में मौसी के ही मुहल्ले में रहनेवाली अंबिक प्रामाणिक की यह लड़की थी, यह शायद मौसी को भी नहीं मालूम था। लेकिन यह बात अभी नहीं।

वह जानता है कि अगर उसने तुलसी का हाथ मांगा तो उसके पिता खुशी से उछल

पड़ेंगे। पर उसे विवाह करके एक ऐसा ससुर चाहिए था जो उसका अभिभावक बन सके। उसे उत्साहित कर सके, आपद-विपद में सहायता दे सके। पिता के मरने के बाद से अकेला ही जूझ रहा था वह। अंबिक प्रामाणिक उस गांव के छोटे आढ़ती थे। सरसों, कुलथी, मटर, मूंग खरीदते बेचते थे। माली हालत बहुत अच्छी नहीं थी, अचानक मांगने पर सौ पचास रुपये निकालना भी मुश्किल था उन लोगों के लिए। और नालू को उस समय सबसे ज्यादा जरूरत पैसे ही की थी। व्यवसाय के लिए पूंजी चाहिए थी। सस्ता माल मिल रहा था, तुरंत बयाना देना था। इस समय व्यापार को फैलाने का अच्छा मौका था। व्यापार करना तो जान गया था वह, पर रुपया कहां से लाए?

नालू की मां रसोई की चौखट पर खाना लिए बैठी थी। उसके पहुंचते ही बोली — आ गया बेटा नालू? कब से बैठी ऊंघ रही हूं।

—जल्दी से खाना परोसो। बहुत भूख लगी है।

—हाथ पैर धो आ। मैना पानी रख गयी है।

—मैना है कहां?

—सो रही है।

—इतनी जल्दी सो गयी?

—अरे, कह क्या रहा है तू? इतनी रात हो गयी, बच्चों को क्या नींद नहीं आती?

—पराये घर जाएगी तो क्या करेगी? ज्यादा से ज्यादा एक साल और है। ससुराल वाले रात दिन काम कराने के बाद ही खाना देंगे। बैठाकर नहीं खिलायेंगे।

खाना खाने बैठा नालू। परम तृप्ति के साथ खा रहा था वह।

तभी मैना आकर बोली — भैया, चिलम भर लाऊं?

— ले आ।

मां कह रही है कि मैं सो गयी थी, इसलिए तुम नाराज हो रहे थे।

—नाराज नहीं होऊंगा? इतनी बड़ी धींगड़ी हो गयी, घर में कोई काम नहीं है जो इतनी जल्दी सो गयी?

—तुम क्यों जलते हो, मैं तो खूब सोऊंगी।

—बड़ी गज भर की जबान चलने लगी है मरजानी की।

—देखो भैया कहे दे रही हूं, गाली मत दो। मैं कोई तुम्हारा नहीं खाती पहनती।

—फिर किसका खाती पहनती है मुंहजली?

—मां का।

—हां, मां ही तो कमाकर लाती है! बंदरिया कहीं की। देखती जा, मैंने भी तेरा ब्याह दुहेजू बुड्ढे से नहीं किया तो मेरा नाम नालू नहीं।

—हंसिये से नाक नहीं काट दूंगी बुड्ढे की। मेरी छोड़ो भैया, तुम भाभी कब ला रहे हो?

—पहले तुझे तो पार कर दूं। तेरे जैसी लड़ाकी ननद को घर से निकाले बिना...

—आ हा-हा! बातें तो सुनो। ले आओ फिर देखना की लड़ाकी ननद भाभी का कितना काम करती है। मेरी पालकी कहां है?

—मिली नहीं। पकी हुई नहीं रहती न। सुरो से कह दिया है, रथ-यात्रा के समय रंग कर देगा।

—मैं आषाढ़ में गुड़िया का ब्याह करूंगी। उससे पहले खरीद कर देनी पड़ेगी। अगर नहीं दी तो...

—जा, जा, चिलम ले आ। सिर मत खा अब।

चिलम पीकर दालान में दरी बिछाकर लेट गया नालू। गर्मियों के दिन थे। मंद समीर बह रहा था। आकाश में कृष्णा तिथि का पतला चांद चमक रहा था। पूरे मुहल्ले में सोता पड़ गया था। दूर नंदियों के बगीचे में सियार रह-रह कर बोल उठता था। रात काफी बीत गयी थी।

मैना ने पुनः आकर कहा — पैर दबा दूं?

—नहीं, जा तू यहां से। बड़ी आयी...

—दबा देती हूं।

—नहीं। सो जा जाकर, रात बहुत हो गयी है। कल सुबह जल्दी उठा लेना मुझे। सात बेड़े जमीन देखने जाऊंगा।

—उठा दूंगी। पैर सच्ची नहीं दबवाने?

—नहीं, तू जा।

घर लौटते समय नालू रोज रात को रास्ते में संन्यासिनी के अखाड़े में अधेला दिया करता था। देव और द्विज दोनों पर अगाध भक्ति व श्रद्धा थी उसे, व्यापार में उन्नति तो उन्हीं की दया से होगी। सन्यासिनी का यह आश्रम नदी के रुके हुए स्रोत के किनारे अत्यंत प्राचीन वटवृक्ष के नीचे शमी और बबूल के सघन वृक्षों की आड़ में था, सड़क से दिखायी नहीं देता था। संन्यासिनी धोपाखोला की रहने वाली थी। एक दिन उसने स्वप्न देखा कि इस गांव के एक जंगल में साढ़े तीन सौ वर्षों से श्मशान काली का पीठ-स्थान छुपा हुआ है। तभी वह यहां चली आयी थी और जंगल काटकर आश्रम बना लिया था। प्रायः सात वर्ष हो गए थे इस बात को। बहुत से शिष्य व सेवक बन गए थे उसके। आस-पास के कई गांवों से लोग मत्था टेकने आते थे।

संध्या के बाद जो लोग आते थे वटवृक्ष की बड़ी डाल के नीचे बनी झोंपड़ी के बाहर बैठकर गांजे की चिलम पीते।

नालू उधर से निकला तो छिहरि मछुआरा बोला — कौन? नालू है क्या?

—हां।

—क्या करने आया यहां?

—मां की जीविका दे जाऊं। मैं तो रोज आता हूं।

—जीविका?

—हां।

—कितनी?

—दस कौड़ी।

—बैठो। थोड़ा धुआं नहीं छोड़ोगे?

—नहीं, मुझे यह सब नहीं चलता। तुम लोग बैठो। और कौन-कौन है?

—अभी तो कोई नहीं है। पर हरि बोष्टम, मनुयुगी, द्वारिक कर्मकार, हाफिज, मंसूर वगैरह आते हैं।

नालू कुछ कहने जा रहा था कि आश्चर्य से मुंह खुला का खुला रह गया। उसकी आंखों को विश्वास नहीं हो रहा था। पीपल के पेड़ के नीचे भवानी को आते देखा उसने। तो क्या वह भी यहां गांजे के अड्डे में...?

नालू जहां का जहां चुप खड़ा रहा।

भवानी आकर वटवृक्ष के नीचे आसन के सामने बैठ गये। सिंदूर लिपी एक ऊंची जगह पर त्रिशूल की स्थापना की हुई थी, मूर्त्ति नहीं थी कोई, उसी को आसन कहा जाता था। भवानी के कुछ देर तल्लीन बैठे रहने के पश्चात् संन्यासिनी भी आकर उनकी बगल में बैठ गयी। रंग काला था, उम्र पैंतीस के लगभग और चेहरा ऐसा जो ताड़का को भी लज्जित करे। सर से दो लंबी जटाएं चेहरे के दोनों ओर से होकर गोद में गिर रही थीं।

भवानी ने पूछा — क्यों खेपी क्या खबर है?

—तुम बोलो ठाकुर।

—साधना-वाधना कर रही हो?

—आप लोगों की कृपा है। जात से हाड़ि डोम हैं, हम क्या साधना करेंगे ठाकुर? आज भी आसन सिद्धि नहीं हुई देवता।

—इस अमावस्या को आकर रीति बता दूंगा मैं।

—यह सब नहीं चलेगा ठाकुर। और मत टालो। मुझे सिखाओ।

—दुर खेपी, मुझे भला क्या आता है? यह तो उनकी दया है, मैं तो साधन-भजन न तो करता हूं और न ही उसमें विश्वास करता हूं — बस तुम लोगों को देखता भर हूं।

—मुझे धोखा नहीं दे सकते ठाकुर। तुम रोज शाम के बाद यहां आओगे। दुनिया भर के बेवकूफ मूरख लोग रात दिन भीड़ लगाए रहते हैं, किसी को दवा चाहिए तो किसी को लड़का होने के लिए भभूत। कोई मुकदमा जीतने के लिए ताबीज मांगता है तो कोई पैसा।

—इसका कारण तो तुम ही हो। शुरू से अगर तुम यह न करतीं तो ऐसा क्यों होता? तुमने इन्हें धरना देने ही क्यों दिया?

—तुम भूल रहे हो। यह जगह गोरे साहब का बंगला तो है नहीं, फिर इतने लोग क्यों आते हैं? धर्म की खातिर नहीं आते वे। वे आते हैं अपनी हालत सुधारने के लिए, मुकदमा जीतने के लिए!

—यह तो मैं भी समझता हूं।

—किसी दिन, दिन के वक्त कुछ देर ठहर कर देखिए, इतनी रात को क्या रखा है। अब तो सब चले गए हैं। क्या हालत होती है मेरी, तुम्हें क्या मालूम! साधन-भजन सब खत्म होता जा रहा है, वैद्य बनकर रह गई हूं। सब बीमारी ठीक करो।

यह सब बातें नालू की समझ में कुछ आईं, कुछ नहीं आईं। भवानी को कई बार देखा था उसने। दीवान जी का दामाद हजारों में एक था, देखकर मन श्रद्धा से भर जाता था। घर लौटकर उसने मां से कहा — आज एक बड़ी अजीब बात देखी मैंने। उस संन्यासिनी के गुरु हमारे दीवान जी के बहनोई हैं। सारी बातें तो मेरी समझ में नहीं आईं, पर इतनी बड़ी सन्यासिनी बिल्कुल तटस्थ है।

भवानी घर पहुंचे तो तिलु बोली — इतनी देर कर दी आपने! खाना एकदम पानी हो गया। निलु यहां आ, आसन चौकी लगा दे... बिलु कहां है?

आंखें मलती हुई निलु आई और आसन बिछाते हुए बोली — बिलु सो गयी है। कहां थे नागर इतनी रात तक? कुछ नया मिल गया क्या?

अप्रसन्न होकर भवानी बोले — तुम कभी अक्ल की बात भी करोगी या हमेशा...

—ही ही ही...

—हां... बस हंस दी और बात खतम।

—तो फिर क्या करूं, आप ही बता दीजिए?

—जाकर देखो और लोग क्या-क्या करते हैं। मनुष्य जनम अकारथ गवां रही हो। बस खाना और ऊल जलूल बकना।

—अजी इतना उपदेश देने की जरूरत नहीं है। हमारे तो इहकाल और परकाल दोनों के आप ही सब कुछ हैं। इसके अलावा जो कुछ करना है, आप जाकर करिए। हम तो गूलर की भाजी से भात खायेंगे और आपसे झगड़ेंगे। इसी में हमारा स्वर्ग है। अब खाना खाने के बाद मुन्ने को संभालिए।

खाना खाकर भवानी ने मुन्ने को ले लिया। आठ महीने का सुंदर गोल-मटोल शिशु। अबोध, विस्मित दृष्टि से पिता की ओर देख रहा था। फिर अकारण हंसकर पोपले मुंह से ग्-ग्-ग्-ग् करने लगा।

भवानी बोले — हां-हां ठीक है।

—हें-ए-ए-इया। ग्-ग्-ग्-ग्...

—हां-हां बेटा, ठीक है।

फिर मुन्ना अपनी आंखों के सामने अपना ही हाथ नचाकर विस्मय से देखने लगा, मानों कोई अद्भुत वस्तु हो। भवानी की नजरों के सामने अनन्त आकाश का एक टुकड़ा था। दूर बांसवन में रह-रहकर जुगनू चमक रहे थे। कृष्णपक्ष की तृतीया का चांद पूर्व में उदित होकर आकाश को आलोकित कर रहा था। सितारे नगीनों की तरह चमक रहे

थे। वह अंधेरा-अजाला, वह नक्षत्र भरा आकाश, वह फूल-पत्ते, गोद का वह शिशु सब एक हाथ का बनाया बड़ा चित्र था। उस शिशु की तरह वह भी मुग्ध व विस्मित हो जाते थे।

तिलु भी काम निपटाकर आ गई। पास बैठते हुए बोली — मुन्ने का चटावन कब करिएगा?

—चटावन तो उपनयन के समय होगा।

—हाय राम, यह क्या कह रहे हैं आप! ऐसा नहीं हो सकता, आप अन्नप्राशन के लिए शुभ दिन देखिए।

—तुम्हारे यहां के रीति-रिवाज हमसे अलग हैं। हमारे नदिया-शांतिपुर में यह सब नहीं चलता। लो मुन्ने को संभालो अब।

मुन्ने को गोद में लेकर तिलु उसके गाल से गाल सटाकर दुलार करने लगी। मुन्ने ने भी मौका मिलते ही मां के बाल मुट्ठी में भर लिए और मुंह में डालने की कोशिश करने लगा, फिर मां की ओर देखकर हंसने लगा।

मां-बेटे की वह मूर्ति देखकर भवानी न जाने कहां खो गए। दृष्टि दूर आकाश के किसी जाज्वल्यमान नक्षत्र की ओर बंध गयी। सोचने लगे कि सन्यासी बनकर कहां-कहां नहीं घूमे वह, योग ध्यान सब कुछ किया, लेकिन मां-बेटे के इस योगायोग के सामने उनका सारा योग ध्यान जैसे पानी में बह गया। अनुभूति सर्वाश्रयी होती है। इसी सर्वमंगलकारी अनुभूति के माध्यम से जैसे संसार का रहस्य दृष्टिगत हुआ उन्हें। क्या युग युगांतर से कवि, ऋषि मुनि क्षण भंगुर संसार की अमरता को आवागमन के इस पथ पर नहीं ढूंढ़ते रहे?

वह है तभी तो यह मां है, लड़का है, प्यार है, आत्म-त्याग है, सेवा है, प्रेमिका है, प्रेमी है।

उन्हें ख्याल आया कि एक बार कानपुर में उन्होंने एक विख्यात गायक का गाना सुना था, उनका नाम कन्हैयालाल संतारा था। प्रसिद्ध गायक हनुमानदास जी के गुरुभाई थे वह। स्थायी की पंक्ति शुद्ध पक्के स्वर में सुनाकर जब मधुर स्वरलहरी में अंतरा शुरू किया था तो ऐसा लगता था जैसे सुरलोक में पहुंच गए हों। तीस साल बाद भी याद आते ही जैसे ही आंखें बंद करते हैं, उस दरबारी कानड़ा के स्वर कानों में गूंजने लगते थे।

महान कलाकार अनजाने ही मन हर लेता है, दर्द के साथ उसकी अमरवाणी मनुष्य के अंतर में गहरे पैठ जाती है।

विस्मय से अभिभूत हो गए भवानी। इस मां और शिशु में भी उसी अमर शिल्पी की वाणी अन्य भाषा में लिखी हुई थी, जिसे कोई पढ़ सकता था, कोई नहीं।

बाहर बांसों पर बैठे निशाचर पक्षी बोल रहे थे। दूर मछुआरों के मछलियां पकड़ने की ठक-ठक आवाज आ रही थी। उजाले में मछलियां पकड़ने के लिए नाव पर किसी

चीज से ठक-ठक करने का ढंग भवानी ने यहीं आकर देखा था। बड़ी अच्छी जगह थी। इछामती की स्निग्ध जलधारा ने उनके मन का कितना मैल धो दिया था। जो संसार से विरक्त होकर जीना नहीं चाहते हैं, सर्वदा आंखें खुली रखते हैं। संसार से विरक्त होकर नहीं, संसार में रहकर ही इस सत्य की उपलब्धि का मंत्र उन्हें जैसे इछामती ने ही दिया था। कल-कल निनादिनी, अमृतधारावाहिनी इछामती!... जो वाणी मन में नई आशा व आनंद का उद्रेक न करे, वह ईश्वरीय वाणी हो ही नहीं सकती।

तिलु ने फिर पूछा — कहां खो गए, बताइए न, चटावन कब करेंगे?

—तुम तो नासमझी की बात कर रही हो। हम ठहरे गरीब लोग, तुम्हारे पीहर का मान रखने के लिए कितने लोगों को निमंत्रित करना पड़ेगा, तुम्हीं बताओ? कितना झमेला होगा? और तुम जानती हो कि मुझे शोर-शराबा जरा भी पसंद नहीं है।

—सब कुछ मैं खुद संभाल लूंगी, आपको कुछ नहीं करना पड़ेगा।

—जो ठीक समझो करो। खर्चा कहां से होगा?

—दाल चावल पीहर से ले आऊंगी। दो रुपये में एक गाड़ी तरकारी आ जाएगी। सवा रुपये का आधा मन दूध और पंद्रह रुपये की डेढ़ मन मछलियां। बस।

—कितने लोगों का खाना होगा?

—दो सौ आदमी खा लेंगे इतने में। भैया को तो लोगों को खिलाने की हमेशा से आदत रही है, मेरा हिसाब गलत नहीं हो सकता। तीस रुपये से ज्यादा खर्च नहीं होंगे।

— तुम तो कहकर छुट्टी पा गयीं। तीस रुपये क्या कम होते हैं। तुम्हारा क्या, तुम तो बड़े घर की लड़की हो, झट से कह दिया।

गुस्से से गर्दन झटककर तिलु बोली — नहीं, मैं कुछ नहीं सुनूंगी। मुन्ने का चटावन तो करना ही पड़ेगा।

तभी निलु आ गयी। उसने शायद तिलु की बात सुन ली थी। आते ही बोली — चटावन नहीं करना? तो फिर ब्याह करने का शौक क्यों चर्राया था?

भवानी ने डांटा — तुम क्यों आई यहां? यह हम दोनों के बीच की बात है...

निलु बोली — क्यों, मुन्ना क्या मेरा लड़का नहीं है?

—अच्छा! ऐसी बात है?

—जी हां..., ऐसी बात है। इसलिए मुन्ने का चटावन जल्दी करना पड़ेगा।

भवानी के पुत्र का अन्नप्राशन था। तिलु ने रात को मुहल्ले की औरतों को इकट्ठा करके पांच टोकरी लड्डू बनाए। मुन्ना बहुत ही सुन्दर था, जो भी देखता गोद में लेना चाहता। तिलु ने भैया से कहकर उसके लिए सोने की चेन बनवा दी थी, राजाराम ने अपने हाथों से वह चेन भानजे के गले में पहनायी थी।

यद्यपि भवानी की आर्थिक अवस्था बहुत अच्छी नहीं थीं, पर तब भी उन्होंने गांव का

कोई आदमी निमंत्रित करने से नहीं छोड़ा। पहले दिन मुहल्ले की औरतों ने साग-भाजी काटी। रात भर जगकर मछलियां तलीं।

कुसी ब्राह्मणी खाना बनाने के लिए सारे गांव में प्रसिद्ध थी, सुबह चार बजे आकर उसने चूल्हा जला दिया, मुखर्जियों की विधवा बहू और नई बामनी उसकी मदद को आ गयीं।

राजाराम का एक दूर के रिश्ते का भतीजा कलकत्ते से आया हुआ था। वहां वह कंपनी की कोठी में नकलनवीस का काम करता था। जनेऊ गले में माला की तरह लटकाकर और लाल गमछा कंधे पर डालकर इधर-उधर घूम रहा था वह। बहुत ज्यादा बोलता था। एक जगह खड़े होकर हाथ नचाकर बोला— कलकत्ते में एक तरह का तेल आया है, जो साहब लोग घर में जलाते हैं, मिट्टी का तेल कहते हैं उसे। बड़ी बदबू आती है उसमें।

रूपचांद मुखर्जी ने पूछा— प्रदीप में जलता है?

—नहीं। कांच लगी हुई अलग ही तरह की बत्ती है। बहुत महंगी है। यहां कौन ला सकता है वह?

हरिराय बोले — हमारे सामने कलकत्ते का ज्यादा बखान मत करो। कलकत्ते में जो भी है, वह सबसे पहले हमारी नील कोठी में आएगा। इनके जैसे साहब तो कलकत्ते में भी नहीं हैं।

—कलकत्ते का क्या देखा है तुमने? कभी गये तो हो नहीं। चलो, नाव से ले चलूं।

—अच्छा, साहब लोगों के देश में क्या मशीन से चलनेवाली गाड़ी आ गयी है? नील कोठी के नदेरचांद मंडल ने छोटे साहब के मुंह से सुना है। वहां से अखबार में छपी हुई तस्वीर भेजी है उन लोगों ने।

भवानी मुन्ने को गोद में लेकर मुहल्लों की प्रदक्षिणा करने चले, पीछे-पीछे स्वयं राजाराम फूल और लाई बिखेरते चले। दीनू मोची ढोल बजाते हुए आगे-आगे चल रहा था, बगल में उसके साथ चलता हुआ उसका लड़का बांसुरी बजा रहा था। बच्चे को गोद में लिए भवानी रायपाड़ा, घोषपाड़ा एवं पूरबपाड़ा घूम आए। घर-घर में शंख बजने लगे। औरतें बच्चे को देखने को एक दूसरी पर झुकी पड़ रही थी।

ब्राह्मण भोजन के समय आपस में होड़ लगने लगी कि कौन कितना खा सकता है। नारियल के लड्डुओं की सभी ने भूरि-भूरि प्रशंसा की।

पंगत उठने वाली थी कि तभी कुख्यात हला पेके ने घर में प्रविष्ट होकर भवानी को साष्टांग प्रणाम किया। नवागत होने के कारण भवानी उसे पहचानते नहीं थे। दूसरे लोग खूब खातिर करने लगे उसकी। राजाराम बोले — आओ हलधर, आओ बैठो...

फणी चकत्ति ने प्यार से पूछा — बेटा हलधर, तबियत तो ठीक है?

डाकुओं का दुर्दमनीय सरदार पाबांसा पर चढ़कर रातों-रात चालीस कोस रास्ता पार करने में उस्ताद था हला। न जाने कितनी हत्याएं की थीं, कितने घर लूटे थे। जेल से

लौटे हला ने विनयपूर्वक हाथ जोड़कर कहा — आप लोगों के श्री चरणों के आशीर्वाद से ठीक ही हूं महाराज।

—कब आए?

—शनिवार को आया महाराज। जैसे ही पता चला, ब्राह्मणों की पत्तल की झूठन लेने चला आया यहां।

—हां, हां, आओ बैठो।

डकैती के अपराध में हला को नीलकोठी के कोर्ट से तीन साल की सजा हूई थी। उसे वहां देखकर ऊपर से भले ही सब उसकी खातिर कर रहे थे, किंतु मन में भयभीत हो गए थे। बहुत ही साहसी, निर्भीक एवं लंबा चौड़ा था। एक बार तो गुस्से में नीलकोठी के मुडी साहब की टमटम उलट दी थी। पर इस बात का भरोसा था कि देव और द्विज दोनों में उसकी अगाध भक्ति थी। उसने कभी ब्राह्मण के घर डाका डाला हो, ऐसा कभी नहीं सुना गया। लेकिन तब भी इस इलाके के ब्राह्मणों को उसका बहुत विश्वास नहीं था।

हला खाने बैठा तो जमकर खाया उसने। अच्छे-अच्छे ब्राह्मणों से ज्यादा खुराक थी उसकी। खाकर दो लोटे पानी पिया और बोला — अब मुन्ने का मुंह देखूंगा।

यह सुनते ही तिलु डरकर बोली — हाय राम, वह तो खूनी डाकू है, उसके सामने मुन्ने को नहीं निकालूंगी।

भवानी ने बड़ी मुश्किल से तिलु को समझा-बुझाकर मुन्ने को जैसे ही हला की गोद में दिया, उसने अंटी से सोने की जंजीर निकालकर मुन्ने के गले में पहनाते हुए कहा — मेरे पास और कुछ नहीं है दादा भाई, बस यही था सो तुम्हें दे दिया। नारायण की सेवा हो गयी आज मेरी!

भवानी ने हार पर संदिग्ध दृष्टि डालकर कहा — नहीं हला, यह जंजीर मत दो तुम। इतनी कीमती चीज क्यों दे रहे हो? ऐसा करो थोड़ी मिठाई खरीदकर दे दो।

हला ने हंसकर कहा — महाराज, आप जो सोच रहे हैं, वह नहीं है। यह लूट का माल नहीं है। मेरी औरत का था, उसे मरे बाईस-तेईस साल हो गए। घर में हंडिया में दबा हुआ था। कल आकर निकाला और इमली से साफ किया। जीवन में बहुत पाप किए है मैंने। ब्राह्मण को मैं नहीं मानता महाराज। सब पाजी होते हैं। पर बच्चा तो भगवान का रूप होता है। उसे पहनाकर आज मेरा परलोक सुधर गया। आशीर्वाद दीजिए मुझे।

सभी उपस्थित लोगों ने हला की प्रशंसा की। भवानी बड़ी दुविधा में पड़ गए। तिलु को दिखाया तो उसने भी कहा — यह आप वापस कर दीजिए। मुन्ने को पहनाने को जी नहीं ठुकता मेरा।

—वह लेगा ही नहीं। तुम क्या सोचती हो कि मैंने कहा नहीं? बार-बार हाथ जोड़ रहा था। वापस किया तो उसके मन को बहुत कष्ट होगा।

—भले ही हो, आप वापस दे आइये।

—ऐसा कैसे हो सकता है। जितना भी पापी हो, पर जब आदमी को पछतावा हो और

बार-बार माफी मांगे तो माफ करना ही पड़ता है। नहीं है तो बाद को हार को गलवाकर सोना किसी अच्छे काम में दान कर देंगे।

इसके बाद तिलु ने मुंह से तो कुछ नहीं कहा, पर उसके चेहरे के भावों से स्पष्ट था कि वह इस बात से सहमत नहीं थी।

उस दिन के बाद से हला ने रोज भवानी के यहां आना शुरू कर दिया। मुंह से कुछ नहीं कहता, बस मुन्ने को बुलाकर देखता और चला जाता।

एक दिन भवानी बोले — सुनो हला, बैठो।

दिन ढले हल्की सी बारिश हुई थी। भीगी हवा में बकुल के फूलों की महक थी। हला ने स्वयं चिलम भरकर भवानी को दी। वह जब भी यहां आकर बैठता, दूसरा ही आदमी हो जाता। अपने ही मुंह से अपने पापों की कहानी सुनाता... परंतु गर्व से नहीं, उसके स्वर में पश्चाताप स्पष्ट झलकता।

वह कहता — महाराज, जो कर दिया उसको लौटा तो सकता नहीं। उस बार गोसांइयों के घर बांस से छत पर पहुंचा तो देखा पति-पत्नी सो रहे थे। पति जवान था, गरम खून था, मुझे देखकर बल्लम उठाकर मारने दौड़ा। बस मैंने जो लाठी घुमायी तो पहले पत्नी गिरी और फिर पति। गिरते ही दम तोड़ दिया दोनों ने।

—क्या कह रहे हो?

—ठीक कह रहा हूं महाराज। जो किया है, उसे बताने में क्या डर। चढ़ती उमर थी उस समय, इतनी अकल कहां थी। अब सोचता हूं तो मन को बड़ा कष्ट होता है।

—पाबांसा पर कैसे चढ़ते हो? कितनी दूर तक जा सकते हो?

—अब उतना नहीं चढ़ता। एक बार हलुदपुकुरि के घोष परिवार का घर लूटकर आधी रात को पाबांसा पर निकला था और पौ फटने से अपने अपने गांव लौट आया था। ग्यारह कोस रास्ता था।

—इससे ज्यादा नहीं गये?

—एक बार पन्द्रह कोस तक गया था। नंदीपुर से कामार-पेंड़े, मुरशिद मंडल के गोदाम।

—अब यह सब छोड़ दो। भगवान का नाम लो।

—इसीलिए तो आपके पास आता हूं महाराज। आपको देखकर मन में जाने क्या होने लगता है। मन कहता है कि यहां आता रहा तो कोई न कोई रास्ता निकल ही आयेगा।

जरूर निकलेगा। पर बुरे काम छोड़े बिना कुछ नहीं होगा, यह कहे दे रहा हूं।

यह सुनकर हला ने एकदम भवानी के पैर पकड़ लिए। बोला — आपकी दया है महाराज। आपके आशीर्वाद से हलधर यम से भी नहीं डरता। उसका भी सिर काटकर ला सकता हूं, जैसे तुष्टु कोले का सिर लाया था — सुनेंगे वह कहानी?

यह कहकर हला अट्टहास कर उठा।

और हला के उस रूप में भवानी को परकाल के भय से कातर हलधर घोष नहीं बल्कि

निर्भीक, दुर्जेय, तेजस्वी हला दिखायी दिया, जो जीवन भर मनुष्यों के सिरों से ऐसे खेलता रहा था जैसे बच्चे पोटली से खेलते हैं। वह विशालकाय, विशाल भुजा हला मोहमुदगर के श्लोक सुनने को तैयार नहीं था... वास्तव में नरहंता दस्यु ही था।

डेढ़ वर्ष में ही भवानी को उस गांव व इलाके से लगाव हो गया। इतना हरा-भरा इलाका पहले नहीं देखा था उन्होंने। बांस, नीम, गुंजा, पीपल, बड़ हर प्रकार के वृक्ष थे। तरह-तरह के फूल विभिन्न ऋतुओं में खिलते थे। पक्षियों के कूजन से सारा वातावरण गुंजायमान रहता था।

इछामती के किनारे इस ओर आबादी नहीं थी। नदी के दोनों ओर जंगल व झाड़ियां बहुतायत में थीं। भवानी की विवाह के समय से ही एक कुटिया बनाकर साधन-भजन करने के आंतरिक इच्छा थी। परंतु इछामती के किनारे की खेती की जो भी जमीन थी उसे नीलकोठी के अमीन नील की खेती के लिए चिन्हित कर गए थे। खाली जमीन मिलना अत्यंत कठिन था। भवानी इन सब चीजों में जरा भी लिप्त न होने के कारण इस झंझट में नहीं पड़े। जीवन है ही कितना।

उनके एक गुरू भाई मिर्जापुर के पास किसी पहाड़ की तलहटी में आश्रम में रहते थे। वेदांत के बहुत बड़े पंडित थे — संन्यासी बनने के बाद गुरु ने चैतन्य भारती परमहंसदेव नाम रख दिया था। घर का नाम गोपेश्वर राय था। भवानी के साथ लंबी अवधि तक एक ही पाठशाला में व्याकरण पढ़ा था। उसके पश्चात् कुछ दिनों तक पाटुलि-बलागड़ के प्रसिद्ध राय बाबुओं की स्टेट के दफ्तर में काम किया था। अचानक सब कुछ छोड़कर सन्यासी क्यों बन गये थे, इससे भवानी अनभिज्ञ थे। मिर्जापुर के आश्रम में ठिकाना बनाने के बाद उन्होंने भवानी के साथ पत्र-व्यवहार द्वारा सम्पर्क बनाया।

वही संन्यासी चैतन्य भारती परमहंस एक दिन सहसा भवानी के घर आ पहुंचे। मुंह खिचड़ी जैसी दाढ़ी से भरा हुआ, गेरूआ लबादा हाथ में चिमटा और बगल में कंबल। तिलु ने बहुत आदर यत्न किया। घर में रहने को मना कर दिया। बाहर बांसों के झुरमुट के नीचे कंबल बिछाकर दिन भर बैठे रहे। भवानी ने कहा — परमहंसदेव, सांप काट लेगा। देखो फिर मुझे दोष मत देना।

चैतन्य भारती ने कहा — मुझे कुछ नहीं होगा भाई। बिल्कुल ठीक हूं मैं।

—क्या खाओगे?

—सब कुछ।

—मांस-मछली?

—कोई आपत्ति नहीं है। पर आजकल खाना छोड़ रखा है। हजम नहीं होता।

—मेरी पत्नी के हाथ का खाओगे?

—नहीं, अपने हाथ का।

—जैसी तुम्हारी इच्छा।

तिलु ने जैसे ही सुना, आकर हाथ जोड़कर विनम्र स्वर में बोली — दादा...

परमहंस ने पूछा — कहो?

—आप मेरे हाथ का बना नहीं खायेंगे?

—किसी के हाथ का नहीं खाता बहन। पर अगर तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो बना देना। पर मांस-मछली मत बनाना।

—मछली का झोल?

—नहीं।

—क्या मछली भी नहीं दादा?

—तुम बड़ी जिद्दी हो। जो चाहो बना लो जाकर।

तब से तिलु नहा धोकर संन्यासी का खाना पकाती और बिलु, निलु जमीन लीपकर आसन बिछाकर उन्हें खाने को बुलातीं। फिर तीनों बहनें मिलकर दोनों को भोजन करातीं।

एक दिन संध्या के समय दोनों जने इछामती के किनारे एक गूलर के पेड़े के नीचे बैठे थे। परमहंस बोले —हां रे, दुनिया के लोग कहते हैं एक को ही संभालना मुश्किल है, और तुमने इकट्ठी तीन कर लीं?

—तुम तो जानते ही हो कि कुलीनों की कन्याओं को पति नहीं मिलता। इन लोगों का दुख देखकर मेरा मन बड़ा दुखी होता है।साधना-भजन तो अगले जनम में भी हो जायेगा, इस जनम में पहले जितना हो सके लोगों का दुख तो दूर कर लूं।

तीनों पत्नियां बड़ी भली हैं। तुम्हारा लड़का भी अच्छा है।

बावन साल का हो गया मैं। उसके बड़े होने तक जीवित रहा तो पंडित बना जाऊंगा उसे।

उससे भी बड़ा काम होगा, उसे भक्ति की शिक्षा देना।

—तुम तो वेदांती सन्यासी हो। यह भूतों के घर राम-राम वाली बात कब से करने लगे।

—वेदांती बनना आसान मत समझो। वेदांत को अच्छी तरह समझने के लिए पहले न्याय मीसांसा का अध्ययन करना पड़ता है। नहीं तो वेदांत का प्रतिपाद्य विषय पूरी तरह समझ में नहीं आता। ब्रह्मज्ञान अर्जित करना बहुत कष्ट साध्य है।

—कुछ दिन मुझे भी पढ़ा दो ना।

—यह कुछ दिनों का काम नहीं है। न्याय पढ़ने में बहुत समय लग जायेगा। तुम न्याय पढ़ लो, फिर मैं आकर वेदांत की शिक्षा दे दूंगा। पर इसके लिए साधना की जरूरत है। केवल पढ़ने से नहीं होगा। गृहस्थी के जंजाल में फंस गये हो भजन कैसे करोगे? इस जनम में तो संभव नजर नहीं आता।

—कोई परवाह नहीं। इसलिए मैंने भक्तिमार्ग अपनाया है।

—वह भी सहज थोड़े ही है। वह तो ज्ञान के मार्ग से भी कठिन है। ज्ञान तो स्वाध्याय से प्राप्त हो जाता है, पर भक्ति नहीं होती। मन में भाव उत्पन्न होने चाहिए। भक्ति का अधिकारी होना सबसे कठिन है। कोई भी सहज नहीं है रे भैया।

—तो क्या हाथ-पांव बांधकर चुप बैठा रहूं?

गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है — तेषां सतत युक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वक। अर्थात् उनमें चित्त लगाए रखने से वही उनको प्राप्त करने की बुद्धि प्रदान करेंगे।

—तुम तो मेरी ही बात का जवाब दे रहे हो।

—ब्याह करके थोड़ा गोलमाल कर दिया है तुमने। लिप्त हो जाओगे। एक से ही छुटकारा मिलना मुश्किल है... तुम तो एक साथ तीन ले आये।

—चलो यह जनम परीक्षा लेकर देख लूं। उनकी कृपा से इस दौड़ को भी समझ लूंगा। भागवत में शुकदेव ने कहा है — गृहैर्दारासुतैष्णां अर्थात गृहस्थ बनकर भोग के द्वारा स्त्री-पुत्र के साथ रहने की वासना दूर करना। वही कर रहा हूं।

—अगर तुम्हारे मन में गृहस्थ बनने की इतनी कामना थी तो परिव्राजक बनकर इतने दिनों तक तीर्थों में क्यो घूमते रहे?

सोचा था वासना का अंत हो गया है। पर बाद को देखा था कि पूरी तरह क्षय नहीं हुआ था उसका। तो फिर पहले उसे ही खतम कर दूं। शुकदेव का कहा ही करूं — त्यक्तैषणां सर्वै ययुर्धीरास्तपोवनम् — अर्थात् सारी वासनाओं का त्याग करने के उपरांत ही तपोवन जाना, वासना रहते नहीं। और तुमसे यह किसने कहा कि गृहस्थ बनने पर भगवान का नाम नहीं लिया जा सकता।

—नहीं भगवान का नाम नहीं लिया जा सकता यह तो किसी ने नहीं कहा। यही कहा है कि लिया नहीं जाता। ज्ञान भी नहीं होता और भक्ति भी नहीं होती।

—देखूंगा। भगवान तुम लोगों जैसा कठोर नहीं है। कम से कम मैं तो इस बात पर विश्वास नहीं करता कि गृहस्थी में रहकर भक्ति लाभ नहीं होता। फिर भगवान ने संसार की सृष्टि ही क्यों की? अपनी अबोध संतानों की वह क्या स्वयं ही प्रताड़ना करेंगे? क्या पिता होकर निःसहाय लोगों को जाल में फंसाने के लिए उन्होंने स्वयं जानबूझकर यह मायाजाल फैलाया है? इसका उत्तर दो।

—एषावृतिर्णाम तमोगुणस्य — तमोगुण की शक्ति ही आवरण है। वस्तु अपने यथार्थ रूप में प्रतिभासित नहीं होती। इसलिए तमोगुण का दूसरा नाम वृति है। भगवान को दोष मत दो। भगवान के बारे में इस तरह क्यों सोचते हो? वेदांत पढ़ोगे तो समझ में आयेगा कि भगवान का वह रूप नहीं है। वह तो कुछ भी नहीं करते। यह तो तुम्हारी ही दृष्टि का दोष है। माया की एक शक्ति का नाम विक्षेप है, यही विक्षेप तुम्हें मोहित किए रहता है, भगवान के दर्शन नहीं करने देता।

—तो उन्हीं के शरणागत होकर देखा जाए। माया शक्ति-वक्ति चाहे जितनी बड़ी हो, पर भगवान की भक्ति उन सबसे बड़ी है। उनके संसार में हर वस्तु उनकी ही है। उनके बिना माया आयी कहां से? हिसाब गलत हो जायेगा।

—हिसाब कहीं गलत नहीं हुआ। मेरी बात तुम समझे नहीं हो। श्वेताश्वतर की श्रुति में कहा है "अजामेकां" अज्ञान किसी की सृष्टि नहीं है। जो समष्टि रूप में ईश्वर है, वही व्यष्टि में कार्य रूप में जीव है। अद्वैत वेदांत में कहा है समष्टि में जो वर्तमान जो चैतन्य है, वही कार्य है। अर्थात् ईश्वर कर्त्ता है और जीव कार्य। लेकिन अपने रूप में दोनों एक ही हैं। केवल उपाधि में भिन्न हैं। तुम्हीं अपने ईश्वर हो। फिर ईश्वर कौन है?

—पहले गीता का श्लोक पढ़कर एक बात कही और अब अद्वैत वेदांत का सिद्धांत बखानने लगे?

—गीता के श्लोक का उद्धरण देकर क्या गल्ती की मैंने?

—गीता भक्ति शास्त्र है और अद्वैत वेदांत ज्ञान का शास्त्र है। दोनों को मिलाओ मत।

—ऐसी बात मत कहो। तुम्हारे मुंह में ऐसी बात सुनकर बड़ा कष्ट हुआ। वेदांत में ब्रह्म ही एकमात्र प्रतिपाद्य विषय है। दूसरे दर्शन तो ईश्वर की सत्ता को मानते ही नहीं। एकमात्र वेदांत ही तो ब्रह्म को खड़ा किए हुए है और उसी वेदांत को तुम निरीश्वरवादी कह रहे हो।

—निरीश्वरवादी नहीं कहा मैंने। मैंने कहा है यह भक्ति-शास्त्र है।

—तुम कुछ भी नहीं जानते। तुम्हें मैं "चितसुखी" और 'खंडनखंड खाद्य' पढ़ाऊंगा। तब तुम्हारी समझ में आयेगा कि असाधारण श्रद्धा के साथ उन्होंने ब्रह्म का संधान किया है। लेकिन अत्यंत कठिन व दुरूह ग्रंथ हैं। तर्कशास्त्र का भली-भांति अध्ययन किए बिना समझ में नहीं आयेगा। देखोगे कि वेदांत में किसी कुतर्क अथवा गलत भाष्य के अनावृत अंश को किस तरह समझाया है। और तुम कह बैठे...

—मैंने कुछ भी नहीं कहा। तुममें और मुझमें बहुत अंतर है। तुम महाज्ञानी हो और मैं एक तुच्छ गृहस्थ। तुम जो कहोगे उसके ऊपर मेरी बात का क्या मूल्य है? अपना वक्तव्य फिर व्यक्त करूंगा मैं।

—नहीं, अभी कहो। तुम अच्छे श्रोता और वक्ता हो। तुम्हें सुनाने और सुनने में मन को सुख मिलता है।

—तुम्हारे साथ ज्ञानवर्धक बातें करके बड़ी खुशी हुई मन को। यह गांव तो गाढ़े अंधकार में डूबा हुआ है। बस नील कोठी, साहब और जमीन खेती के अलावा कुछ भी नहीं सोचते लोग। उनमें मेरा साला सबसे प्रमुख है। नील कोठी का दीवान है वह। साहब ही उसका इष्टदेव है। वैसा ही अत्याचारी है। बस मेरी बड़ी पत्नी कीचड़ में कलम है।

—अच्छी है?

—आवश्यकता से अधिक अच्छी।

—बाकी दोनों?

—वह भी अच्छी हैं, पर अभी बचपना नहीं गया। दीवान की लाड़ली बहनें हैं न!

भवानी और संन्यासी को कुछ दिन प्राय नदी के किनारे किसी पेड़ के नीचे बैठे देखा जाता। अंत में तय हुआ कि सन्यासी तिलु, बिलु, निलु तीनों को दीक्षा देंगे।

रात को तिलु ने पति से पूछा — आपने गुरु बना लिया?

—क्यों?

—आप दीक्षा नहीं लेंगे?

—तुम्हारी भी अकल का जवाब नहीं। अगर मैंने दीक्षा नहीं ली हुई होती तो यह सन्यासी मेरा गुरु भाई कैसे होता?

—ठीक है। मैं भी दीक्षा नहीं लूंगी।

—क्यों?

—कोई जवाब नहीं दिया तिलु ने। मंद-मंद मुस्कुराती हुई छोटी धूपदानी में धूप डालती रही। भवानी को यह अत्यंत प्रिय था। तिलु जानती थी कि पति को संसार की किसी भी चीज का शौक नहीं था, किसी चीज से लगाव नहीं था, इसलिए उसकी इस छोटी सी खुशी का बहुत ख्याल रखती थी वह। प्रतिदिन सोने से पहले धूप जलाती और बार-बार पति से पूछती — क्यों खुशबू आ रही है? कैसी है? अच्छी है न?

बिना कोई जवाब दिये तिलु को जाते देख भवानी ने पूछा — जा क्यों रही हो? मुन्ना कहां है?

हंसकर तिलु ने कहा — आज निलु का दिन है न। याद नहीं है, आज बुधवार है? मुन्ना उसी के पास है। लेकर आयेगी।

—नहीं, आज तुम रहो। तुमसे कुछ कहना है।

—अरे वाह! ऐसा कैसे हो सकता है? निलु कितने शौक से ढाकाई साड़ी पहनकर मुन्ने को गोद में लिये बैठी है।

—आज तुम रहतीं तो अच्छा होता तिलु। चलो जैसी तुम्हारी मर्जी।

जरा देर बाद सोये मुन्ने को गोद में लिए निलु कमरे में आई। मुन्ने के गले में हला की दी हुई जंजीर पड़ी थी। बड़ा ही आकर्षक लग रहा था वह, आम बच्चों से एकदम भिन्न। निलु ने सावधानी से बिस्तर पर सुला दिया उसे। कभी-कभी भवानी सोचते कि क्या दूसरे लोगों को भी अपना बच्चा इतना ही मोहक लगता है? बदसूरत बच्चा भी? पर इसमें असत्य कहां है? यह नहीं होता तो संसार चलता कैसे? अचानक जाने क्या सूझा उन्हें कि सोये मुन्ने को धीरे से उठाकर बैठा दिया उन्होंने। जरा भी नहीं रोया वह, आंखें बंद किए बुद्धदेव सा बैठा रहा वह, बस गर्दन पीछे को लटकती देख भवानी ने हाथ से सहारा दे दिया। यह देख निलु घबड़ाकर बोली — यह क्या कर रहे हैं? गर्दन उतर जायेगी। आपकी भी क्या अक्ल है?

भवानी को बहुत ही अच्छा लग रहा था। मुन्ना कैसे आंखें बंद किये कृष्णनगर के कारीगर की मूर्ति सा चुप बैठा था, यह देखकर मन मुदित हो रहा था उनका।

निलु बोली — लिटा दीजिए उसे। क्यों तंग कर रहे हैं उसे। यह अच्छा लाड़ हुआ आपका।

मुन्ने को लिटाकर भवानी के मन में ख्याल आया कि उन्होंने कोई गलत काम नहीं किया। शिशु का सौंदर्य उसके मां-बाप के साथ ही समझा जा सकता है। बच्चा और मां-बाप एक ही सूत्र में पिरोये मनके होते हैं। परस्पर एक दूसरे को प्यार करना, अच्छा कहना ही विधि का विधान है। स्वयं को अलग नहीं किया जा सकता। दशमस्तमसि — यह भी वेदांत की ही अमरवाणी है। तुम ही दशम हो।

अगले दिन सुबह हला के साथ उसका अनुचर दुर्धर्ष डाकू अघोर मोची आया तो तीनों बहनें उसे देखकर अत्यंत प्रसन्न हूई। अघोर ने बचपन में तीनों को गोद खिलाया था।

तिलु बोली — आओ अघोर भैया, जेल से कब आए?

अघोर बोला— कल आया दीदीमणि। बस आज तुम लोगों को देखने चला आया। सोचा सन्यासी महाराज को भी प्रणाम कर आऊं। गंगास्नान का फल मिल जायेगा। कहां हैं वह?

—वह क्या किसी के घर रहते हैं? वह देखो बांसों के नीचे धूनी रमाए बैठे हैं। बैठो अघोर भैया, कटहल खाओगे। दोनों बैठो।

—पहले संन्यासी महाराज को दंडवत कर आऊं, फिर आकर मुन्ने को देखूंगा।

चैतन्य भारती आसन लगाए चुप बैठे थे। धूनी जली हूई नहीं थी। हला और अघोर ने जाकर साष्टांग प्रणाम किया।

आंखें खोलकर संन्यासी ने पूछा — कौन?

—हम लोग हैं, बाबा।

हला ने कहा — यह मेरा शागिर्द अघोर है। कल ही जेल से आया है। इसी गांव का रहनेवाला है।

—जेल क्यों हुई थी?

—आपसे क्या छुपाना बाबा। डाका डाला था दोनों ने। दोनों को ही जेल हुई थी।

—तुम दोनों में बहुत शक्ति है, किसी अच्छे काम में क्यों नहीं लगाते उसे? कोई नुकसान है क्या उसमें?

—नहीं, नुकसान तो कुछ नहीं है बाबा। बस हाथ खुजलाते हैं। रह नहीं पाते।

—हाथों को खुजलाने दो। जो मन तुम्हें परेशान करता और उकसाता है, बस उसे हमेशा अच्छे काम में लगाए रखो। धीरे-धीरे मन अपने आप सुधर जायेगा, बुरे काम से फिर जायेगा।

अघोर को यह सब बातें अच्छी नहीं लग नहीं थीं। यह सोच रहा था कि कब यहां से छुट्टी मिले तो जाकर तिलु दीदी से पक्का कटहल मांगकर खाये। तभी नीलु ने वहां आकर कहा — ओ संन्यासी बाबा.....

—क्या है बहन? चैतन्य भारती ने पूछा।

—पक्का केला और पपीता ले आऊं? स्नान हो गया?

—नहीं, अभी नहीं हुआ। पर तुम ले आओ, उसमें कोई आपत्ति नहीं है।

अघोर और हला भी उठकर खड़े हो गये। अघोर बोला — ओ दीदीमणि, मेरे लिए भी एक पका कटहल ले आओ ना। बड़ी भूख लगी है।

निलु ने हाथ नचाकर कहा — जाकर दीदी से मांगो न।

ना दीदी, तुम दे दो चलकर। बड़ी दीदी अभी डांटना शुरू कर देंगी। हजार कैफियत देनी पड़ेंगी — जेल क्यों गया था? क्या किया था? क्या-क्या लूटा था, डाका क्यों डाला था? खाने को नहीं मिलता, इसलिए चोरी करता हूं, डाका डालता हूं। खाने पहनने को मिलता तो यह सब क्यों करता। गांव में आकर देख रहा हूं कि चावल दस पैसे पंसेरी हो गया है। इससे तो जेल में ही कुछ दिन और रहता तो अच्छा था। इतना महंगा चावल कैसे खाऊंगा और कैसे बच्चों को खिलाऊंगा? क्यों बाबा, आपका क्या कहना है?

संन्यासी बोले — जो ठीक समझो करो। बस आदमी की जान मत लो। खून करना ठीक नहीं है।

अब तक हला चुपचाप सुन रहा था। खून की बात सुनते ही थोड़ा उत्तेजित हो गया। अनेकों जानें ली थीं उसने। हाथ जोड़कर बोला बुरा मत मानियेगा महारज। एक बात कहता हूं। एक बार पानचिते गांव के प्रधान के यहां डाका डालने गया था मैं। जीने से ऊपर चढ़ने लगा तो छोटे प्रधान ने रोका मुझे। उसके हाथ में भाला था। लाठी घुमाकर ऐसे मारी मैंने कि भाला उसके हाथ से छिटककर दूर जा पड़ा.... मेरे सामने जरा सा लौंडा हथियार उठाने चला था। फिर वह ईंट उठाकर मारने दौड़ा। मैंने कहा — मुझसे मत उलझो, परे हट जाओ। पर उसकी तो मौत आ गयी थी। सुनता कैसे? एक बुरी गाली दी उसने और बस मैंने जो लाठी का वार किया तो सिर फट गया। औंधे मुंह सीढ़ियों से लुढ़कता हुआ नीचे जा पड़ा।

संन्यासी ने पूछा— फिर?

—फिर? सुनिये क्या हुआ। बड़े प्रधान के लड़के की अत्यंत सुंदरी बहू, जो ज्यादा से ज्यादा अठारह-बीस की होगी, बाल खोले, लंबा बरछा लिए साक्षात् काली बनी सबसे ऊपर वाली सीढ़ी पर आ खड़ी हुई। आंखों से आग के पतंगे निकल रहे थे। सच कह रहा हूं महाराज, बहुत औरतें देखी हैं, पर वैसा रूप कभी नहीं देखा। बरछा ऐसे चला रही थी जैसे मां के पेट से सीख कर आयी हो। मन ही मन कहा मैंने — शाबाश मां, बलिहारी है! मां का दूध पिया है तुमने!

— फिर? फिर क्या हुआ?

अत्यंत उत्तेजित होकर चैतन्य भारती धूनी के सामने एकदम सीधे होकर बैठ गए।

—एक बार तो सोचा, जो भी तकदीर में होगा हो, लड़कर देखा जाये। फिर सोचा, नहीं पीछे हट जाना चाहिए। जैसे ही पीछे हटा, वीरो हाड़ि बोला...

तत्क्षण दांतों से जीभ काटकर बोला — यह देखिये दल के आदमी का नाम मुंह से निकल गया। यह बात कोई नहीं जानता कि वह भी हमारे दल में शामिल था। खैर, आप लोग तो यह बात नील कोठी के साहब को बताने जा नहीं रहे, इसलिए कोई हर्ज नहीं।

चैतन्य भारती ने पूछा — क्यों नील कोठी का साहब क्या करेगा?

—यह भी नहीं पता महाराज? यहां के सारे मामले मुकदमे तो कोठी के साहब लोग ही करते हैं। मुझे और अघोर को सजा बड़े साहब ने ही तो दी थी। उसके आगे सुनिए। वीरो हाड़ि एकदम से आगे बढ़कर बोला, डूब मरो सालो! औरत से हार जाये वह भी कोई मरद है? मैंने घूमकर कहा था कि अगर तूने औरत पर हाथ उठाया तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा, मैं देख लूंगा। तभी "बाप रे" कहकर वीरो सीढ़ी से नीचे चित आ पड़ा और दोनों हाथों को पेट से लगाए रस्सी की तरह कुछ खींचने लगा था। मेरी समझ में नहीं आया कि क्या खींच रहा था वह। पास जाकर देखा उसका पेट फट गया था और अंदर से आंतें निकल कर रस्सी की तरह बरछे की नोक में फंसकर ऊपर चली गयी थीं। ऊपर से बहू जैसे-जैसे बरछा खींचती, वीरो दर्द से चीख उठता। पल भर की देर किए बिना मैंने लाठी के एक झटके से आंतों के दो टुकड़े कर दिये और वीरो को गोद में उठाकर बाहर ले आया। सोचा मरते समय मुंह में दो चुल्लू पानी डाल दूं, पर कहां से लाता। वीरो छटपटा रहा था, पर जान नहीं निकल रही थी उसकी। शायद पानी मांग रहा था। उधर लोगों के आ जाने का डर खाये जा रहा था मुझे। किसी तरह गोद में उठाये घर के पीछे पोखर तक पहुंचा, खून से धरती लाल हुई जा रही थी। जब देखा कि और दूर नहीं जा सकता तो बेमो मोची से कटार मांगकर एक झटके में उसका सिर काटकर धड़ पोखर में फेंक दिया और सिर साथ ले आया, जिससे कि लाश की शिनाख्त न हो सके। आज भी ऐसा लगता है कि वीरो की खुली आंखें मुझे देख रही हैं और कुछ कहना चाहती हैं।

—फिर उस बहू का क्या हुआ?

—कुछ मालूम नहीं। पर दो महीने बाद फकीर का भेस धरकर उसे देखने गया था। दरवाजे पर जाकर जैसे ही भिक्षा देने के लिए गुहार लगायी, वह बाहर भीख देने को निकल आयी। देखा तो देखता ही रह गया मैं। मानों साक्षात जगद्धात्री हो। झोली में भिक्षा लेने के बाद साष्टांग प्रणाम करने को जी चाहा था, लेकिन कहीं संदेह न हो जाये, यह सोचकर हाथ उठाकर सलाम कहकर चला आया।

निलु जो काठ बनी इतनी देर से सब सुन रही थी बोली— वह जब मर गया है तो दल के आदमी का नाम मुंह से निकल जाने के लिए तुमने जीभ क्यों काटी? वह कैसे मरा, यह तो कोई जानता नहीं।

—तुम नहीं जानतीं दीदीमणि। पता चलते ही नीलकोठी के लोग जाकर उसके

लड़कों को हैरान करेंगे। इस घटना को छह सात साल हो गए। लोग तो यह जानते हैं कि वीरो हाड़ि एक और ब्याह करके गंगा किनारे बस गया है। असल में मेरे ही दल के लोगों ने गांव में यह खबर फैला दी थी। उसके दोनों लड़के जवान हो गये हैं, खेत जोत सकते हैं। बड़ा लड़का तो बाप जैसा ही हट्टा-कट्टा होगा।

—उस बहू को फिर नहीं देखा?

—नहीं। उसके बाद ही दो साल की कैद हो गयी थी। पर वह दूसरे मामले में हुई थी। इस डकैती का अभी मामला नहीं निपटा।

चैतन्य भारती बोले— तुम्हारे मुंह से यह कहानी सुनकर मेरा मन भी उस बहू को देखने का कर रहा है। क्या जात बतायी तुमने?

—सद्गोप।

—मैं जाऊंगा वहां। शक्तिशाली औरतें सचमुच जगद्धात्री का अवतार होती हैं। तुमने ठीक ही कहा है।

—महाराज, लगता है आप इधर पहले कभी नहीं आये। ऐसी औरतें यहां और भी हैं। पर भद्र घरों में उस बहू के अलावा दूसरी नहीं देखी मैंने। बाग्दी, कहार, मोची व चांडालों में तो ऐसी बहुत मिल जायेंगी जो बरछा, भाला, कटार बगैरह चलाना जानती हैं।

निलु बोली — हां, मुझे मालूम है। उस बार नीलकोठी के दंगे में भैया ने अपनी आंखों से झोंपड़ियों में से दो कहारनों को तीर चलाते देखा था। उनके तीरों के सामने नीलकोठी के बरकदांज भी नहीं ठहर पाये थे।

—बड़ी खुशी हुई, यह सुनकर बहन। इन औरतों का साक्षात् हो जाये तो ब्रह्मदर्शन का आनंद प्राप्त हो। जय मां जगदंबा।

गडुवा हाथ में लिए भवानी कहीं से आ रहे थे। गुरुभाई के अंतिम शब्द कानों में पड़े तो वहीं से बोले— अरे, यह क्या माया! सीधे मां जगदंबा! वेदांती ज्ञानी के ज्ञान का क्या हुआ!

—अरे भाई, नित्य से लीला पर आते ही मां और बाप ही तो हैं। मां का नाम लेने से कौन सा अपराध हो गया। उस दिन कहा तो था तुमसे कि वेदांत इतना आसान नहीं है। अद्वैत वेदांत समझने में बहुत दिन लगेंगे। हां, जीव गोस्वामी का वेदांत अवश्य थोड़ा सहज है।

—अच्छा, यह बात छोड़ो। यह बताओ कि किस बात को लेकर बातचीत हो रही थी?

—लीला की बात पर। इस देश की औरतों की शक्ति के बारे में बात हो रही थी। सब मां की लीला ही तो है।

निलु बोली— बिल्कुल ठीक है... बड़ी दीदी ढाल और लाठी चलाने में बहुत उस्ताद हैं। एक बार नील कोठी के लठैत अकबर अली के साथ लड़ी थी वह। बहुत कोशिश की थी अकबर अली ने, पर एक लाठी भी बदन पर नहीं लगा पाया था। बदन में

ताकत भी है बहुत। पानी के दो बड़े-बड़े घड़े बगल और सर पर ले आती हैं। अभी भी।

हला और अघोर को साथ लेकर भवानी घर पहुंचे और हांक लगायी — तिलु... ओ तिलु, कहां हो? आकर देखो...

तिलु मुन्ने को दूध पिला रही थी। जरा देर बाद मुन्ने को गोद में लिए बाहर आकर बोली — बाप रे, इन डाकुओं को मेरे घर क्यों ले आये?

हला बोला — दीदीमणि, पेट की ज्वाला के कारण आया हूं। खाने को दे दो, नहीं तो लूट हो जायेगी।

तिलु ने हंसकर कहा — मैं लाठी चलाना जानती हूं।

—यह तो मालूम है मुझे।

—तो निकालूं लाठी और ढाल?

अघोर बोला — सच, अभी भी हाथ जमा हुआ है?

—खेलोगे एक दिन? रथतला के उस अखाड़े की याद है? कितनी उमर थी मेरा... ज्यादा से ज्यादा सत्रह-अठारह रही होगी।

—ओह, जमाने बीत गए उस बात को। उन दिनों क्या जमता था खेल। खूब याद है।

—बैठो, अभी आयी मैं।

जरा देर बाद दोनों हाथों में दो बड़े-बड़े पके कटहल लेकर डंठलों से पकड़े आयी तिलु और उनके सामने रखकर बोली— खाओ।

हला बोला— किस पेड़ के हैं दीदी?

—मालसी के।

—कड़े हैं या रस वाले?

—रसवाले? इस मौसम में कटहल कहीं रसवाले रहते हैं?

अघोर ने दस-बारह मिनट में अपना कटहल खतम करके हला की ओर देखकर कहा — क्यों उस्ताद, अभी खतम नहीं हुआ?

हला बोला — कल रात खासी का दो सेर मांस खा लिया था। इसलिए उतनी भूख नहीं है।

तिलु बोली — ऐसा नहीं हो सकता भैया। झूठा नहीं छोड़ोगे। सारा खाना पड़ेगा। अघोर भैया, एक और लाऊं? पर इस पेड़ का नहीं है अब। जरा ज्यादा कड़े होंगे।

—ले आओ एक छोटा सा।

हला बोला — खा ले अघरा, आजकल ऐसा कटहल बाजार में एक आने से कम का नहीं मिलता। मैं तो एक से ज्यादा खा नहीं पाऊंगा। फिर उम्र भी तो तुझसे ज्यादा है। दीदीमणि, लाओ अब थोड़ा गुड़ और पानी दे दो।

तिलु बोली — तो फिर शागिर्द से हार गये भैया। गुड़-पानी क्यों, दो पके नारियल देती हूं, दोनों जने तोड़कर गुड़ के साथ खा लो। पर गुड़ ज्यादा नहीं दे

पाऊंगी। गुड़ खतम हो रहा है। दस भेली खरीदा था, दो रह गयी हैं बस। वे बहुत गुड़ खाते हैं।

हंसी खुशी में दिन बीत गया।

जाते समय हला और अघोर चैतन्य भारती को पुनः साष्टांग प्रणाम करके गये।

भवानी रोज संध्या को तिलु को लेकर नदी में नहाने जाते थे। उस दिन भी गये। इछामती के निर्जन स्थानों में सरकंडों की घनी झाड़ियों के बीच मछुआरे मोती ढूंढ़ते थे। कभी-कभी बड़े कीमती मोती मिल जाते थे उन्हें। पिछली सर्दियों में उन्होंने झाड़ियां काटकर अपने लिए जो पकडंडी बनायी थी, उसी के नीचे बबूल, गूलर आदि पेड़ों के नीचे दोनों ने अपने लिए एक घाट बना लिया था। किनारे की ऊंची जमीन से कोई भी उन्हें देख नहीं पाता।

पानी में उतरकर भवानी बोले — चलो तैरकर उस पार चलें।

तिलु बोली — चलिए, उस पार के खेत से परवल ले आयेंगे।

—छिः, चोरी। तुम भी गंवार ही रही, यह भी नहीं जानतीं कि यह चोरी है?

—आप भी क्या बातें करते हैं। हम लोग तो हमेशा लाते थे।

—तैरोगी?

—चलिए। गो-घाट की तरफ जायेंगे? मैदान वाले बड़े पीपल की तरफ?

तिलु बहुत अच्छी तैराक थी। दोनों अगल-बगल पानी के अंदर ही अंदर तैरते हुए आगे बढ़ने लगे।

अचानक तिलु के कानों में पति की आवाज आयी — तिलु, ओ तिलु।

रुकी तो देखा पति पीछे रह गये थे। पलटकर पास आकर बोली — क्या हुआ? रुक क्यों गये?

दोनों हाथ ऊपर उठाकर असहाय भवानी ने डुबकी खाकर कहा — तुम भागो तिलु। मुझे मगरमच्छ ने पकड़ लिया है... भागो तिलु! मु...न्रे...को देखना!...मु...न्रा...

तिलु के बदन में भय से सिहरन दौड़ गयी। बरसात की संध्या का काला पानी क्या उसके प्रियतम के रक्त से लाल हो जायेगा? क्या इतनी जल्दी जीवन की सारी खुशियां शेष हो जायेंगी?

पलक झपकते बिना कुछ सोचे-समझे तिलु डुबकी लगाकर पानी के नीचे चली गयी। बस एक ही ख्याल था — या तो पति का पैर मगरमच्छ के मुंह से छुड़ा लेगी या स्वयं भी उसका आहार बन जायेगी। नीचे पहुंचते ही स्वच्छ पानी में दिखायी दिया कि सेमल के पेड़ का एक बहुत बड़ा तना आड़ा पड़ा था और उसी की डालियों के कांटों में पति की धोती बुरी तरह फंस गयी थी। हाथ के झटकों से खींच-खींच कर थोड़ी धोती फाड़कर छुड़ायी उसने। फिर सांस लेने को ऊपर आयी और पति से बोली — डरो मत, सेमल के कांटों में धोती फंस गयी है, अभी छुड़ाये देती हूं।

जरा दम लेकर फिर नीचे गयी तिलु और थोड़ी धोती छुड़ायी। इस प्रकार तीन-चार डुबकियां लगाकर पति को मुक्त करके अवसन्न प्रायः अवस्था में कठोर हाथ से पकड़कर किनारे पर ले आयी।

गहरी सांस छोड़कर हांफते-हांफते भवानी बोले — बाप रे! उफ!

तिलु की भी साड़ी ढीली हो गयी थी, बाल खुल गये थे। वह भी बुरी तरह हांफ रही थी। कपड़े ठीक करके, बालों का जूड़ा बांधते हुए पति की ओर देखकर बोली — बाप रे, आपने तो मेरी जान ही निकाल ली थी आज! बहुत तैरना हो गया, अब घर चलिए।

--वह तो तुमने डुबकी लगाकर देख लिया। नहीं तो किसे मालूम था कि पानी के नीचे सेमल का तना पड़ा है। मैंने तो मगरमच्छ सोचकर हाथ-पैर छोड़ दिये थे।

अंधकारमय निर्जन पथ से दोनों घर वापस लौट आये।

तिलु के मन में बार-बार एक ही बात चक्कर काट रही थी कि अगर पति को सचमुच कुछ हो जाता तो क्या होता? वह जीवित रह पाती क्या?

नील कोठी के बड़े साहब का बुलावा मिलते ही दीवान राजाराम दौड़े हुए गये और हाथ जोड़कर खड़े हो गये।

लकड़ी का पाइप पीते हुए बड़े साहब ने कहा— टुमारा काम ठीक नहीं हो रहा।

—क्यों हुजूर?

—इस बार नील की खेती का इटना लो फिगर कैसे आया? कम कैसे हुआ?

--हुजूर, माफ करें तो सच बात कहूं। रहातनपुर की उस घटना के बाद...

आचानक जेन विल्स शिप्टन ने टेबिल पर जोर से घूंसा मारकर कहा — वह सब सुनना नहीं चाहता मैं... आइ डोंट विश यू स्पिन दैट रिगमैरोल ओवर हियर अगेन — मुझे काम चाहिए, काम। इस साल दो सो बीघा जमीन पर नील बोना होगा। समझे? बेकार की बात नहीं सुनना चाहता मैं।

—हुजूर।

—मिस्टर डन्किन्सन की बदली हो गयी है। नया मजिस्ट्रेट आया है। यह हमारा आदमी है। नील का दादन इस साल ब्रिस्कलि शुरू करना होगा, फिगर चाहिए मुझे, फिगर। दादन का खाता रोज दिखाना मुझे।

—हुजूर।

उसी समय साहब की काफी लेकर श्रीराम मोची कमरे में आया। उसे देखकर राजाराम बोले— हुजूर, आप इससे पूछ लीजिए। इन लोगों के चरपाड़ा गांव के मोचीपाड़ा के लोग कैसी भी नील नहीं बोने देते। पूछ लीजिए इससे...

साहब ने श्रीराम से पूछा — क्यों, क्या बात है?

श्रीराम साहब का मुंहलगा खानसामा था, इसलिए औरों की तरह डरता नहीं था।

बोला — बात तो ठीक है।

—क्या ठीक है?

—गलु और हंस ने दल बना लिया है हुजूर कि नील के लिए जमीन पर निशान नहीं लगाने देंगे।

गुस्से से मुंह और लाल हो गया शिप्टन का। खा जाने वाली नजरों से राजाराम की ओर देखकर बोले — यू आर नो... मोचीपाड़ा की सारी जमीन पर निशान लगाओ... टुडे... आज ही। मैं घोड़े पर चढ़कर देखने आऊंगा। श्यामचांद भूल गये? रामू मोची लीडर बन गया है... सीधा कर दो उसे।

तभी श्रीराम हाथ जोड़कर बोला — साहब, मेरी तीन बीघा जमीन में रबी की मसूर लगी हुई है। दीवान जी उस पर निशान न लगाएं। मैं रामू सरदार के घर न तो गया और ना ही उसका दिया खाता हूं।

—अच्छा, ग्रांटेड, मंजूर किया। डीवान, इसकी जमीन छोड़ देना। राजाराम बोले — जैसा हुजूर का हुकुम।

—अच्छा जाओ।... डेविल आफ ऐन अमीन शुड गो विद यू.... प्रसन्न अमीन टुमारा साथ जायेगा, हरीश अमीन नहीं।

—हुजूर का जैसा हुकुम।

प्रसन्न चक्रवर्ती अपने कमरे में भात रांध रहे थे। दीवान राजाराम को देखते ही हड़ाबड़ाकर उठ खड़े हुए। तकदीर अच्छी थी कि नबू गाजी जो कुछ देर पहले अपने दल-बल के साथ इस साल उनके गांव में नील के निशान कम लगाने का अनुराध करने आया था, चला गया था।

खाली हाथ भी नहीं आये थे वह लोग।

जरा देर और बैठ जाते तो पकड़े जाते प्रसन्न। राजाराम ताड़ जाते। उनकी नजरों से कुछ भी छुपा नहीं रहता।

—आइए। जी हां।

—जल्दी चलो चकत्ति, आज मोचियों का सफाया करके आना है। बड़े साहब आग बबूला हो रहे हैं। मुझे बुलवाया था।

—एक बात कहूं? नाराज तो नहीं होंगे?

—नहीं। बोलो, क्या बात है?

—निशान लग गये हैं।

—क्या?

हाथ धोकर प्रसन्न चक्रवर्ती ने गमछे से पोंछे और कमरे के कोने में रखा टीन की छोटी पेटी खोलकर निशान लगाने का नक्शा एवं बही निकालकर दिखाते हुए कहा — सात जरीब यह, दो यह और डेढ़ यह... सब मिलाकर तीस बीघे और सात कट्ठा हुई।

प्रशंसनीय दृष्टि से उसकी ओर देखकर राजाराम ने कहा — अरे वाह, कब किया?

—रविवार को आधी रात के बाद।

—साथ में कौन था?

—मरीम लठैत और मैं। पिनमैन सयाराम बोष्टम था।

—रिपोर्ट क्यों नहीं की? यह बात बातें पहले से बतायी जाती हैं। पहले बताया होता तो बड़े साहब के सामने मेरा मुंह शर्म से नहीं झुकता। चलो खैर....

—बुरा मत मानिये दीवानजी। सही बात तो यह है कि भरोसा नहीं हुआ इसलिए चुप रह गया। रहातुनपुर के उस मामले के बाद और कुछ...

—उसका डर नहीं रहा अब। मजिस्ट्रेट बदल गया है, बड़े साहब ने खुद बताया है मुझे।

प्रसन्न चक्रवर्ती वाली बात राजाराम ने साहब को नहीं बतायी।

जो काम प्रसन्न अमीन अकेले कर आये थे, उसमें दीवान राजाराम अपना भी हिस्सा बताना चाहते थे। रिपोर्ट में सेहरा अपने सिर बांधकर अमीन का पत्ता ही साफ कर दिया।

लेकिन एक दिन सुबह-सुबह चरपाड़ा में गड़बड़ शुरू हो गयी।

दीवान जी का वही दूर के रिश्ते का भतीजा रामकांत राय, जो भवानी के लड़के के अन्नप्राशन के दिन इंजिन की गाड़ी और जहाज की बात कर रहा था, उनसे मिलने नील कोठी आया। तभी पायक ने आकर खबर दी कि चरपाड़ा के लोगों ने नील के निशान मिटा दिये।

राजाराम तत्क्षण घोड़े पर बैठकर चरपाडा भागे। वहां एक वटवृक्ष के नीचे बैठकर एक-एक करके सारे मोचियों को बुलाया और जबर्दस्ती हर एक से पहले से भी ज्यादा जमीन पर नील बोने के दस्तखत करा लिए। किसी की एक नहीं सुनी।

फिर रामू सरदार से बोले — इस बार पांचपोता के बांओड़ में बंद बांधा था तुमने?

—जी राय मोशाय। हर साल मैं ही बांधता हूं।

—हूं।

रामू सरदार का दिल दहल गया। दीवान जी को अच्छी तरह जानता था वह। घोड़े पर बैठने लगे तो बोला — मेरा क्या अपराध है? अगर किसी ने झूठा सच्चा कहा हो तो मेरा कुसूर मत समझिये।

बिना कुछ कहे घोड़े पर बैठकर एड़ लगायी दीवान जी ने और आंखों से ओझल हो गये।

सूरज के पश्चिम में चले जाने के बाद पांचपोता के बांओड़ के बंद पर रामू सरदार चार पांच किसानों और मछुआरों के साथ बैठा बतिया रहा था कि तभी न जाने कहां से आठ-दस आदमी आकर इसका बंद तोड़ने लगे।

झटपट खड़े होकर रामू सरदार चिल्लाया — कौन है? कौन माई का लाल बंद को हाथ लगा रहा है?

करीम लठैत ने आगे बढ़कर कहा — तेरा बाप।

—तो... फिर...

रामू सरदार बाग्दी पाड़ा का प्रधान था। कमजोर आदमी नहीं था वह, लाठी उठाकर जैसे ही आगे बढ़ा करीम की लाठी सिर पर घूमी। रामू के छिटककर एक ओर होते ही करीम हुंकारा — लो संभलो!

लाठियां बजने लगीं। दोनों एक-दूसरे पर वार के लिए मौका देख रहे थे। सहसा विजय गर्व से मस्त करीम कटे पेड़ सा बंद के जाल की खूंटी के पास औंधे मुंह गिरा। पर रामू भी अपने को संभाल नहीं पाया और ठोकर खाकर गिर पड़ा। गिरते ही करीम के साथियों ने दनादन लाठियां चलानी शुरू कर दी और तब तक चलाते रहे, जब तक उसके प्राण नहीं निकल गये। खून से सारी जगह लाल हो गयी।

अगले दिन वहां बंद का नामोनिशान नहीं था। बांस उखाड़ कर करीम के साथी अपने साथ ले गये थे।

इसी बंद के एकदम पास एक खजूर के पेड़ के नीचे कविराज रामकनाई चक्रवर्ती अकेले रहते थे। अत्यंत दरिद्र थे वह। जब तक अमलतास फूलता, उसके फूलों की तरकारी और भात, यही उनका दैनिक आहार होता। अच्छे वैद्य थे, परंतु गांव में कोई पैसे नहीं देता था, खाने के लिए धान दे देते थे। वह भी अगर इलाज सावन में कराते तो अगहन के शुरू में फसल कटने पर खुद ही घर-घर जाकर इकट्ठा करना पड़ता था।

अपनी झोंपड़ी में बैठे रामकनाई दाशु राय की "पांचाली" पढ़ रहे थे कि हो-हल्ला सुनकर किताब बंद करके बाहर निकल आए। थोड़ा आगे आए तो नील कोठी के लठैतों को बंद के बांस खोलते देखा। जरा देर बाद ही किसी को कहते सुना कि खून हो गया। वहां से अपनी झोंपड़ी की तरफ लौट रहे थे कि बगल से हारू और मंसूर मछुआरे दौड़ते हुए निकल गए।

उन्होंने आवाज लगायी — ओ हारू, ओ मंसूर, क्या हुआ? बताओ न क्या हुआ?

पीछे-पीछे हजरत भागा आ रहा था। बोला — कौन ? कविराज मोशाय? उधर मत जाइयेगा। नील कोठी के लठैतों ने रामू बागदी को मार दिया है और बंद लूट रहे हैं।

डर के मारे रामकनाई ने जल्दी से घर में घुसकर दरवाजा बंद कर लिया।

इसको लेकर बहुत ही आश्चर्यजनक बात हो गयी, जो उस खून से भी बड़ी थी।

अगले दिन सुबह चारों ओर आग की तरह खबर फैल गयी कि नील कोठी के आदमियों ने पांच पोता का बंद तोड़ दिया और रामू सरदार का खून कर दिया। झुंड बनाकर लोग देखने आने लगे। बहुत से लोग कहने लगे कि जल कर लेने के लिए नील कोठी के साहब ने ऐसा किया है।

कई आदमी राजाराम के घर भी गये। सुनकर राजाराम ने आश्चर्यचकित स्वर में कहा — खून? गलत बात है। हमारी कोठी के किसी आदमी ने नहीं किया। बाहर का आदमी होगा। रामू बागदी नंबरी बदमाश था, उसके दुश्मनों की कमी थोड़े ही थी! तुम लोगों

को बस जो कुछ भी हो नील कोठी के मत्थे मढ़ने की आदत हो गयी है। खून किया किसी ने और नाम नील कोठी के आदमी का हो गया।

बड़े साहब ने राजाराम को बुलाकर पूछा — यह खून की बात क्या सुन रहा हूं मैं? किसने किया खून?

राजाराम बोले — हमारे आदमी ने नहीं किया हुजूर। उसके यानी रामू बाग्दी के बहुत दुश्मन थे। हमें क्या पता किसने खून किया?

—हमारे लठैत गए थे कि नहीं?

—नहीं हुजूर।

—पुलिस के सामने यह बात प्रमाणित करनी पड़ेगी।

फिर छोटे साहब से बोले — आइ थिंक दैट मैन हैज ओवर शॉट हिज मार्क दिस टाइम। आई डोंट ऐप्रिसियेट दिस मर्डर बिजनेस, यू सी? टू मच आफ ए ट्रबल... व्हेन आइ एम द इंक्वायरिंग मजिस्ट्रेट।

—आइ आर्डर्ड ओनली द फिश बैंड टू बी स्वेप्ट अवे, सर।

—आइ नो, गेट रेडी फार द ट्रबल दिस टाइम।

पुलिस तहकीकात से पहले राजाराम ने कविराज रामकनाई को अपने घर बुलवाकर कहा— आपको यह कहना पड़ेगा कि आपने बूनोपाड़ा के आदमियों को रामू का खून करते देखा है।

कविराज बोले — सफेद झूठ कैसे बोल सकता हूं राय मोशाय?

—कहना पड़ेगा। ज्यादा बक-बक मत करिये। जैसा कहा जा रहा है, कहियेगा।

—जी, यह तो आपने बड़ी मुश्किल में डाल दिया राय मोशाय।

—कोठी की तरफ से आपको चांदी का जूता पहनाया जायेगा।

—राम-राम! ऐसी बात मत कहिये। पैसे लेकर ऐसा काम नहीं करूंगा।

पुलिस की तहकीकात के वक्त रामकनाई बुलाए गए। दरोगा ने नील कोठी का बहुत नमक खाया था, उसने रामकनाई से अनुकूल गवाही लेने की बहुत कोशिश की। पर वह थे कि एक ही बात पर अड़े हुए थे कि उन्होंने बंद से नील कोठी के लठैतों को भागते देखा था। रामू की लाश भी देखी थी, लेकिन यह नहीं देखा कि उसे किसने मारा।

दरोगा बोला — आपको पता है कि बूनोपाड़ा वालों से उसका झगड़ा था?

—नहीं दरोगा मोशाय।

—बूनोपाड़ा के किसी आदमी को वहां देखा था?

—नहीं।

—ठीक से याद करिये।

—नहीं दरोगा मोशाय।

जाते समय दरोगा राजाराम को बुलाकर कह गया — दीवान जी, बुड्ढा कविराज बड़ा धूर्त्त है। उसको वश में करना पड़ेगा। खुश करिये उसे।

रामकनाई को नील कोठी ले जाया गया। प्रसन्न अमीन ने कहा — कविराज मोशाय, बड़े साहब बहादुर ने कहा है आपको खुश कर देंगे। बहुत खुश हैं आप से। बस मुंह से कह दीजिए क्या चाहिए आपको।

—मैं क्या चाहता अमीन मोशाय? गरीब बामन हूं। जो खुशी हो दे दें।

—तब भी बताइये तो... याने रुपया पैसा चाहिए या धान...

—हां, धान मिल जाए तो अच्छा है।

—ठीक है, मैं दीवान जी से यही कहे देता हूं।

इसके बाद उन्हें छोटे साहब के खास कमरे में ले जाया गया। बेचारे दरिद्र ब्राह्मण थे, साहब जैसे बड़े आदमियों के नजदीक कभी नहीं आये थे। छोटे साहब पाइप मुंह में दबाये कुर्सी पर बैठे थे। रामकनाई सामने खड़े थर-थर कांपने लगे। तेज स्वर में साहब बोले — इधर आओ...

दो कदम आगे बढ़े रामकनाई और हाथ जोड़ दिये।

—क्या करते हो?

—जी, इलाज करता हूं।

—ठीक है। कोठी में करोगे?

—जी, किसका इलाज?

—हम लोगों का।

—यह तो आपकी इच्छा पर है। आप जैसा कहेंगे, करूंगा।

—जो कहेंगे, करोगे?

—जी क्यों नहीं करूंगा?

—तो तुम्हें दस रुपये महीना मिलेंगे।

रामकनाई को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। दस रुपये। महीने में दस रुपये तो दीवान जैसे बड़े आदमी को मिलते हैं। आज अचानक ये लोग इतने प्रसन्न क्यों हो गये?

आश्चर्यमिश्रित स्वर में बोले — दस रुपये साहब मोशाय?

—हां, दस रुपये मिलेंगे।

फिर राजाराम को बुलाकर छोटे साहब ने कहा — इस आदमी के साथ लिखा-पढ़ी कर लो। इसे कोठी के लोगों का इलाज करने के लिए कोठी के कैश से दस रुपये महीने दिये जायेंगे। एक महीने का अग्रिम अभी दे दो।

—अच्छा हुजूर।

अगले दिन रामकनाई को फिर कोठी बुलवाया गया। पहले दिन शाम को वह दस रुपये लेकर मुदित मन चले आये थे। फिर आज क्यों बुलावा आ गया? खैर दीवान जी के दफ्तर में पहुंचे तो वह बोले — तो फिर अब आप हमारे आदमी हो गये?

विनीत भाव से रामकनाई बोले — उनकी कृपा है।

—नहीं नहीं, वह बात नहीं है। आप अच्छे वैद्य हैं और हमें भी जरूरत है। दस रुपये मिल गये?

—जी, मिल गये।

—वह सब तो हो गया, अब एक बात सुन लीजिए। नील कोठी का नमक खाया है आपने, अब उसका गुणगान करना पड़ेगा।

—जी, बड़े साहब, छोटे साहब और दीवान जी के गुण हमेशा गाऊंगा। गरीब ब्राह्मण का इतना बड़ा उपकार किया है आप लोगों ने...

—वह बात छोड़िये। उस खून के मुकदमे में आपको हमारे पक्ष में गवाही देनी पड़ेगी। हम लोगों पर यह उपकार करिये आप।

आसमान से गिरे रामकनाई। बोले — यह क्या? वह मामला तो खतम हो गया था। जो कहना था पुलिसवालों के सामने कह दिया था, फिर क्यों?

अदालत में कहना पड़ेगा। आप हमारे गवाह बनोगे। बूनोपाड़ा के भंते बूनो, नेंगटा बूनो, श्रीकृष्ट बूनो और पतिराम बूनो को आपने लाठी लिये भागते देखा था।

—पर यह तो नहीं देखा था दीवान मोशाय?

—नहीं देखा तो न सही। बेवकूफों जैसी बात मत करिये। आपको नील कोठी का वेतनभक्त कविराज बनाया गया है। साहब और मेमों का इलाज करके जो बख्शीश मिलेगी वह अलग। कल आपको एक कमरा भी दे दिया जायेगा, बड़े साहब ने कहा है। आप तो हमारे अपने आदमी हो गये अब। हमारे पक्ष में बस वही एक बात कहनी है आपको कि अमुक-अमुक बूनों को भागते देखा था आपने।

म्लान मुख रामकनाई बोले — वो... वो...

—वो-वो कुछ नहीं। जो कहा है कहना पड़ेगा आपको। क्या चाहिये आपको? बड़े साहब की कृपा हो गयी है आप पर। जो भी मागेंगे, मिल जायेगा। उन्नति हो जायेगी। अच्छा अब जाइये। कोठी का घोड़ा दे देता, पर आपको तो चढ़ना नहीं आता। बैलगाड़ी से जायेंगे?

हाथ जोड़कर अत्यंत विनीत भाव से रामकनाई ने कहा — दीवान मोशाय, बहुत गरीब आदमी हूं मैं। मुझे मुश्किल में मत डालिये। सुना है अदालत में खड़े होकर हलफ उठाकर गवाही देनी पड़ती है। जी, मैं वहां झूठ नहीं बोल पाऊंगा। मुझे माफ करिये दीवान मोशाय। मेरे पिता तीनों वक्त संध्या किये बिना पानी भी नहीं पीते थे। कभी किसी ने उन्हें झूठ बोलते नहीं सुना। मैं वंश का कुल-कलंक हूं, वैद्यकी करके पैसा कमाता हूं। जानता हूं कि इलाज बिना पैसे लिए करना चाहिये। पर क्या करूं, इतना गरीब हूं कि किये बिना रह नहीं सकता। पर अदालत में खड़े होकर झूठ नहीं बोल पाऊंगा दीवान मोशाय।

गुस्से में बौखलाकर राजाराम बोले — बड़ा धूर्त है यह। आज रात भर इसे चूने के गोदाम में बंद रखो। और अगर तब भी सीधा न हो तो श्यामचांद है ही।

पायक नफर मोची पास जाकर कविराज से बोला — चलिए महाराज।—कहां ले जाओगो?

—सुना नहीं दीवान जी ने चूने के गोदाम में ले जाने को कहा है? आप ब्राह्मण देवता हैं, हाथ नहीं लगाऊंगा, पाप लगेगा। आप खुद चलिये।

—किस तरफ?

—मेरे पीछे-पीछे आइये।

कुछ दूर जाते ही राजाराम ने फिर पीछे से पुकारा — तो चूने के गोदाम में ही जाना तय किया? पर वहां नाक से रोयेंगे। भले आदमी के लड़के हैं आप, इसलिये कह रहा हूं।

—तो फिर मुझे वहां क्यों भेज रहे हैं दीवान मोशाय?

—मत भेजिये।

—मेरी तो भेजने की मर्जी नहीं है। पर क्या करूं, आप कोठी के नौकर होकर भी हम लोगों की इतनी सी बात मानने को तैयार नहीं हैं।

—ऐसी बात नहीं है, पर हलफ उठाकर झूठ नहीं बोल सकता। इससे आदमी का पतन होता है।

—तो फिर जाओ चूने के गोदाम में। जाओ नफर बंद कर आओ।

रात के दस बजे होंगे। राजाराम ने अकेले जाकर चूने के गोदाम का दरवाजा खोला। रामकनाई थककर सो गये थे। नील कोठी का चूने का गोदाम शयनकक्ष के हिसाब से आरामदायक स्थान नहीं था। "चूने के गोदाम" के साथ चूने का उतना सम्पर्क नहीं था, जितना विद्रोही प्रजा और किसानों का था। बड़े साहब एवं नील कोठी के स्वार्थ को लेकर विरोध करने वाले चूने के गोदाम में भेजे जाते थे। उस हवा रोशनी विहीन दीवार में ऊपर बने दो छोटे झरोखों वाले छोटे से कमरे में आदमी को तब तक बंद रखा जाता था, जब तक बड़े साहब, छोटे साहब अथवा दीवान जी चाहते। गोदाम के बाहर एक बहुत बड़ा सेमल का पेड़ था। एक बार रासमणिपुर के एक दुर्दमनीय आदमी के झरोखे से निकलकर सेमल की झुकी डाल पकड़कर नीचे कूदकर भाग जाने के कारण तत्कालीन बड़े साहब के आदेश से पेड़ काट दिया गया था। उससे पहले चूने के गोदाम में बंद एक आदमी भूत देखकर बेहोश हो गया था।

राजाराम भूत से जरा ज्यादा ही डरते थे। इसलिये इतनी रात को कभी अकेले वहां नहीं आते थे। आने के पहले उनका दिल जोर-जोर से धड़क रहा था, पर रामकनाई को देखकर थोड़ी हिम्मत बंधी। आवाज लगायी — कविराज मोशाय... ओ कविराज मोशाय...।

हड़बड़ाकर उठ बैठे रामकनाई। बोले — कौन है? ओ... दीवान मोशाय है।

आइये-आइये कहकर उनको बिठाने के लिये ऐसे परेशान हो उठे जैसे राजाराम ने उनके घर अतिथि रूप में पदार्पण किया हो।

राजाराम बोले— रहने दीजिये। आप परेशान मत होइये, मैं बैठने नहीं आया। चलिये मेरे साथ।

—कहां दीवान मोशाय?

—आप चलिये तो।

—चलिये। पर अब ऐसे कमरे में बंद मत करियेगा। बड़े मच्छर हैं। खा गये सारा बदन।

—आपके ग्रहों का फेर है। नहीं तो नील कोठी के कविराज होकर आज आपको यहां क्यों आना पड़ता। खैर ! जो होना था हो गया, अब चलिये मेरे साथ।

—कहीं भी ले चलिये, पर यह ख्याल रखियेगा कि मैं थोड़ा सो सकूं।

—अपना विचार बदल दिया?

—नहीं दीवान मोशाय, हाथ जोड़ता हूं, यह अनुरोध मत करिये मुझसे। मैं कविराज हूं, किसी को बीमार देखकर अपने आप जड़ी-बूटी लाकर गोली बना दूंगा, अपने हाथ से काढ़ा बना दूंगा, उस काम में कोई कमी नहीं मिलगी आपको। लेकिन यह मामले मुकदमे में मत लपेटिये मुझे। दुहाई है आपकी...

रामकनाई सरल व्यक्ति थे, नील कोठी के साहबों की करनी के बारे में कुछ नहीं जानते थे अथवा साहब लोगों के ये बंदीगण साहबों के हुकुम और इशारे पर बिना किसी दुविधा के चेहरे पर शिकन डाले बिना जिंदा आदमी को मारकर लाश किसी खोह खंदक में डाल सकते थे, यह भला उन्होंने चरक-सुश्रुत की किताब में पढ़ा होगा?

छोटे साहब एक लंबे बराड़े में बैठे नील के बंडलों का हिसाब कर रहे थे। यह सारे बंडल कलकत्ते की एमुटि कंपनी के बयाने के थे। जल्दी ही उनकी तरफ से हाउस मैनेजर राबर्ट्स साहब मुआयने के लिये आने वाले थे। पास ही प्रसन्न अमीन खड़ा था। प्रसन्न को नील की बहुत पहचान थी। प्रसन्न की बगल में जमानवीस कनाई गांगुली और पीछे भजा मोची खड़ा था।

दीवान को देखते ही छोटे साहब बोले— अरे आओ दीवान। बताओ तो तीन सौ तिरसठ नंबर अकाइपुर के नील के बंडल के साथ देडल, घोघा और सराबपुर का नील मिलेगा?

असल में यह लोग अच्छा बुरा मिला रहे थे। सारे खेतों का नील अच्छा नहीं होता था। नील पहचानने वाले देखते ही बता देते थे कि वह किस श्रेणी का नील था। कौन सा नील किसके साथ मिलाने पर कंपनी का दलाल माल छोड़ जायेगा।

दीवान ने कहा — बिल्कुल मिलेगा। इस साल कालीवर दलाल नहीं आयेगा। राबर्ट साहब इस बारे में बिल्कुल अनाड़ी हैं — घोघा और मुल्लाहाटि, पांचपोता का नील

मिला देने पर कोई पकड़ नहीं पायेगा। यह लीजिये हुजूर, अपने कविराज को ले आया।

रामकनाई की ओर देखकर छोटे साहब ने कहा — चूने का गोदाम कैसा लगा?

रामकनाई ने हाथ जोड़कर कहा — साहब मोशाय, नमस्कार।

—कैसी जगह है चूने का गोदाम?

राजाराम ने मुंह से हल्की सी सीटी बजाकर कहा — हुजूर आप पूछ रहे हैं कि चूने का गोदाम कैसी जगह है। पर कविराज क्या बतायेंगे? ये तो वहां आराम से सो रहे थे।

—क्यों? सो रहे थे? इसका मतलब है जगह बहुत आरामदायक लगी। कुछ दिन और रहना चाहोगे?

—जी? साहब मोशाय क्या कह रहे हैं, मैं समझ नहीं पाया।

—अच्छी तरह समझ रहे हो। एक नंबर के धूर्त्त हो तुम, बनने से जॉन डेविड छोड़ नहीं देगा तुम्हें। बोलो गवाही दोगे कि नहीं? अगर दोगे तो अभी तुम्हारे दस रुपये महीना और बढ़ा दूंगा। क्यों राजी हो? बस केवल इतना कहना है कि तुमने बूनोपाड़ा के श्रीकृष्ट बूने और दो चार दूसरे लोगों को लाठी लिए भागते देखा था। बोलो, राजी हो?

—जी साहब मोशाय?

—यह साहब मोशाय कहने से नहीं चलेगा। गवाही देनी पड़ेगी। दीवान इसे जून के महीने से बीस रुपये महीना दे देना।

राजाराम ने तुरंत स्वीकारा — जो आज्ञा हुजूर।

—ठीक है। ले जाओ। कविराज राजी है। प्रसन्न तुम अपने कमरे में कविराज के सोने का इंतजाम कर सकते हो?

तटस्थ बनकर तड़ाक से प्रसन्न ने कहा — हां हूजूर। मेरा बिस्तरा तो बिछा ही है, वह चाहें तो उसी पर सो सकते हैं।

रामकनाई का प्यास से गला सूख गया था, पर नील कोठी का पानी पी नहीं सकते थे। छुआछूत कोई मानता ही नहीं था वहां। सोचने लगे ब्राह्मण की जात भी नहीं बच सकती यहां। यहां नौकरी की तो पानी नहीं पियेंगे डाब पीकर रहना होगा।

प्रसन्न ने रामकनाई की ओर देखकर कहा — तो फिर चलिए कविराज मोशाय। रात हो गयी है।

राजाराम चुस्त आदमी थे। एकदम से बोले — तो कविराज मोशाय का गवाही देना तय रहा न?

रामकनाई ने दयनीय भाव से साहब की ओर देखा — बोले — साहब मोशाय, ऐसा कैसे कर सकता हूं? मैंने तो पहले ही दीवान मोशाय से कह दिया था।

छोटे साहब गुर्राये — तो तुम गवाही नहीं दोगे?

—नहीं साहब मोशाय। झूठ नहीं बोल पाऊंगा। दुहाई है आपकी। हाथ जोड़ता हूं आपके सामने। मेरे पिता ब्राह्मण पंडित थे।

—अच्छा, तो तुम ऐसे काबू में नहीं आओगे। भजा, नफर को बुलाना जरा, दस चाबुक लगा दे कसकर।

नफर मोजी लंबा चौड़ा जवान था। काला सियाह रंग था। जाने कितने आदमियों का खून कर चुका था। कोठी के बाहर के आसपास के सभी गांवों में लोग उससे डरते थे। वह शायद सो रहा था, भजा के पीछे आंखें मलता हुआ आया।

छोटे साहब ने रामकनाई की ओर देखकर कहा — क्यों? लगाये श्यामचांद?

—जी साहब मोशाय... तब तो मैं मर जाऊंगा। मुझे मारने को मत कहिये। आषाढ़ के महीने वात कफ के कारण शरीर बहुत दुर्बल हो जाता है।

—मर जाओगे, तो मुझे क्या फर्क पड़ेगा। ले जाओ नफर...

—जो आज्ञा हुजूर। बड़ी तत्परता से यह कहकर नफर ने रामकनाई का हाथ पकड़ा और खींचता हुआ ले चला। जाते-जाते दीवान जी से बोला —अस्तबल ही ले जाऊं न?

दीवान ने कहा — हां, वहीं ले जाओ।

रामकनाई बलि के बकरे की तरह नफर के साथ चल दिये। बड़े अबोध व्यक्ति थे, कानों से सुनने पर भी समझ नहीं पाये थे कि नफर के मजबूत हाथ की श्यामचांद से पीठ की चमड़ी फट जायेगी।

अस्तबल में खड़ा करके नफर ने क्षीण ज्योत्स्ना में उनकी ओर अच्छी तरह देखकर पूछा — कितनी खाओगे?

—मुझे मत मारो बेटा। वात कफ का मरीज हूं, मर जाऊंगा।

—मर जाओगे तो बांओड़ के पानी में डाल आऊंगा। उसकी चिंता नहीं करनी पड़ेगी। जाने कितने बहाये हैं इन हाथों से। पीछे घूमो।

मात्र दो चाबुक लगते ही रामकनाई धरती पर गिरकर छटपटाने लगे। नफर ने कहीं से एक मोटा बोरा लाकर उन पर डाल दिया। उसकी धूल मुंह में भर जाने से दांत किचकिचाने लगे। उधर नफर पीठ पर जोर-जोर से चाबुक मारता जा रहा था और मुंह से राम, दो, तीन, चार कहता जा रहा था...

दस चाबुक लगाकर नफर बोला — जाओ, बामन आदमी। साहब ने तो कह दिया, पर तुम दस श्यामचांद खाकर मर जाते। रात को यहां से हिलना मत। छोटे साहब आकर देख लें। तब तुम्हारे छुट्टी।

बाकी रात रामकनाई अस्तबल के फर्श पर मुर्दे की तरह पड़े रहे।

भवानी सुबह घर के सामने बकुल के पेड़ के नीचे चावल खरीदने के लिये खड़े थे। आज हाट का दिन था। निलु ने कह दिया था कि घर में चावल बिल्कुल नहीं हैं। तभी तिलु मुन्ने को उन्हें देने को ले आयी। भवानी बोले — अभी नहीं, मुझे जरा मामा के पास जाना है। जाओ, ले जाओ इसे।

तब तक मुन्ना पिता के पास जाने के लिए दोनों हाथ बढ़ाकर मां की गोद से उछलने लगा था। तिलु कसकर गोद में पकड़कर लौटने लगी तो उसने रोना शुरू कर दिया।

—अरे आओ, दे जाओ। अब थोड़े ही रहेगा। गोद में मुन्ने को लेते ही उसने एक हाथ रास्ते की ओर बढ़ा दिया। पिता के साथ घूमने जाना चाहता था।

भवानी बोले — नहीं, अभी तुम्हारा घूमने का वक्त नहीं है। शाम को जायेंगे।

पर बच्चा यह सब कहां समझता। फिर हाथ रास्ते की ओर उठाकर... ई... ई... करने लगा।

तिलु बोली — मामाजी के यहां जा रहे हैं, ले जाइये न साथ। आपके साथ जाकर बड़ा खुश होता है।

—क्यों, तीन-तीन मां है उसकी! मेरे बिना नहीं चलता?

—नहीं, नहीं चलता न। और किसी के पास रहना ही नहीं चाहता।

उसी समय दीनू बुढ़िया चावल की टोकरी कांख में दबाये पास आयी तो दोनों एक साथ बोले— चावल दिखाना। कौन सा है?

बुढ़िया की उम्र अस्सी से ऊपर थी। टोकरी जमीन पर रखकर हंसते हुए बोली —डबल नागरा है दीदीमणि। और कौन है? जमाई?

तिलु बोली — हां, क्या भाव है?

—छह पैसे।

—नहीं, हाट में एक आने के भाव से बिका है।

—नहीं, दीदीमणि, तुम लोगों का खाकर जीवन बिताया है, तुम लोगों को ही धोखा दूंगी? छह पैसे नहीं तो पांच पैसे देना। चार दाने मुंह में डालकर देखो कितना मीठा चावल है।

—चलो, घर के अंदर चलो। पर पैसे उधार रहेंगे।

—अरे तो इसमें क्या हुआ, शाम को दे देना।

—नहीं मंगलवार से पहले नहीं मिलेंगे।

—चलो, मंगल को दे देना।

इसी बीच मौका पाकर मुन्ने ने चावलों की मुट्ठी भरकर मुंह में डाल ली। कुछ मुंह में गये, कुछ जमीन में गिरे। भवानी ने उसका हाथ पकड़कर मुट्ठी खोल दी और चावल गिराकर कहा — मुंह खोलो, मुंह खोलो...

झट से मुंह खोल दिया उसने। मुंह खोलना उसे तिलु ने ही सिखाया था। कारण जब तब वह जो भी सामने आता उठाकर मुंह में डाल लेता और तिलु मुंह खुलवाकर उंगली से डाली हुई चीज निकाल लेती।

भवानी ने मुन्ने के मुंह से सारे चावल निकाल लिये। तभी उनकी नजर दूर आते फणी चकत्ति और मामा चंद्र चाटुज्जे पर पड़ी। उनको देखते ही तिलु से बोले — तुम दीनू को लेकर अंदर जाओ और हां मुन्ने को भी ले जाओ।

जैसे ही तिलु ने मुन्ने को लेने के लिए हाथ बढ़ाये, उसने कसकर दोनों हाथों से पिता का गला जकड़ लिया और मुंह फिरा लिया।

तिलु बोली — वह आपके पास से आना ही नहीं चाहता। तो मैं क्या करूं?

भवानी के अधरों पर मुस्कान दौड़ गयी। क्षण भर में वह दूर भविष्य में पहुंच गये। वह मुन्ना बहुत बड़ा दिखायी देने लगा, विद्वान व पंडित लड़का पाठशाला खोले छात्रों को काव्य, दर्शन व शास्त्र पढ़ाता हुआ। उनका औरस जात पुत्र, जो संसार में उनका नाम रोशन करेगा।

घर की ओर जाती तिलु को भी जैसे नयी दृष्टि से देखा उन्होंने। औरत — जन्म की अधिष्ठात्री देवी। वही भूतल पर आत्मा को लाकर, नवजात क्षुद्र शरीर का बड़े यत्न से परिपोषण करती है। उसके जीवन की न जाने कितनी रातें जगते हुए उद्विग्नता में बीतती हैं। किंतु उसकी यह निस्वार्थ सेवा अवज्ञात ही रह जाती है।

पीछे से पुकारा उन्होंने — सुनो तिलु...

—क्या?

—मुन्ने को लोगी?

—कहा न, वह नहीं आयेगा।

—ठहरो, देखता हूं।

—अब छोड़ो भी। कहकर मुस्कुराती हुई तिलु दरवाजे से अंदर चली गयी।

तब तक फणी चकत्ति और चंद्र चाटुज्जे पास आ गये थे। दोनों को बैठाकर भवानी ने चिलम भरी और मामा के हाथ में दे दी। फणी बोले — बाबाजी, एक काम करना पड़ेगा तुम्हें...

—क्या काम मामा?

—थोड़ी देर को मेरे घर चलना पड़ेगा। मैं गया काशी जाने की सोच रहा हूं। तुम्हारे मामा भी साथ जायेंगे। तुमने तो उधर के सारे रास्ते देखे हैं इसलिये बता दो कैसे जायें, क्या करें!

—पैदल जायेंगे?

—पैदल नहीं जायेंगे तो हमारे लिए पालकी कौन लायेगा बेटा?

—यहां से आप जाइये...

—नहीं, ऐसे कहने से नहीं चलेगा। ईश्वर बोष्टम हम लोगों के साथ जायेगा। थोड़ा बहुत तो वह जानता है, पर तुम पूरी तरह बता पाओगे। शाम को हमारे यहां आ जाना और चने मुरमुरे भी खाना। बहुत से लोग आयेंगे सुनने को।

उन दोनों के चले जाने पर भवानी घर के अंदर गये और आवाज लगायी — अजी, सुनती हो, भूतों के घर राम नाम का कीर्तन हो रहा है।

—क्या?

—फणी चकत्ति और मामा गया काशी जा रहे हैं। अब कहीं तुम्हारे भैया भी कहीं जाने को न कह दें।

तिलु के पीछे-पीछे निलु बिलु भी आकर खड़ी हो गयी थीं। तिलु बोली — क्यों भैया क्या आदमी नहीं है?

—नहीं आदमी भला क्यों नहीं होते। पर मैं क्या सुबह-सुबह गुरुनिंदा करूंगा? मेरे मुंह से कोई बात न निकले, वही अच्छा है।

बिलु बोली — आहा, बात करने का ढंग तो देखो।

पर तिलु चुप रही। न हां कहा न ना। पति से राय न मिलने पर भी वह कभी मुंह से प्रकट नहीं करती थी। और यही कारण था पूरा गांव उसकी पतिभक्ति का गुणगान करता आघाता नहीं था। दो चार जलने वाले ताना मारते हुए कहते थे — अरे भक्ति क्या ऐसे ही आती है? बुढ़ापे मे वर मिला है। अरे जरा उमर ज्यादा है तो क्या हुआ। कुलीन की कोई उमर देखी जाती है।

परंतु एक बात में पूरा गांव एकमत था कि भवानी अत्यंत सज्जन व्यक्ति थे। जिस चंडीमंडप में ब्रह्मा विष्णु भी टीका टिप्पणी से नहीं बचते थे, वहां एकमुख प्रशंसा मिलना छोटी बात नहीं थी।

संध्या से पूर्व ही भवानी फणी चकत्ति के चंडीमंडप में जा पहुंचे। कार्तिक का महीना था। सूरज के पश्चिम में ढलते ही सघन वृक्षों के कारण अंधेरा सा होने लगा था। सुरभित मंद समीर में खुनकी शुरू हो गयी थी। चंडीमंडप के सामने धान के ढेर पर चिड़ियों का झुंड चीं-चीं कर रहा था।

फणी चकत्ति का चंडीमंडप अत्यंत प्राचीन था। सामने लकड़ी की आड़ी शहतीर पर खुदा हुआ था — "श्री शिवसत्य चक्रवर्ती कर्तृक यह चंडीमंडप सन् 1172 में माधव घरामि और अक्रूर घरामि ने बनाया। इसे भगवान का घर समझना।" इस हिसाब से वह चंडीमंडप प्रायः सौ वर्ष पुराना हो चला था। दूर-दूर से लोग उस चंडीमंडप को देखने आते थे। उसकी नक्काशी, बांस का काम, खंभों का काम देखकर दांतों तले उंगली दबा लेते थे लोग। ऐसा काम धीरे-धीरे लुप्त होता जा रहा था। भवानी भी तारीफ किये बिना नहीं रह सके।

दीनू भटाचार्ज बोले — अरे अब तो सब नीलकोठी में बने साहबों के बंगले की नकल करने लगे हैं। छप्पर वाले मकानों का तो रिवाज ही उठता जा रहा है और ऐसे अच्छे छवैय भी कहां मिलते हैं अब।

रूपचांद मुखुज्जे बोले — उस दिन राजाराम का भतीजा बता रहा था कि साहबों के देश में कल वाली गाड़ी चलती है। उसने अखबार में तस्वीर भी देखी है।

दीनू ने पूछा — क्या सचमुच कल से चलती है बाबाजी?

—हां, सुना तो यही है। आगे भविष्य में जाने क्या-क्या देखने को मिलेगा। इसके अलावा मिट्टी के तेल की बात भी बता रहा था वह। कलकत्ते में प्रदीप में जलता है।

—अरे भाड़ में डालो। हमारा सरसों का, रेंडी का तेल ही अच्छा है, मिट्टी के तेल, लकड़ी के तेल की हमें जरूरत नहीं है बाबाजी। हां भवानी बाबाजी, अब जरा रास्ते के बारे में बताओ।तुम तो बहुत घूमे हो। पहाड़ देखने में कैसे होते हैं?

दीनू के हाथ से हुक्का लेते हुए रूपचांद मुखुज्जे बोले — रहने दो, रहने दो। पहाड़ का क्या पूछना? मिट्टी के टीले जैसा होता होगा और क्या? देवनगर के किले का मिट्टी का टीला नहीं देखा? बस वैसा ही या उससे थोड़ा बड़ा।

भवानी बोले — दादा मोशाय, आपने पहाड़ा कहां देखा?

—देखा तो नहीं, सुना है।

—अच्छा।

इतने सारे वयोवृद्ध व्यक्तियों के सामने हुक्का न पीने के कारण भवानी हुक्का लेकर आड़ में चले गये और जरा देर बाद आकर बोले — आप लोग कहां जाना चाहते हैं?

फणी चकत्ति बोले — इसके बारे में हम कुछ नहीं जानते। ईश्वर बोष्टम बहुत दिनों से यह काम करता आ रहा है, उसी ने साथ ले जाने को कहा है। बस आता ही होगा, आदमी बुलाने गया है।

तभी फणी चकत्ति की बड़ी लड़की विनोद सबको अलग-अलग कटोरियों में नमक मिर्च लगे चने मुरमुरे दे गयी। तदुपरांत सबके लिए एक-एक लुटिया पानी दे आयी। यह वहां का प्रतिदिन का नियम था। रोज का करीब डेढ़ सेर तम्बाकू जलता था। फणी चकत्ति का सांध्य आतिथ्य गांव में प्रसिद्ध था।

ईश्वर बोष्टम आया तो भवानी ने पूछा — इन लोगों को गया काशी कौन से रास्ते से ले जाओगे?

—यहां से वर्धमान और फिर वहां से सीधे गया।

—ठीक है। पर किस रास्ते?

—जी अंगरेजी में गैंग टैंग रास्ता कहते हैं। पर हम लोग अहिल्याबाई का रास्ता कहते हैं।

—यात्रियों को ले जाने का काम कब से कर रहे हो?

—बीस साल हो गये। मैं अकेला नहीं जाता, हम लोगों का दल है — वर्धमान से चाकदह से, उलो से यात्रियों को ले जाते हैं। एक का नाम धीरचांद वैरागी है, हुगली का रहने वाला है। एक कुमुदिनी धीवरी है, हुगली जिले हाजरापाड़ा में रहती है।

रूपचांद ने विस्मित होकर पूछा — कुमुदनी धीवरी, औरत?

—जी हां। औरत है तो क्या हुआ, अच्छे-अच्छे आदमियों के छक्के छुड़ा देती है। रूप भी ऐसा है, जैसे साक्षत् देवी ने रूप धारण किया हो।

भवानी बोले — यह ठीक कह रहा है। वर्धमान होकर जाने से वहां शेरशाह का बड़ा

रास्ता मिलेगा। अहिल्याबाई-वाई तो गलत है, असल में वह रास्ता नवाब शेरशाह का बनवाया हुआ है।

—कहां के नबाव हैं?

—मुर्शिदाबाद के। सिराजुद्दौला के पिता।

दीनू भट्चार्ज बोले — हां बाबाजी, अभी भी साहबों की कंपनी मुर्शिदाबाद के नवाब को राजस्व देती है न?

भवानी बोले — होगा। इन सब बातों की खबर नहीं रखता मैं। छोड़िये ये सब बातें, आज आप लोगों को मैं दो सन्यासियों के बारे में बताता हूं, सुनकर खुश होंगे आप लोग।

रूपचांद बोले — हां वही सुनाओ बाबाजी। इन नवाब ववाब की बातों से हमें क्या लेना देना। मैं तो कुंए के मेंढक जैसा हूं। पैसा है नहीं कि कहीं बाहर जाऊं। और बाबाजी डर भी लगता है। इस गांव के बाहर निकलते ही सब विदेश है मेरे लिए तो। एक बार गंगास्नान के मेले में चाकदा तक और उस तरफ नदिया शांतिपुर गया हूं बस। नाव से रास के मेले में नारियल बेचने गया था। चार पैसे कमा लिये थे उस बार बाबाजी।

सभी लोग भवानी के निकट खिसक आये।

भवानी बोले — आप लोगों को मालूम ही है कि कुछ दिन पहले मेरे एक गुरुभाई आये थे। उनका आश्रम मिर्जापुर में है।

दीनू ने पूछा — वह किस तरफ है बाबाजी?

—पश्चिम की तरफ। बहुत दूर है यहां से। आप लोग अनुमान नहीं लगा पायेंगे। पहाड़ की तलहटी में घने जंगल में एक साधु रहते हैं, बंगाली साधु। नाम है हृषिकेश परमहंस। एक छोटी सी झोंपड़ी में रहते हैं। निर्जन वन में शिरीष और कांचन के फूल खिलते हैं, पहाड़ी झरने के किनारे मयूर घूमते हैं, आमलकी के वृक्षों पर आंवले पकते हैं...

आवेग भरे स्वर में रूपचांद बोले — अरे वाह... हमने ऐसी जगह कभी नहीं देखी...

दीनू ने हताश स्वर में कहा — पहाड़ किसे कहते हैं, यही नहीं देखा जीवन में, झरने की बात तो बहुत दूर की है।

चंद्र चाटुज्जे बोले — अरे हम तो गू-गोबर के गर्त्त में पड़े हैं। पैंसठ के होने आये, कुछ भी तो नहीं देखा। तुम गये हो वहां बाबजी?

—हां, मैं परमहंस महाराज के पास छह महीने था। वही मेरे गुरु हैं। पर मंत्र दीक्षा नहीं की मैंने, वह मंत्र किसी को नहीं देते।

—कहां के महाराज हैं?

—कहीं के महाराज नहीं है। वह तो बस कहे जाते हैं।

—ओ...। वहां जंगल में खाने को क्या मिलता है?

—आंवले, बेल, जंगली आम। इसके अलावा पहाड़ पर शरीफे का पूरा जंगल है।

पेड़ों के नीचे गिरे आठ-दस टोकरी पके शरीफे तो रोज सियार ही खा जाते थे। बड़े मीठे शरीफे होते हैं वहां के। यहां तो किसी ने देखे भी नहीं होंगे कभी।

रूपचांद बोले — उस जगह का पता ठिकाना ईश्वर बोष्टम को बता दो बाबाजी। हम भी जी भर पके मीठे शरीफे खा आयें...

चंद्र चाटुज्जे बोले — अरे गोली मारो शरीफों को। उन साधु-संन्यासियों के दर्शन हो जायें तो यह लोक और परलोक दोनों सुधर जायें। अब इस उमर में शरीफे खाकर क्या होगा भाई? उसके बाद बाबाजी...

—छह महीने वहां रहने के बाद वहां से बिठूर वाल्मीकि आश्रम गया।

रूपचांद ने पूछा — वही वाल्मीकि मुनि, जिन्होंने महाभारत लिखा था?

दीनू ने ताना मारा — बलिहारी है तुम्हारी बुद्धि की! सब कुछ जानते हो तुम तो। अरे वाल्मीकि मुनि ने महाभारत नहीं रामायण लिखी थी।

—बिल्कुल ठीक। वहां आश्रम के एक साधु के साथ कुछ दिन बिताये।

रूपचांद ने बीच में ही कहा — बाबाजी, वहां जाने का रास्ता भी बता दो।

—यह गृहस्थ के बस का नहीं है। और विशेषकर ईश्वर बोष्टम के साथ जाकर वहां नहीं पहुंच सकते। वह भला आप लोगों को कितनी दूर ले जायेगा? वर्धमान से बड़ी सड़क पकड़कर आप लोग गया, फिर काशी चले जाइये और काशी से प्रयाग।

मुनि भरद्वाज बसहिं प्रयागा, जिनही राम पद अति अनुरागा।

पुराने जमाने में प्रयाग मेंभारद्वाज मुनि का आश्रम था। कुंभ के मेले के दिनों में वहां बहुत से साधु सन्यासी आते थे। पिछले कुंभ के मेले में मैं वहां था। पर यात्रा बहुत मुश्किल है। पैदल ही जाना पड़ेगा। शेरशाह नवाब के मार्ग पर जगह-जगह यात्रियों के ठहरने के लिये सराय बनी हुई हैं। यात्री रात को विश्राम करते हैं, बनाते खाते हैं।

रूपचांद ने पूछा — और दाल चावल?

—सब कुछ सराय में ही मिलता है। दुकान है हर सराय में। पर तब भी दाल लेकर जाना ही उचित है। रास्ते में विपदाएं हैं।

—कैसी विपदाएं?

—हर तरह की विपदा है। चोर-डाकू हैं, ठग हैं। वर्धमान के बाद गया तक पूरा रास्ता जंगल पहाड़ के बीच से है। उसमें शेर, भालू आदि हिंस्र जानवर हैं।

—अरे बाप रे!

ईश्वर बोष्टम बोला — बाबाजी बिल्कुल ठीक कह रहे हैं। पिछली बार खाबरायोता से एक यात्री गया जाने के लिए साथ गया था। सब मिलाकर चौबीस जने थे हम। उधर एक दिन शाम को सब लोग एक पेड़ के नीचे बैठे थे, वह बोला, "मैं हाथ मुंह धोने जा रहा हूं।" मैंने बहुत मना किया, पर मेरी एक नहीं सुनी उसने। लोटा लेकर मैदान की तरफ पलाश के पेड़ों के झुंड की ओट में चला गया। फिर वापस नहीं लौटा। बाघ उठा ले गया।

सब से मुंह से एक साथ निकला — क्या कह रहे हो?

—हां, बिल्कुल सच कह रहा हूं। बड़ी मुश्किल से रात बीती थी। रोआराट मच गया था। सुबह बहुत ढूंढ़ने पर उसके खून से सनी धोती पड़ी मिली थी। खींचकर ले जाने के निशान जंगल में दूर तक गये थे।

रूपचांद बोले — सर्वनाश!

तभी नालू पाल उस तरफ आता दिखायी दिया। पास आने पर उसे बैठने के लिए खजूर के पत्तों की चटाई दी गयी, क्योंकि आजकल वह बड़ा दुकानदार हो गया था, विवाह भी कर लिया था। वहां उपस्थित लोगों में से अधिकांश रोजमर्रा की चीजें उसकी दुकान से उधार लेते थे। इस कारण उसकी खातिर करनी पड़ती थी।

दीनू बोले — आज इधर का रास्ता कैसे भूल गये नालू?

नालू ने घुटने टेककर हाथ जोड़कर सबको एक साथ प्रणाम करके कहा — एक आग्रह करने आया हूं, आप लोगों को मानना पड़ेगा। सुना है आप लोग तीरथ करने जा रहे हैं। सारे ब्राह्मण तीर्थ यात्रियों को एक दिन भोजन कराना चाहता हूं। बड़ी साध है मेरी। हुकुम किजिये क्या-क्या भिजवाऊं?

चंद्र चाटुज्जे और फणी चकत्ति गांव के बुजुर्ग समझे जाते थे। उनके कहे पर एक राजाराम के अलावा कोई भी कुछ नहीं कह सकता था। उनसे भी लोग केवल इसीलिये डरते थे कि वह नील कोठी के दीवान थे, परंतु सामाजिक मामलों में उनकी कोई पूछ नहीं थी। वह जब भी सामाजिक नियमों का उल्लंघन करते, समाज के प्रमुख व्यक्ति डर के मारे चुप रह जाते।

चंद्र चाटुज्जे ने पूछा — क्या फलाहार कराओगे?

नालू ने हाथ जोड़कर कहा — जी, जो हुकुम हो।

—आधा मन महीन चिवड़ा, दही, खांड गुड़, फेनी, बताशे, केले, गन्ने, मठ और मुड़कि।

—मुड़कि कितनी?

—दस सेर।

—और मठ?

—ढाई सेर दे देना। केष्टो हलवाई अच्छे मठ बनाता है, हमारा नाम लेकर कह देना उससे।

चंद्र चाटुज्जे बोले — दक्षिणा में क्या देने का निश्चय किया है?

—आप लोगों की क्या राय है?

—तुम बताओ फणी। मैं ही बोल रहा हूं, तुम भी तो कुछ कहो।

फणी चकत्ति बोले — एक-एक चवन्नी दे देना।

नालू ने कहा — बहुत ज्यादा हो जायेगा मालिक। मर जाऊंगा। बीस ब्राह्मणों को बीस चवन्नी देनी पड़ी तो...

—मरोगे नहीं। हमारे आशीर्वाद से तुम्हारा कल्याण ही होगा। लड़का भी हो गया है न?

—जी, आपका ही लड़का है।

चंद्र चाटुज्जे ने हंसी रोकने के लिए मुंह दूसरी ओर घुमा लिया। अंत में दक्षिणा में एक-एक दुअन्नी देने की बात पक्की करके नालू बाहर चला गया। शायद तमाखू पीने गया था।

उसके जाते ही चंद्र चाटुज्जे बोले — हां भाई, नालू क्या कह गया?

—क्या?

—अब तक तुम्हारी आदतें चाहे जैसी रही हों, पर मेरा ख्याल था कि बुढ़ापे में सुधर गये हो। यह नालू की बहू से कब से मिलना-जुलना है?

सब हो-हो करके हंस उठे। गुस्से से फणी चकत्ति जोर-जोर से हुक्का गुड़गुड़ाते हुए बोले— चंदर दा आ गये न अपनी बात पर? अभी तक मन का मैल नहीं गया...

कुछ देर बाद चंद्र ने भवानी से कहा — बेटा, नालू के फलाहार का दिन तुम तय कर दो।

भवानी बोले — नालू के फलाहार की बात पर एक बात याद आ गयी मामा। झांसी के पास भरसुत नाम की एक जगह है, वहां अंबिका देवी के मंदिर में कार्तिक के महीने में बहुत बड़ा मेला लगता है। वहां मैं भिक्षा मांगकर रहता था। पास ही किसी राजा का लड़का रहता था, जो साधु-सन्यासियों का बड़ा भक्त था। एक दिन उसने मुझसे पूछा — खाने का क्या करते हैं? मैंने कहा — भीख मांगता हूं। उस दिन से वह रोज दो जनों के लायक भात, रोटी, तरकारी, दही, मिठाई वगैरह भेजने लगे। जब उससे उच्छी मित्रता हो गयी तो उसने अपनी कहानी सुनायी मुझे। जयपुर के पास की उरियाना नाम की रियासत का बड़ा राजकुमार था वह। और भी बहुत से भाई बहन थे उसके। परंतु राजा के मरने के बाद बड़ा लड़का ही राज्य का अधिकारी होगा, यह जानने के बाद छोटी रानी ने उसे खाने में विष मिलाकर दे दिया।

दीनू ने बीच में कहा — यह तो रामायण है बाबाजी!

—हां, हर जगह रामायण है। अर्थ और यश बड़ी खराब चीजें हैं मामा। इसीलिये मैंने यह सब छोड़ दिया था। आगे सुनिये, फिर तो ऐसा षड़यंत्र आरंभ हुआ कि उसका वहां रहना असंभव हो गया। तब वह अपने बीबी बच्चों को लेकर भरसुत आ गया और एक छोटा सा घर लेकर रहने लगा। कहा करता था कि राजा रजवाड़ों के कांड देखकर उसे राजपद से घृणा हो गयी थी।

फणी ने पूछा —पर वह राजा बना क्यों नहीं?

—क्योंकि बुड्ढ़ा राजा तब तक जीवित था। उसकी उम्र अस्सी के करीब थी। यह लड़का मेरी उम्र का था। बड़े दिन बाद उसकी याद आयी। अंबिका देवी के मंदिर में पूरब की तरफ पत्थर के चबूतरे पर बैठकर दोनों जने बातें किया करते थे। सामने बहुत

बड़ा तालाब था और तालाब के परली तरफ रामजी का मंदिर था। बहुत ही सुंदर जगह थी। दो महीने रहा था वहां मैं, बहुत अंतरंगता हो गयी थी उससे। प्रतिदिन वेदांत की धर्मशास्त्रों की आलोचना करते थे हम। उसकी पत्नी को भी देखा था। राजपूत लड़की थी, खूब लंबी चौड़ी, नाक में बहुत बड़ी नथ पहने रहती थी। उसको देखकर मैं सोचा करता था कि पता नहीं इसकी सौतेली सास कितनी जबर्दस्त होगी, जिसने इस जैसी दबदबे वाली औरत को भी घर से भागने पर मजबूर कर दिया। वहीं एक दिन झांसी की रानी लक्ष्मीबाई को भी देखा था, अंबिका देवी की पूजा करने आयी थी। बाद में बिठूर में था तो सुना कि अंग्रेजों के साथ लड़ाई करते हुए मारी गयी वह।

—क्या कह रहे हो बाबाजी? बड़ी आश्चर्यजनक बात सुनायी यह तो। औरत ने कंपनी के साथ युद्ध किया? ऐसी बातें तो कभी नहीं सुनी। किस देश की बात है यह?

सुनते कहां से मामा, गांव से बाहर तो कभी पैर नहीं रखा। कुछ भी तो नहीं देखा आपने। अब की बार अगर जायें तो...

तभी हड़बड़ाया नालू आया और बोला कि अगर खाने का दिन तय कर देते तो वह जल्दी से घर चला जाता। हाट का दिन था, काम बहुत था।

भवानी ने कहा — अगली पूर्णिमा की रात तय कर लीजिए मामा। उस दिन किसी को परेशानी तो नहीं होगी?

रूपचांद बोले — मैं वात का मरीज हूं। पूर्णिमा को मैं धान की कोई चीज नहीं खाता, लेकिन उससे कोई फर्क नहीं पड़ता, दूसरी चीजें खाऊंगा। वही दिन तय रहा।

ईश्वर बोष्टम इतनी देर से चुप बैठा भवानी की बातें सुन रहा था। नालू के चले जाने पर बोला — आपने अभी जिस रानी की बात बतायी, जो जाने किससे लड़ी, उससे मुझे कुमुदनी धीवरी की याद आ गयी...

दीनू भटचाज बोले — अरे छोड़ो ईश्वर। तुम भी किससे किसकी तुलना करने लगे? कहां रानी लक्ष्मीबाई और कहां कुमुदनी धीवरी। कौन है वह?

यह सुनते ही ईश्वर बोष्टम का मुंह उत्तेजना से लाल हो गया। दोनों हाथ नचाकर बोला — जी, ऐसी बात मत कहिए काका ठाकुर। आप उसे जानते नहीं और न कभी उसे देखा है, इसीलिए यह कह रहे हैं। ऐसा साहस और बुद्धि अच्छे-अच्छे मर्दों में नहीं होती। क्या मजाल उसके यात्रियों को कोई पंडा जरा भी परेशान कर ले। कमर पर हाथ रखकर जब लड़ने पर उतरती है तो लगता है साक्षात् दुर्गा धरती पर उतर आयी है। हर साल दो सौ यात्री तीर्थ पर ले जाती है वह।

भवानी बोले — एक बार ले आओ न उसे यहां। हम भी देखें।

भवानी की हां में हां मिलाते हुए सब एक साथ बोले — हां-हां, लाओ ना उसे। तुम्हारी तो अच्छी जान-पहचान है।

ईश्वर को चुप देखकर दीनू बोले —क्यों? नहीं ला सकते?

ईश्वर ने कहा — जी, बहुत मान मर्यादा वाली है वह। हम लोगों की मुखिया है वह।

मेरे कहने से नहीं आयेगी। फिर घर भी बहुत दूर है, हुगली जिले में है, बस यही मालूम है, गांव का नाम नहीं मालूम। हम सब लोग हर साल कार्तिक में वर्धमान शहर की केवल चकत्ति की सराय में इकट्ठे होते हैं। आप लोग अगर तीर्थयात्रा पर चलेंगे तो उसे देख ही लेंगे। अच्छा, अब चलता हूं।

भवानी बोले — यहां जंगल में खेपी नाम की जो संन्यासिनी है, आप लोगों में कोई गया है उसके पास? जाकर देखिये, अच्छा लगेगा।

फणी चकत्ति बोले — ऐसी जगह जाने से ब्राह्मण का मान नहीं रहता। सुना है जात की बूनो है। तुम भी बाबाजी मत जाना वहां।

—माफ करियेगा मामा। आपकी यह बात नहीं रख पाऊंगा मैं। भगवान का नाम लेने पर सब समान हो जाते हैं मामा, क्या ब्राह्मण क्या बूनो।

फणी चकत्ति ने गाल पर हाथ रखकर आश्चर्य से पूछा — क्या? बूनो और ब्राह्मण एक समान?

सभी चकित दृष्टि से भवानी की ओर देखने लगे।

दीर्घ श्वास लेकर चंद्र चाटुज्जे ने कहा — इसी दुख से तो राजा न बनकर फकीर बना रहा बेटा।

सब हो-हो करके हंस पड़े।

फणी चकत्ति बोले — भैया को तो जब देखो मजाक। अच्छा अब असली बात तय हो जाये, कौन-कौन जा रहा है और कब जाना है?

रूपचांद बोले — तुम और चंद्र भैया तो निश्चित जा रहे हो?

—बिल्कुल निश्चित रूप से।

—और कौन जा रहा है ईश्वर?

ईश्वर ने कहा — जेले पाड़ा से भगीरथ की बड़ी बहू, पगला धीवर की मां, हमारे मुहल्ले की नरहरि की बहू, ब्राह्मण पाड़ा से आप दोनों और हामिदपुर से सात जने। पूर्णिमा के अगले दिन रवाना होंगे। कार्तिक पूजा के दिन मुझे अपने दल के साथ वर्धमान में वीरचांद वैरागी और कुमुदिनी जेले के साथ मिलना पड़ेगा। रानीगंज में एक सराय है, वहां दो दिन आराम करके आगे रवाना होंगे। वहां भी दो-तीन दल साथ मिलेंगे। सब पहले से तय रहता है।

रूपचांद बोले — मैं अपने बड़े लड़के से पूछूंगा, देखूं वह क्या कहता है। मेरी अपनी अब इतनी सामर्थ्य नहीं है भाई। भवानी के मुंह से सब सुनकर तो जी चाह रहा है कि अभी चला जाऊं उस सन्यासी के आश्रम में। कुछ भी तो नहीं देखा जीवन में।

ईश्वर बोला — चलिए मुखुज्जे मोशाय। सब जगह मेरी जान-पहचान है, पंडे कम लेंगे।

चंद्र चाटुज्जे ने भी उत्साहित किया — हां, ईश्वर ठीक कह रहा है। चलो भाई। हम पांच जने हैं, किसी न किसी तरह हो ही जायेगा।

धर्मप्राण पालू के तीर्थयात्री भोज के दिन चंद्र चाटुज्जे के घर तीर्थयात्रियों के अलावा कुछ और लोग भी दिखायी दिये — जैसे भवानी बांडुज्जे, दीवान राजाराम और नीलमणि समाद्दार। नीलमणि तो ब्राह्मण भी नहीं थे। तिलु और भवानी ने सबको खाना परोसकर बड़े आग्रह से खिलाया। सारी चीजें बहुत अच्छी बनी थीं। सबने भूरि-भूरि प्रशंसा की और खूब छक कर खाया।

यह तीर्थ यात्रा सबके लिए एक निराला अनुभव था, विशेषकर रूपचांद तो मन ही मन बड़े उत्सुक व उत्तेजित थे। एक नये रस का संधान मिला था जैसे। इतने दिन बाद अपने छोटे से गांव से, विगत पचास वर्षों के जीवन से इतनी दूर आकर जैसे जीवन को नये रूप में देखा था, जाना था।

पत्नी को मरे बीस साल हो गये थे। वह भी मानों एक स्वप्न था, इतनी दूर से सब कुछ स्वप्न ही लग रहा था। इछामती के किनारे के उस छोटे से गांव में उनका बड़ा यतीन शायद घर आया था। बेचारा! मात्र पांच रुपये महीने पर सात क्षीर के नबाबुओं के यहां काम करता था। बीबी-बच्चों तक को देखने को तरस जाता था, दो तीन महीने बाद घर जा पाता था।

बड़ा ही भला और अच्छा लड़का था उनका।

जब गया काशी आने की बात तय हो गयी थी तो उसने आकर कहा था — बापू, रुपया-पैसा है तुम्हारे पास?

—हां है थोड़ा-बहुत।

—कितना है?

—तीस रुपये होंगे। वक्त-बेवक्त के लिए रख छोड़े थे। उससे ही काम चल जायेगा मेरा।

—नहीं बापू, उससे काम नहीं चलेगा, मैं तुम्हें...

—नहीं रे नहीं! पूरा पड़ जायेगा। तू फिक्र मत कर।

तब भी उसने जबर्दस्ती पंद्रह रुपये उनकी चादर के पल्ले में बांध दिये थे। याद आने पर आंखें भर आती थीं। मन में हूक सी उठने लगती थी। फरासडांगा की धोती तक नहीं पहना पाये उसे। सामान्य जमानवीस के काम से मिलता ही क्या था उन्हें।

कल्पना जगत में विचरण करते-करते कहीं के कहीं पहुंच जाते थे रूपचांद। बाहर की दुनिया जितनी आकर्षक व अद्भुत लग रही थी, पीछे छोड़ा गांव भी अपनी ओर उतना ही खींच रहा था। बेटा और दोनों नातिन की याद भुलाये नहीं भूलती थी।

जेठ के महीने में चंद्र चाटुज्जे के चंडीमंडप में पुनः नालू पाल की तरफ से ब्राह्मण भोजन हो रहा था। तीर्थ से लौटे पुण्यवान लोगों को आज फिर फलाहार करा रहा था वह।

दोपहर का समय था।

नालू गले में धोती डाले हाथ जोड़े दूर खड़ा देखभाल कर रहा था। भोज के लिए आम और कटहल इकट्ठा किये गये थे।

एक रूपचांद को छोड़कर सभी आये थे। काशी के रास्ते में ही शरीर छोड़ दिया था उन्होंने। उन लोगों ने चिट्ठी द्वारा यह खबर लड़के को भिजवायी थी, पर यतीन को चिट्ठी मिली ही नहीं।

चंद्र चाटुज्जे नीलमणि समाद्दार को तीर्थयात्रा के अनुभव सुना रहे थे — गैंग टैंग रोड पर एक जगह किस तरह वे लोग डाकुओं से घर गये थे, गया के पंडे ने किस खूबी से अपनी बही में से उनके पितामह विष्णुराम चाटुज्जे का नाम निकालकर उन्हें सुनाया था आदि-आदि।

नीलमणि समाद्दार बोले — रूपचांद काका के बारे में सोच कर बड़ा दुख होता है। बड़े पुण्यवान थे जो काशी के रास्ते में मरे। क्या हुआ था?

चंद्र चाटुज्जे बोले — हम लोगों की समझ में ही नहीं आया भाई विकारग्रस्त अवस्था में बस यही बड़बड़ाते रहते थे — खोका कहां है? मेरा खोका कहां है? खोका, मैं तमाखू पियूंगा। यतीन ने उस दिन सुना तो फूट-फूट कर रोने लगा बेचारा।

नीलमणि बोले — यतीन बड़ा पितृभक्त लड़का है।

—परस्पर एक-दूसरे को प्यार किये बिना भक्ति नहीं आती भाई। रूपचांद भी यतीन कहते अघाते नहीं थे।

फणी चकत्ति गाढ़े किए दूध के साथ मुड़कि और कटहल व आम का रस मिलाते हुए बोले — चंद्र भैया, जाने के पहले का भोज और अब यह भोज! मैंने तो सोचा भी नहीं था कि लौटकर वापस आऊंगा। कुमुदिनी धीवरी के दल के साथ सातकड़ि ने पहले ही कह दिया था कि वर्धमान से निकलते ही डाकू पीछे लग जायेंगे और ऐसा ही हुआ।

—मुझे तो वह पहाड़ की तली बहुत याद आती है — झरना बह रहा था, बड़े-बड़े पेड़ों की कितनी घनी छाया थी। वहीं शरीर छोड़ा रूपचांद काका ने। ऐसी जगह बुड्ढे को बहुत अच्छी लगती थी। मुझसे कह रहा था — ऐसा लगता है जैसे वाल्मीकि मुनि के आश्रम में आ गया हूं।

नालू हाथ जोड़कर बोला — मेरा बड़ा भाग्य है कि आप लोगों ने दो-दो बार गरीब को सेवा करने का मौका दिया। आशीर्वाद दीजियेगा, मेरा लड़का बचा रहे, वंश चलता रहे।

भवानी लौटकर आये तो बिलु ने पूछा — आपकी लाड़ली पत्नी कहां रह गयी? अभी तक नहीं लोटी। मुन्ना रो-रोकर बेहाल हो गया, अभी-अभी सोया है।

—उसने अभी खाया नहीं था। अभी-अभी तो ब्राह्मण-भोज खतम हुआ। निलु शायद अंदर सो रही थी। अपराह्न का समय था। पति की आवाज सुनकर हड़बड़ाकर उठी

और बाहर आकर बोली — आओ, आओ नागर, कब से नहीं देखा तुम्हें। क्या-क्या फलाहार किया, जरा हम भी तो सुनें?

भवानी का चेहरा गंभीर हो गया, बोले — जितनी बड़ी होती जा रही हो उतनी ही जबानजोर होती जा रही हो। तुम्हारी दीदी तो कभी...

बिलु बीच में ही बोली — नहीं, नहीं, दीदी के तो सात खून माफ हैं। वह भला कभी कुछ गलत कर सकती है? स्वर्ग की अप्सरा जो है। पर हमें उससे क्या मतलब। यह बताओ कि हमारा खाना कहां है? चिवड़ा-मुड़कि लाये हो? हम क्या डोम-रोकला हैं कि सड़क पर बैठकर चिवड़ा-मुड़कि खायेंगे और हाथ उठा-उठाकर दुआएं देते हुए घर जायेंगे? क्यों?

निलु मंद-मंद मुस्करा रही थी। यह सुनकर बोली — अब रहने दो दीदी। नागर का मुंह उतर गया है, मुझसे देखा नहीं जा रहा। ऐसा वैसी बात सुनना अच्छा नहीं लगता इन्हें। कहते हैं हमारे मुंह से सुसंस्कृत बात नहीं निकलती।

भवानी के मकान में एक कमरा चार कड़ियों वाला और उत्तर की तरफ दो कड़ियों वाला छोटा कमरा था। छोटा कमरा उनका था, तिलु उन्हीं के साथ रहती थीं। निलु और बिलु बड़े कमरे में रहती थीं। अचानक निलु भवानी का हाथ पकड़कर बड़े कमरे में ले गयी। वहां मुन्ना गहरी नींद सो रहा था। ओठों पर स्मित हास्य खेल रहा था। लगता था सपने में बेमाता आयी थी। भवानी जैसे ही उसे उठाने को झुके, निलु एकदम से बोली — देखो, उठाना मत, कहे दे रही हूं! रोयेगा तो कौन संभालेगा?

फिर भवानी को चारपाई पर बिठाकर दोनों पति की दोनों तरफ बैठ गयीं। बिलु बोली — आज सड़ी गरमी पड़ रही है, पेड़ का पत्ता भी नहीं हिल रहा। पता है हमारे दोनों कटहल पक गये हैं।

सचमुच पके कटहल की खुशबु से कमरा मह-मह कर रहा था। बिलु का उल्लास देखकर भवानी का स्नेह उमड़ आया। बोले — दोनों पक गये?

बिलु ने कहा — हां, दोनों पक गये। खायेंगे रात को?

—मुझे क्या बकासुर समझा है तुमने कि हर वक्त खाता ही रहूंगा। अभी अभी तो खाकर आ रहा हूं।

बिलु बोली — आप नहीं खायेंगे तो हम भी नहीं खा पायेंगे और इतने अच्छे कटहल ज्यादा पककर खराब हो जायेंगे। कम से कम एक बीज तो खा लीजिए।

—ठीक है, रात को दे देना।

—नहीं, अभी खाना पड़ेगा। निलु मुझसे कबसे कटहल खाने को कह रही है। बच्ची है न, खाने की लालची है।

—अभी भी बच्ची है? तीस से ज्यादा उमर हो गयी, वह अभी...

—रहने दीजिये, अब अपना उपदेश मत बघारिये। हम लोगों में तो आपको बुराइयों के सिवा कुछ दीखता ही नहीं। गुण तो बस दीदी में हैं।

भवानी हंसकर बोले — अच्छा दो, कटहल का एक बीज खाने से ही अगर तुम लोगों के खाने का द्वारा खुलता है तो खुल जाये।

रात को तिलु छोटे कमरे में आयी। कुछ ही देर बाद बिलु मुन्ने को मां की गोद में डाल गयी। भवानी ने पूछा — ठीक से खाया?

—हां। और आपने?

—पेट से ज्यादा। तुम्हारी बहनें नाराज हो रही थीं कि हम तो खा आये और उनके लिए कुछ भी नहीं लाये। वैसे उनका गुस्सा वाजिब ही था।

—उसकी फिक्र मत करिये आप। मामी से उनके लिये मांग लायी थी मैं। पर आज आप अगर उन लोगों के कमरे में सो जाते तो अच्छा होता। एक तो हम उनके ऊपर मुन्ने को छोड़कर दावत खाने चले गये। अब आप सोयेंगे भी मेरे पास तो दोनों को बहुत दुख होगा। इसलिए कह रही हूं कि उनके पास चले जाइये।

—तो फिर तुम्हारी पढ़ाई रह जायेगी। सोचा था, आज ईषोपनिषद समाप्त कर दूंगा।

—हां मैंने भी आज चौदहवां श्लोक समझने का इरादा किया था — हिरण्यमयेण पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखं तत् त्वं पूषन्न-पावृणु सत्यधर्माय दृष्टये...

—हे पूषन् अर्थात सूर्यदेव मुख का आवरण हटाओ, जिससे हम सत्य का दर्शन कर सकें। वेद में सूर्य को कवि का ज्योतिस्वरूप कहा है।

—मैं आज बैठी-बैठी यह चौदहवां श्लोक पढ़ती हूं। आपने नारद भक्ति सूत्र शुरू कराने को कहा था, कल कराइयेगा। अच्छा, थोड़ी देर और बैठिये।

—ठीक है।

—मैं अगर मर जाऊं तो आप मुन्ने को ठीक से संभालेंगे?

—हूं।

—हाय राम, बस हूं? मेरे मरने का जरा भी दुख नहीं होगा?

—तुम और मैं इस गांव की मिट्टी में एक वंश चला जायेंगे। मुझे स्पष्ट नजर आ रहा है कि हमारे बांस वन के इस घर में पांच पीढ़ियां वास करेंगी, धान के कोठे बनायेंगी, गाय-बैल पालेंगे, जमीन जोतेंगे-बोयेंगे।

पति की गोद में सिर रखकर लेट गयी तिलु और पति के मुंह पर दृष्टि जमाकर बोली — आपके बिना पल भर भी रहने को जी नहीं चाहता मेरा। मन जाने कैसा करने लगता है। आपका मन भी व्याकुल होता है मेरे लिए? अवजानंति माम् मूढ़ा मानुषी तनुमाश्रितं, आप सोचते हैं, मैं सामान्य नारी हूं? अगर आप ऐसा सोचते हैं तो आप मूढ़ हैं। जानते हैं, कौन हूं मैं?

तिलु की प्रेमभाव से ओत-प्रोत बड़ी-बड़ी आंखों का चुंबन लेकर उसके बाल मुट्ठी में भरकर हल्के से खींचते हुए भवानी बोले — तुम देवी हो, तुम्हें पहचानने में जरा भी देर

नहीं लगी मुझे। फिर अधरों पर चुंबन अंकित करके बोले — अच्छा अब तुम सोओ, मैं उस कमरे में जाता हूं। दिन भर अथक परिश्रम किया है, थक गयी होगी।

बिलु-निलु पति को देखकर चकित रह गयीं। निलु बोली — आज रास्ता कैसे भूल गये नागर? पता नहीं आज सुबह किसका मुंह देखा था।

बिलु बोली — आज सोने नहीं देंगे आपको। रात भर बातें करेंगे। क्यों निलु?

निलु बोली — नहीं नहीं, दीदी को तो रोज रात को पढ़ाते हैं, हमें क्यों नहीं पढ़ाते?

—पढ़ाऊं कैसे? तुम क्या टिककर बैठने वाली लड़की हो? पता है, आजकल कलकत्ते में लड़कियों को पढ़ाने के लिए बेथून नाम के एक साहब ने स्कूल खोला है। कितनी लड़कियां पढ़ती हैं वहां?

—सच?

—सच नहीं तो झूठ कह रहा हूं क्या? मेरे पास सर्व शुभकारी नाम का एक अखबार है। उसमें एक बड़े पंडित मदनमोहन तर्कलंकार ने यह सब लिखा है। लड़कियों के लिए पढ़ना बहुत जरूरी है। केवल कटहल खाने से मानव जीवन व्यर्थ चला जायेगा। न कुछ देखा न समझा।

बिलु बोली — यह कटहल खाने की बात मत खोदिये, कहे देती हूं। कटहल खाना क्या खराब काम है?

निलु बोली — कदमा का कटहल खाया है कभी। खाकर देखिये तो पता चलेगा कि यह भी कितना जरूरी काम है।

—अगर खाऊं तो तुम लोग पढ़ोगी? तुम्हारी दीदी कैसे संस्कृत सीख रही है, बंगला पढ़ लेती है। भारतचंद्र की कविता कंठस्थ कर ली है उसने। और तुम लोग बस...

कृत्रिम गुस्से से हाथ नचाकर बीच में ही टोका निलु ने — बस! खबरदार, कटहल खाने का ताना मत मारियेगा।

—स्वाध्याय किसे कहते हैं, जानती हो? रोज थोड़ा शास्त्र पढ़ना स्वाध्याय कहलाता है। भगवान के बारे में जानने की इच्छा नहीं होती तुम्हारी? जीवन को व्यर्थ गंवाने से क्या लाभ? कट...

—फिर!

—अच्छा जाने दो। पर भगवान के बारे में क्या तुम सचमुच नहीं जानना चाहती?

—हम जानते हैं।

—क्या जानती हो? खाक जानती हो तुम।

—दीदी क्या हमसे ज्यादा जानती हैं?

—वह उपनिषद् पढ़ती है मुझसे। उपनिषद् क्या है, यह तुम अभी नहीं समझ सकोगी। अगर पढ़ती रहोगी तो समझ जाओगी।

—आपने यह सब कहां सीखा?

बंगाल में इसकी कोई चर्चा नहीं है। यहां तो बस मंगलचंडी का गीत, मनसा का बहाना और शिव का ब्याह है। बहुत जोर मारा तो रामायण महाभारत। यह मैंने पश्चिम में हृषिकेश परमहंस जी महाराज के आश्रम में सीखा था। उनके एक और शिष्य ने, जो अभी कुछ दिन पहले आया था, मेरी आंखें खोल दी हैं। इसीलिए मेरे गुरु हैं। मंत्र नहीं दिया, पर आंखें खोल दीं। पहले मैं नहीं जानता था, उन्होंने ही बताया है कि कलकत्ते में राममोहन राय नाम के एक अत्यंत धनी और महापंडित इसी उपनिषद् के मत का प्रचार कर रहे थे। उनकी किताबें भी हैं।

—यह सब ईसाई मत की बातें हैं। बाप-दादा जो कर गये हैं...

—निलु, बाप-दादा जो कर गये हैं उसको तुम क्या जानती हो? तुम्हें मालूम है कि उपनिषद् का धर्म ऋषियों का बताया हुआ है? अच्छा, आज यह सब बातें रहने दो। रात बहुत हो गयी है।

—नहीं, बताइये ना... बहुत अच्छा लग रहा है।

—तुम अपनी दीदी से कम बुद्धिमान नहीं हो पर बस बचपने में दिन बिता रही हो।

बिलु बोली — अच्छा वह सब छोड़िये, आप कटहल खाइये। कल से हम पढ़ाई करेंगे। पर दीदी के साथ, अलग नहीं।

तब तक निलु पत्थर की कुंडी में कटहल ले आयी और पति के सामने रख-कर बोली —खाइये।

भवानी बोलो — इतना खाऊंगा?

निलु ने जरा सा निकालकर कहा — बस खा लीजिये। कदमा का कटहल है। खाकर देखिये कितना मीठा है। नागर के खाये बिना हमें भला कहीं अच्छा लगेगा। मेरे सर की कसम, खाइये।

बिलु बोली — इसके बाद एक बीज नमक से खा लीजियेगा। नुकसान नहीं देगा। अरे राम! मुन्ना रो रहा है। दीदी शायद सो गयी है, जल्दी जा तो निलु।

निलु एक छलांग में कमरे में बाहर हो गयी। बाहर शुभ्र धवल ज्योत्स्ना छिटकी हुई थी।

कविराज रामकनाई पिछले एक वर्ष से गृहहीन, आश्रयहीन थे। पिछली बार तीन दिन नील कोठी के चूने के गोदाम में बंद रहे, दीवान राजाराम ने लाख समझाया था, अनेकों प्रलोभन दिये थे, पर किसी भी तरह उन्हें झूठी गवाही देने को तैयार नहीं करा पाये थे। श्यामचांद खाकर बेहोश हो गये थे। नीलकोठी के साहबों का स्थान होने के कारण जब तक वहां रहे, पानी तक का स्पर्श नहीं किया था। कहीं मर न जायें, इस डर से छोड़ दिया था तो स्वयं ही अपनी छोटी सी झोंपड़ी में चले आये थे। घर तो था, लेकिन सामान गायब था। सब कुछ तहस-नहस हो गया था। अनेक कष्टों से संग्रह की गयी

जड़ी बूटियों का कहीं पता नहीं था। एक फटे कपड़े में दस आने बांधकर छुपाये हुए थे, वह भी गायब थे।

अनाज का एक दाना नहीं था घर में। कलसी लोटा भी नहीं था कि पानी लाकर सूखा गला तर कर लेते।

रामू सरदार के खून का मुकदमा पांच छह महीने तक चलता रहा था। अंत में जिला मजिस्ट्रेट आकर फैसला कर गया था।

पहले तो दो-चार रोगी उन्हें दिखाने आ भी जाते थे, पर अब डर के मारे वह भी आने बंद हो गये थे। राजाराम के क्रोध का भाजन कौन बनना चाहेगा! तीन-चार महीने प्रायः अनाहार में बीते थे रामकनाई के। पूष महीने के अंत में बीमार पड़ गये वह। बुखार और छाती में दर्द। उसी टूटी झोंपड़ी में झिंगोली खटिया पर पड़े रहते। कोई देखने-पूछने वाला नहीं था। नील कोठी के भय से कोई पास नहीं फटकता।

एक दिन सफेद साड़ी और मेमों जैसा बांह कटा ब्लाउज पहने एक औरत को अपनी कुटिया में घुसते देखकर रामकनाई चक्कर में पड़े गये। बोले — आओ बेटी बैठो। कहां से आ रही हो? पहचान नहीं पाया।

उस औरत ने दूर से ही भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया और बोली — मुझे नहीं पहचाना? मेरा नाम गया है।

यह नाम सुन रखा था रामकनाई ने, चौंक कर बोले — गया मेम?

—हां बाबू जी, सब इसी नाम से पुकारते हैं मुझे।

—किसलिए आयी हो बेटी? मेरे बड़े भाग।

आपसे सबसे अधिक नाराज छोटे साहब और दीवान जी हैं। पर बड़े साहब को आप पर किये गये अत्याचारों के बार में कुछ भी नहीं मालूम। कैसे हैं आप?

—बुखार है। छाती में दर्द है। बहुत कमजोर हो गया हूं।

—थोड़ा दूध लायी थी आपके लिये।

—मेरे से उठा नहीं जा रहा, उबाल देकर पी नहीं सकता। वापस ले जाओ बेटी।

—नहीं बाबूजी, आपके लिये लायी थी... वापस नहीं ले जाऊंगी। आप नहीं पियेंगे तो पेड़ के नीचे डाल जाऊंगी। मेरी ऐसी तकदीर कहां कि आप जैसा ब्राह्मण मेरे हाथ का दूध सेवन करे।

रामकनाई में छल नाम मात्र को नहीं था, झट से कह दिया — बेटी, मैं शूद्र का दान नहीं लेता।

गया चतुर लड़की थी, मुस्कुराकर बोली — पर बेटी का दान तो लेंगे बाबूजी? और इस पर भी अगर आपके मन में कोई शंका है तो जब ठीक हो जायें, बेटी के दूध के दाम चुका दीजियेगा। उसमें तो कोई बुराई नहीं है?

—हां, यह तो हो सकता है बेटी।

—ठीक है। यही बात तय रही। अब आप दूध पी लीजिये।

—पर उबालेगा कौन? मेरे अंदर तो उठने की शक्ति है नहीं। डरते हुए गया बोली — बाबूजी, मैं उबाल दूं?

—दे दो। इसमें कोई आपत्ति नहीं है मुझे। तुम्हारा दान नहीं लिया, इसलिए मन दुखी मत करो। मेरे बाप-दादा ने कभी दान नहीं लिया, मैंने लिया तो बुढ़ापे में पतित होऊंगा। पर तब भी तुम्हारा दिया खाना पड़ेगा। क्या करूं? बिस्तर से लग गया हूं और देने वाला कोई है नहीं।

—आप चिंता मत करिये बाबूजी, मैं दूंगी। आपकी लड़की जिंदा है अभी।

शाम के वक्त शिप्टन ने छोटे साहब को बुला भेजा।

कमरे में प्रविष्ट होकर छोटे साहब ने कहा — गुड आफ्टर नून मिस्टर शिप्टन।

—गुड आफ्टर नून, डेविड। नाउ व्हाट अबाउट आवर कविराज? आई हियर देयर इज समथिंग अमिस विथ हिम?

—गुड हैवेंस! आई नो वेरी लिटिल अबाउट हिम।

—इट इज वेरी गुड आफ यू टु नो लिटिल अबाउट द पुअर ओल्ड मैन! माई आया गया वाज टेलिंग मी, ही इज डाउन विथ फीवर एंड आफ कोर्स शी डिड हर बेस्ट, शी वाज वेरी नाइस टु हिम, बट हाउ इज इट यू आर अलोन? व्हेअर इज आवर प्रेशस डीवान?

—देअर, स्पीडिंग अप मार्क खतियांस्, शैल आइ सेंड फार हिम?

—नो, एंड, आफ्टर द रादर अनसैटिस्फैक्टरी एक्सपीरियंस यू हैड आफ हिज वेज एंड थिंग्स, सी दैट ही डज नाट गेट ए फ्री हैंड इन चेस्टेसिंग एंड चेन्टनिंग पिपुल, यू अंडरस्टैंड?

—येस, मिस्टर शिप्टन।

—वेल, व्हाट हैव यू बीन अप टु आल डे?

—आइ वाज चेकिंग अप ऑडिट अकाउंट्स एंड...

—दैट इस सो। नाउ, लिसेन टु माइ वर्ड्स। आवर गन्स वर इन्टैक्ट बट दे सीज्ड फायर व्हाइल यू वर स्टैंडिंग बाइ विथ योर वाइलि डीवान वेटिंग फार ऑर्डर्स। नो, डेविड, आई रियलि थिंक, द वे यू डिड इट वाज एवर सो ऑड एंड टैक्टलेस। मेंड अप योर वेज टु कविराज, आइ मीन इट, यू नो, देअर आर नॉट एनी सीक्रेट्स, यू सी?

—येस मिस्टर शिप्टन।

—नाऊ यू कैन रिटायर, आइ एम ड्रेडफुलि टायर्ड, थिंग्स आर कमिंग टु ए हेड, इफ यू डोंट माइंड, आइ विल रादर डाइन इन माई रूम विथ मिसेस,

—प्लीज योरसेल्फ मिस्टर शिप्टन, गुड नाइट।

छोटे साहब कमरे में निकलकर बरांडे तक गये थे कि पीछे से शिप्टन ने फिर

आवाज लगायी। उनके वापस आने पर बोले — लुक हियर डेविड, देयर इज ए फनी अफेयर इन दिस वीक्स पेपर। राम गोपाल घोष दैट नेटिव ओरेटर डू स्पीक्स लाइक बुर्के, हैज स्पोकन इन द कैलकटा टाउन हाल लास्ट वीक इन सपोर्ट आफ इंडियंस एंड रिंग द सिविल सर्विस! व्हाट द डेविल द गवर्नमेंट इज अप टु आई डू नाट नो, डेविड व्हाइ डु दे अलाउ दीज थिंग्स टु गो ऑन, बियांड मी, थिंग्स आर नॉट लुकिंग क्वाइट ऐज दे औट टु। हियर इस अनदर — यू नो हरीश मुखर्जी, द डाउनी ओल्ड बर्ड, ऑफ द हिंदु पैट्रिअट?

—येस, आइ थिंक सो।

—ही लेड ए डेप्युटेशन द अदर डे टु आवर ओल्ड गवर्नर अगेंस्ट अस, प्लांटर्स यू सी?

—डेप्युटेशन! आइ वुड हैव स्कैटर्ड देअर डेप्युटेशन विथ द टो आफ माइ बूट।

—बट द ओल्ड मैन टाक्ड टु देम लाइक ए बेनेवोलेंट ब्लूमिंग फादर। दैट व्हाज व्हाइ आइ से डेविड, थिंग्स आर कमिंग टु ए हेड। टेल योर प्रेशस ओल्ड डीवान टु कार्ब हिज पूप। शैल आइ आर्डर ए टॉट आफ रम?

—नो, थैंक यू, शिप्टन, रियलि आई हैव गॉट टु गो नाउ।

दीवान राजाराम रात को बहुत देर से घर लौटे। घोड़े से उतरकर हांक लगायी — गुरे!

गुरुदास साइस ने आकर घोड़े की लगाम पकड़ ली। घर में घुसने से पहले पत्नी को आवाज देकर कहा — अजी, गंगाजल दे दो! अंदर पहुंचे तो देखा जगदंबा पूजाघर में बैठी थी। याद आया कि शनिवार था और जगदंबा हर शनिवार को शनि की विशेष पूजा करती थी। राजाराम के हाथ मुंह धोकर आते ही वहीं बैठे-बैठे जगदंबा बोली — पोथी कौन पढ़ेगा?

—रुको, कपड़े बदलकर आता हूं।

राजाराम निष्ठावान ब्राह्मण थे। रेशम की धोती पहन कर कुशासन पर बैठ कर भक्ति भाव से शनि की कथा पढ़ी उन्होंने। शनि की कुपित दृष्टि से अपने परिवार को और स्वयं को बचाने, ऐश्वर्य, पद, मान-सम्मान बढ़ने के उद्देश्य से जगदंबा बड़े मनोयोग से शनि की पूजा किया करती थी। शनि की कथा खत्म करके राजाराम ने प्रतिदिन की तरह निष्ठापूर्वक संध्या की। साहबों के संसर्ग में रहते थे, इसलिए यह और भी आवश्यक हो गया था — गंगाजल सिर व बदन पर छिड़के बिना घर के अंदर तक नहीं घुसते थे वह।

जगदंबा ने उनके सामने शनि पूजा की सित्री और एक कटोरी मुड़कि लाकर रख दी। खाकर एक लुटिया पानी पिया उन्होंने, फिर पान खाकर बोले — जानती हो आज कोठी में क्या हुआ?

जगदंबा ने पूछा — बेल का शरबत पियोगे?

—अरे बेल का शरबत रखो अभी, पहले सुनो मैं क्या कह रहा हूं?

—अच्छा बोलो, क्या हुआ?

—बड़े साहब ने छोटे साहब को खूब डांटा।

—क्यों?

—रामकनाई कविराज को हमने थोड़ा-सा ककहरा पढ़ाया था। उसे सीधा करने के लिए मुझे कोई क्या सिखायेगा। रामू सरदार के खून के मामले में साले ने नीलकोठी को नीचा दिखा दिया। वह तो जिला मजिस्ट्रेट बड़े साहब को बहुत मानता है, इसीलिये इस बार बच गया मैं। नहीं तो जेल हो जाती मुझे। मैं तो इस वंचक को ऐसा पाठ पढ़ाता कि पानी पिलाने वाला नहीं मिलता। पर बड़े साहब ने कहा है कि ऐसा मत करो। नील कोठी के जुल्म और जबर्दस्ती की बात सरकार बहादुर के कानों में पहुंच गयी है। कलकत्ते में कोई हरीश मुखुज्जे है, वह अखबारों में धुंआधार लिख रहा है। बहुत गोलमाल शुरू हो गया है। अब ऐसा करने से नीलकर साहबों का नुकसान होगा। छोटे साहब ने मुझे बुलाकर बताया कि गया मेम ने बड़े साहब के कान भरे हैं। चुगलखोर है हरामजादी।

—क्यों, गया मेम तुम्हें तो बहुत मानती है?

—अरे छोड़ो। जिसका चरित्र ही नहीं रहा, उसका बाकी क्या रहा? उसका क्या मानना और क्या नहीं मानना। कुछ कर नहीं सकता, नहीं तो राजाराम को अब यह सिखाना नहीं पड़ेगा कि किसको कैसे मुट्ठी में किया जाता है।

—तुम्हें भी छोटे साहब ने डांटा है क्या?

—मुझे कैसे डांटेंगे। मेरे बिना नील की खेती बंद हो जायेगी। कोठी में उल्लू बोलेंगे। मैं और प्रसन्न अमीन न रहें तो एक कट्ठा जमीन पर भी कोई नील का निशान नहीं लगा सकता। नबू गाजी को किसने सीधा किया था? रहातुनपुर की प्रजा को किसने काबू में किया था? यह छोटे साहब या बड़े साहब, किसी का काम नहीं था। आज अगर इस राजाराम की आंखें बंद हो जायें तो काम ही...

बीच में ही जगदंबा भन्नाई — यह शनिवार की शाम को कैसी बातें मुंह से निकाल रहे हो? दुर्गा-दुर्गा-राम राम। ऐसी बात भी कोई मुंह से निकालता है?

—तिलु वगैरह कोई आयी थी?

—निलु आयी थी मुन्ने को लेकर। बड़ा ही लुभावना चांद सा बच्चा है। बड़ी उमर हो उसकी। थोड़ा छेना दिया था खाने को। बड़ा खुश हुआ खाकर।

—छेना मत दिया करो, पेट में दर्द होगा।

बात खत्म होने से पहले ही तिलु मुन्ने को गोद में लिए आ पहुंची। मुन्ना बड़ा हो गया था, हर बात समझने लगा था। राजाराम की ओर हाथ बढ़ाकर बोला, भैया...

मुन्ने को गोद में लेकर राजाराम बोले — मैं तुम्हारा मामा लगता हूं राजा या भैया?

मुन्ने ने चट से कहा — भैया।

उसका मुंह चूमकर राजाराम ने कहा — तुम्हारी मां का भी भैया और तुम्हारा भी भैया? फिर तिलु से पूछा — भवानी क्या कर रहा है?

—वह और चंद्र मामा बातें कर रहे हैं। मैं कटहल तोड़कर दे आयी हूं दोनों को खाने के लिये। एक नारियल लेने आयी थी। दोनों कच्चे नारियल के साथ मूड़ी खाने को कह रहे हैं...

—ले जा अपनी भाभी से मांगकर। एक क्या दो ले जा...

तभी जगदंबा उठकर खिड़की के पास गयी और बाहर झांककर बोली... अजी, बाहर तुम्हें कोई बुला रहा है...

—कौन है?

—मुझे क्या पता। गोपाल माइंदर कह रहा है।

बाहर बड़े साहब के अर्दली श्रीराम मोची को देखकर राजाराम आश्चर्यचकित हो गये। ऐसी कौन सी विशेष आवश्यकता पड़ गयी जो इतनी रात को साहब ने अर्दली भेजा।

—क्या है रेमो?

—मालिक, दोनों साहब बड़े बंगले में बैठे शराब पी रहे हैं। कोई जरूरी खबर है। मुझे कहा है कि तुरंत घोड़े से आने को कहना।

—क्या बात है, तुझे पता है?

—यह तो मुझे मालूम नहीं मालिक। कुछ गोलमाल होगा, नहीं तो इतनी रात को क्यों बुलाते? आप मेरे साथ चलिए। मैं बल्लम लाया हूं। हर तरफ हमारे दुश्मन हैं, रात बिरात को अंधेरे में निकलना ठीक नहीं है।

हंसी आ गयी राजाराम को। श्रीराम आज उसे सीख दे रहा था। घोड़े पर चढ़कर उनके एक हांक लगाते ही दो गांवों के लोग थर्रा उठते हैं। आस-पास के दस-बीस मौजों में कौन नहीं जानता उन्हें। आधा घंटे के अंदर राजाराम ने बंगले पहुंचकर साहब को सलाम ठोका। दोनों के सामने छोटी टेबुल पर शराब की बोतल और गिलास रखे थे। बड़े साहब हुक्के की चांदी की नली मुंह में लगाये गुड़गुड़ा रहे थे... कमरा तमाखू की महक से महमह कर रहा था। छोटे साहब तमाखू पीते नहीं थे, पर कभी-कभी पान में खा लिया करते थे, वह भी बड़े साहब और उनकी मेम से छुपाकर। बड़े साहब ने छोटे साहब से अंगरेजी में कुछ कहा। छोटे साहब राजाराम की ओर देखकर बोले — दीवान, हम लोग बड़ी भारी विपत्ति में फंस गये हैं।

इसका अनुमान राजाराम को पहले ही हो गया था, परंतु प्रकट में बोले — कैसी विपत्ति साहब?

कलकत्ते से अभी खबर आयी है कि नील की खेती के कारण लोग नाराज हो रहे हैं और गवर्नमेंट उनकी सहायता कर रही है। कलकत्ते के बड़े-बड़े लोगों ने अखबारों के जरिये बहुत शोर मचा रखा है। बताओ, क्या करना चाहिए। बता सकते हो कि शुलको, शुभ

रत्नपुर, उलूसी, सात बेड़े और नहाटा इन गांवों में कितनी जमीन पर नील के लिये निशान लगाये हैं?

राजाराम ने मन ही मन हिसाब लगाकर कहा — अंदाज से सात सौ, साढ़े सात सौ बीघा होगी।

तभी बीबी शिप्टन बड़े बंगले के सामने टमटम से उतरीं। साईस भजा मोची ने पीछे से आकर मेमसाहब के हाथ से लगाम ली और टमटम से उतरने में सहायता की। काली अंधेरी रात थी.... मेम साहब कहां गयी थीं इतनी रात को? राजाराम ने सोचा, पर मुंह से पूछने का साहस नहीं हुआ।

मेम साहब ने उन लोगों की तरफ देखकर अंग्रेजी में कुछ कहा। हाय राम! यह क्या? भजा टमटम के पायदान से एक मरा खरगोश उतार रहा था। मेम साहब के हाथ के इशारे पर उसने खरगोश साहबों के सामने रख दिया। मेम साहब के हाथ में बंदूक थी। तो इसका मतलब है कि वह नदी किनारे अंधेरे मैदान में खरगोश का शिकार करने आयी थी।

मेम साहब के आते ही दोनों साहब उठकर खड़े हो गये। तीनों में जाने क्या बातें हुईं, फिर मेम साहब ने राजाराम की ओर देखकर पूछा — क्यों, कैसा रहा शिकार?

विनय से विगलित होकर राजाराम ने कहा — जी, बहुत बढ़िया। कहां मारा मेम साहब?

—बांओड़ के किनारे.... इधर...

भजा ने स्पष्ट किया — सबाइपुर के विश्वासों के फूस के मैदान में।

—ओ... बड़ी दूर चली गयी थीं इतनी रात को।

—मेरे पास बंदूक है, फिर डर किस बात का? भूत नहीं खा जायेगा।

—जी नहीं, भूत भला कहां से आयेगा?

—नो, नो, भजा बोलता था मैदान में भूत है। रोशनी जलती है। जाता है, आता है... क्या नाम बताया था भजा? आलो भूत?

भजा के उत्तर देने से पहले ही राजाराम बोले — जी, मुझे मालूम है — एले भूत। मैं खुद कई बार उसके सामने पड़ा हूं। वे आदमियों को खुछ नहीं कहते।

यह सुनकर बड़े साहब हंसकर बोले — भूत नहीं, तुम्हारा सर है। वह गैस है। गैस जल उठती है तो तुम्हें वह भूत नजर आने लगता है।

इसके बाद उन्होंने मेमसाहब से अंग्रेजी में कुछ कहा, जो उनकी समझ में नहीं आया।

मेमसाहब ने पूछा — खरगोश कैसा है?

— जी, बहुत अच्छा।

—तुम खाते हो?

— नहीं साहब, मैं नहीं खाता। हमारे में कुछ लोग हैं, जो खाते हैं।

तभी प्रसन्न अमीन और मुहर्रिर गिरीश सरकार बहुत से बही-खाते लिये आ पहुंचे। राजाराम घाघ आदमी थे, समझ गये कि सारी रात कोठी के दफ्तर में बैठकर काम करना पड़ेगा।

इसके बाद सारी रात काम चलता रहा। छोटे साहब, राजाराम, प्रसन्न अमीन और गिरीश व गदाधर मुहर्रिर बैठे काम करते रहे। काम और कुछ नहीं, मार्का-खतियान बदलना था। विभिन्न गांवों में नील का निशान लगी जमीन को कम करके दिखाना था। जरीब की असली खतियान की नकल करने की हिदायत दी डेविड साहब ने।

राजाराम बोले — साहब एक जरूरी चीज का क्या होगा?

डेविड — कौन-सी चीज?

—किसानों के अंगूठों के निशानों का क्या होगा? दाग खतियान में हमने अपनी सुविधा के अनुसार अंगूठे लगवाये थे। अब वह नकल के खाते पर अंगूठे क्यों लगायेंगे? नंबरी बदमाश हैं सब। नबू गाजी के मामले में रहातुनपुर तक हमारे खिलाफ है। रामू सरदार के खून के मामले में बंद की प्रजा नाराज है। बताइये, कैसे करेंगे?

—जाली अंगूठे लगाने पड़ेंगे।

—बड़ा गड़बड़ मामला हो जायेगा साहब। सोच-समझकर काम करना चाहिये।

—तुम ही डरोगे तो कैसे काम चलेगा दीवान? डंकिंसन की याद नहीं है? बस एक खाना और दो पेग ह्विस्की।

—एक खाना नहीं साहब, बहुत से खाने। आप सोचकर देखिये। फांसी के मैदान का मामला याद है आपको? गिरधारी धीवर को हमने ही फांसी दी थी। पर उस जमाने और आज के जमाने में बहुत अंतर है। अब श्रीराम बेयरा को रात को कहीं जाते समय हथियार लेना पड़ता है। आज ही बताया उसने।

सुबह तक मोमबत्ती जलाकर कोठी के दफ्तर में काम चला। सबके सब थककर चूर हो गये। डेविड साहब भी वहीं डटे रहे, काम बंद हो जाने के डर से एक मिनट को वहां से उठकर नहीं गये। सूरज निकलने से पहले ही बड़े साहब आ उपस्थित हुए। दोनों साहबों में कुछ बातें हुईं। फिर उन्होंने राजाराम से पूछा — मार्का खतियान बदल गया?

—जी हां।

—सब ठीक है?

—अभी तीन दिन का काम बाकी है साहब। अंगूठे लगाने का क्या करेंगे साहब? इतने अंगूठे कहां से मिलेंगे, आप ही बताइये साहब।

—करने पड़ेंगे।

—मेरी अक्ल में तो नहीं आ रहा कि कहां से लायेंगे। जीवन के अंतिम समय में क्या जेल की चक्की पीसते हुए मरना पड़ेगा? जाली अंगूठे कैसे लगाऊंगा?

—जब सभी कुछ जाली है तो वह भी जाली होगा। दिमाग लड़ाना पड़ेगा। पैसे

खर्च करने से सब हो जायेगा। मन लगाकर काम करो। इस महीने से तुम्हारे और प्रसन्न अमीन की दो रुपये तनख्वाह बढ़ा दी, जाओ।

सिर झुकाकर दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार करते हुए राजाराम ने कहा — आपका ही खा रहे हैं, साहब। रखने वाले भी आप हैं और मारने वाले भी आप ही हैं।

अंग्रेजी में जाने क्या कहकर बड़े साहब कमरे में चले गये।

दोपहर का वक्त था।

प्रसन्न अमीन काम काफी आगे तक खींच लाये थे। गिरीश ने गदाधर मुहर्रिर से दबी जुबान में कहा — खाने-पीने का क्या इंतजाम है, गदाधर...?

आंख पर लगे चश्मे की डोरी उतारकर चारों ओर नजर घुमायी गदाधर ने, फिर कहा — दीवान जी से कहो ना।

—मुझसे नहीं कहा जायेगा। शर्म आती है।

—इसमें शर्म की क्या बात है? पेट में चूहे नहीं दौड़ रहे?

—वह तो दौड़ रहे हैं।

—तो फिर कहो। मैं नहीं कहूंगा।

उसी समय पेशकार नरहरि ने बाहर से आकर सबको आवाज लगाकर कहा — दीवान जी, अमीन बाबू, स्नान हो गया सबका? खाना तैयार है।

राजाराम बोले — मुझे अभी देर लगेगी, तुम लोग खा लो जाकर।

दीवानजी को छोड़कर सब साथ खाने बैठ गये। वह नीलकोठी की परिधि में कुछ नहीं खाते थे। वैसे नहाना व पूजा-पाठ भी नहीं हुआ था।

नरहरि पेशकार खाना अच्छा बनाता था। उसी ने बनाया था। साथ में गोपाल पांडे लग गया था। खाते हुए सब एक साथ साहब की प्रशंसा कर रहे थे — कुछ भी कहो, काम कराकर खिलाना पिलाना जानता है। चटनी, दही, कई तरह की मछलियां, भात, सब्जी।

गदाधर पेटू आदमी था, कह ही बैठा — ओ पेशकर मोशाय, सब कुछ तो बनाया, मिठाई का कोई इंतजाम नहीं किया?

उन दिनों रसगुल्लों का रिवाज नहीं था, मिठाई के नाम पर बस खांड के खिलौने, बताशे, लड्डू वगैरह होते थे। नरहरि बोला— मेरे दिमाग से बात निकल गयी बिल्कुल। नहीं तो छोटे साहब तो मना नहीं करते।

भात का गोला निगलकर गदाधर बोला — यह तो सही है, साहब लोग खिलाना जानते हैं, क्यों प्रसन्न भैया?

प्रसन्न चक्रवर्ती पिछले कुछ दिनों से बड़े अन्यमनस्क से थे। मन बड़ा उखड़ा-उखड़ा हो रहा था। हर वक्त जाने क्या सोचते रहते थे। गदाधर की बात जैसे सुनी ही नहीं। यह काम का बोझा, यह खाना, कोई और दिन होता तो जी खुश हो जाता —

पर आज कुछ होश ही नहीं था। कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था। काम करना पड़ता है इसलिये कर रहे थे। खाना पड़ता है, इसलिये खा रहे थे — चाबी भरे खिलौने की तरह! हर वक्त एक ही ख्याल।

आखिर बात क्या थी?

असल में वह गया मेम के प्रेम में पड़ गये थे।

कैसा आकर्षण था, बताया नहीं जा सकता था। और किससे क्या कहते? गया मेम बड़ी ऊंची डाल का फल थी। उन जैसे सामान्य आदमी की हाथ बढ़ाने की हिम्मत भला कहां थी। उनकी ओर वह अच्छी नजरों से देख लेती थी, यही बहुत था। अच्छी नजर का मतलब था कि अपने प्रति उनके प्यार की बात जानकर भी शोरगुल नहीं मचाया था उसने, वरन् जब-तब प्रश्रय देती रही थी।

खाते हुए भी उसका चेहरा आंखों के सामने घूम रहा था। कौर गले से नीचे नहीं उतर रहा था। इतने दिन बाद सुख का आस्वाद मिला था। किसी औरत ने कभी उनकी ओर अच्छी नजरों से नहीं देखा था। कितना बड़ा अभाव था जीवन में। पहली बार जिसके साथ विवाह हुआ था, नाक से अटक-अटक कर बोलती थी, हांलाकि नाम सरस्वती था। जैसी भी थी, पर पति की बहुत सेवा करती थी। उम्र उन्नीस-बीस होगी उनकी। पिता रतन चकत्ति बहुत कड़े शासन में रखते थे, उन्होंने ही देख-सुन कर विवाह किया था, कुछ कहने की हिम्मत ही नहीं थी।

रात को खाते समय सरस्वती नींबू काटकर दे देती। इमली, हरी मिर्च और तेल मिलाकर दे देती। चड़क के समय एक मोटी सी सूती साड़ी पाकर ही चेहरा खिल उठता था पत्नी का। कहा करती थी, मेरी मां के घर चलो, करेले डालकर कटहल के बीजों की चच्चड़ि खिलाऊंगी। वहां पेड़ पर बहुत कटहल लगते हैं! इतने बड़े-बड़े! बीज भी इतने बड़े-बड़े!

दोनों हाथ फैलाकर दिखा देती।

कभी-कभी अपने बेसुरे गले से गाना शुरू कर देती थी। वह गाना सुनकर हंसी नहीं आती कभी, बल्कि मन को कष्ट होता। देखने-सुनने में भी अच्छी नहीं थी — काला रंग, बड़े-बड़े दांत। पर तब भी पालतू कुत्ते-बिल्ली से भी प्यार हो जाता है।

पहला बच्चा होने में सरस्वती दुनिया से चली गयी। दूसरा विवाह हुआ राजनगर के सनातन चौधरी की छोटी लड़की अन्नपूर्णा के साथ। अन्नपूर्णा देखने-सुनने में अच्छी थी। गोरा रंग होने के कारण बल्कि उसे गुमान ही था। वह अभी भी अपने बाप के घर है। बच्चा कोई हुआ नहीं। कभी मनप्राण से पति की गृहस्थी नहीं संभाली। शायद बाप के पैसे के कारण वह अपने को यहां खपा नहीं पायी। इतना महीन चिवड़ा किसी इक्के-दुक्के के घर होता होगा। सात कोठे धान के थे उसने यहां।

अन्नपूर्णा ने बहुत बड़ा आघात पहुंचाया जीवन में। पैसे का इतना अहंकार। अगर

प्रसन्न चकत्ति मर्द का बच्चा है, रतन चकत्ति का बेटा है तो किसी दिन अन्नपूर्णा को सबक सिखायेगा।

उन्हे अच्छी तरह याद है, चैत का महीना था, गरमी का उमस भरा दिन था। अन्नपूर्णा बोली थी — मुझे हार तुड़वाकर हाथों की पोंहची बनवा दो।

प्रसन्न चकत्ति की हालत उन दिनों खस्ता थी। पिता मर गये थे और वह गांड़ापोता के हरिप्रसन्न मुखुज्जे की जमींदारी के आफिस में सामान्य वेतन पर नौकरी करते थे। उन्होंने कहा था — क्यों, अच्छा तो है। कितना अच्छा लगता है गले में।

—खाक अच्छा लगता है! ब्याह के वक्त बना था, पुराना हो गया है। मुझे पोंहची बनवा दो।

—दो साल बाद बनवा दूंगा।

—दो साल बाद तो मैं मर जाऊंगी।

—छिः, ऐसी बात मुंह से नहीं निकालते।

—कुछ करने की हिम्मत नहीं है, यह क्यों नहीं कहते। ऐसे आदमी के पल्ले से बांध दिया बापू ने मुझे। दुहेजू के साथ भी कोई ब्याह होता है? वह भी अगर मन की पूरी करता तो मन को समझा लेती। पर जिसके भाग ही फूटे हों वह क्या करे...।

यह कहकर वह धाड़ें मारकर रोने लगी थी। उसके अगले साल अगहन में बाप के घर गयी तो फिर वापस नहीं लौटी। सात-आठ साल हो गये इस बात को।

उसके बाद वह बहू को लेने राजनगर दो तीन बार गये थे। अन्नपूर्णा की मां ने हर बार दस तो बातें सुनायीं और लड़की को भी नहीं भेजा। कह दिया — ज्यादा शौक है तो जाकर फिर से ब्याह कर लो। तुम्हारे घर धान उबालने और चावल कूटने मेरी लड़की नहीं जायेगी। जब किसी लायक हो जाओ तो पालकी लेकर आना और लड़की को ले जाना।

उसके बाद फिर नहीं गये वह।

उस दिन पोखर के किनारे बैठे थे प्रसन्न अमीन।

गया मेम और उसकी मां वरदा बाग्दिनी उसी समय वहां से गुजरती थीं। बस एक झलक। और कुछ नहीं चाहते वह।

दूर से गया को आते देख मन खुशी से नाच उठा। दिल की धड़कन तेज हो गयी।

अकेली आ रही थी गया। मां साथ नहीं थी।

पास आकर प्रसन्न को देखकर गया बोली — काका बाबू आप! अकेले बैठे हैं?

—हां।

—अकेले कैसे बैठे हैं?

—तुम आने वाली थी न, इसलिये।

—तो इससे आपको क्या?

—कुछ नहीं। ऐसे ही... तुम्हारी मां कहां है?

—मां धान कूट रही है। दूसरों का धान उबालकर सुखाकर रखा है। वर्षा आ गयी है, जिसका धान है, उसे चावल तो देना ही पड़ेगा? अच्छा, बैठिये आप। मैं चलती हूं।

—ए गया...

—क्या है?

—थोड़ी देर ठहरोगी नहीं?

—ठहरकर क्या करूंगी? बारिश आ गयी तो भीगकर बीमार नहीं पड़ूंगी?

प्रसन्न चकत्ति मुग्ध दृष्टि से गया की ओर देख रहे थे।

गया ने पूछा — क्या देख रहे हैं?

प्रसन्न ने लज्जित स्वर ने कहा —नहीं, कुछ नहीं। देखता क्या? तुम सामने खड़ी हो फिर और क्या देखूंगा?

—क्यों मेरे रहने से क्या होता है?

—सोच रहा हूं, इतना अच्छा दिन...

गया ने जरा गुस्से से कहा — ऐसी ऊल-जलूल बातें सुनने का वक्त नहीं है मेरे पास। चलती हूं।

—थोड़ी ठहरो ना गया? थोड़ी देर रुकने से आसमान तो नहीं टूट पड़ेगा।

—नहीं, मैं पत्थर की तरह यहां नहीं खड़ी रह सकती। वह देखिये, बादल कैसे घिरते आ रहे हैं?

घाट, बांओड़, बंद के उस पार हरे धान के और नील के खेतों पर सावन की घनी काली घटाएं घिर आयी थीं। सफेद बगुलों का दल दूर उड़ता दिखायी दे रहा था। सांय-सांय ठंडी हवा बहने लगी थी। नदी का दूसरा किनारा बारिश के कारण धुंधला हो गया था।

परेशान होकर प्रसन्न चकत्ति बोले — गया, बारिश तो आ गयी, भीग जाओगी। चलो, मेरे घर चलो।

—नहीं, मैं कोठी जा रही हूं...

—गया, मेरी बात तो सुनो। भीग जाओगी।

—भीगूंगी तो भीग जाऊंगी।

—मैं क्या भले के लिये नहीं कह रहा गया? कोई नहीं है मेरे घर पर। चलो न।

—नहीं, मैं नहीं जाऊंगी। आपको क्या काका बाबू नहीं कहती मैं?

—तो उससे क्या हुआ? मैंने गलत क्या कहा तुमसे? बारिश में भीग जाओगी और मेरा घर पास है, इसलिये वहां चलने को कहा। इसमें क्या गलत कह दिया मैंने?

—ना, बेकार की बातें सुनने का वक्त नहीं है। जल्दी से भागिये आप। वह देखिये उधर, बारिश भागी आ रही है।

—मुझसे नाराज तो नहीं हुई गया, ए गया... सुनो तो...। मेरा मरा मुंह देखो... ओ गया।

गया भागते हुए गर्दन घुमाकर बोली — नहीं...। कैसा पागल आदमी है?

विनती के सुर में पीछे से चिल्लाये प्रसन्न — किसी से कहना मत गया। हे भगवान्!...

दूर से गया मेम की आवाज आयी —भीगियेगा मत काका बाबू... घर जाइये काका बाबू...

खाड़ी की सीप चांद से और कितने अमृत की आशा करती। क्या उतना ही काफी नहीं था?

कविराज रामकनाई को बड़ा आश्चर्य था कि नील कोठी के कारिंदे अब उन्हें जरा भी तंग नहीं करते थे।

आज फिर गया मेम दूध दे गयी थी। यों तो वह प्रायः कुछ न कुछ लाती ही रहती थी। शुरू-शुरू में वह मूल्य न चुका सकने के कारण लेते नहीं थे, पर अब गया ने पूरी तरह से बाप-बेटी का सम्पर्क स्थापित करके रास्ता सहज बना दिया था। लोगबाग फिर से उन्हें बुलाने लगे थे। पारिश्रमिक के रूप में दुअन्नी, चवन्नी, कभी मछली तो कभी धान मिलने लगा था।

नालू पाल की पत्नी तुलसी गर्भवती थी, पेट में दर्द था और भी जाने क्या-क्या तकलीफ थी। कुछ दिन हरीश डाक्टर का इलाज चला था, ठीक नहीं हुई। लोगों ने कहा — तुम्हारे पास तो पैसा है नालू, किसी अच्छे कविराज को दिखाते....

गरीब होने के कारण रामकनाई अच्छे वैद्यों की गिनती में नहीं आते थे। लोग अर्थ को ही मान देते हैं, सत्यता अथवा ज्ञान को नहीं। रामकनाई भी अगर हरीश डाक्टर की तरह पालकी पर चढ़कर रोगी देखने जाते तो उन्हें भी बड़ी आसानी से विजिट के आठ आने मिल जाते।

नालू ने न जाने क्या सोचकर रामकनाई को ही बुलवा भेजा। रोगी की नब्ज देखकर रामकनाई ने कहा — दवा तो दे दूंगा पर अनुपान की व्यवस्था करनी पड़ेगी। कलमी शाक का रस सेंधा नमक मिलाकर हंडिया में सात दिन तक रखना होगा।

नालू अब पहले वाला नालू नहीं रह गया था, व्यापार में धन कमाकर संपन्न हो गया था। पिछले साल आठ कमरों का मकान बनाया था। ऐसे देहातों में आठ कमरों का मकान बनाना बड़े आदमियों का लक्षण माना जाता था और जो दुर्गा उत्सव कर देता उसकी गिनती तो बहुत बड़े आदमियों में होने लगती थी। पिछले साल नालू ने वह भी कर दिया था। पूरे गांव का भोज किया था। उसके घर कौड़ियां जड़ी नयी चमचमाती अलमारी थी, नक्काशीदार छींका, रंगीन रस्सियों से लटका हुआ था, महीन शीतलपाटी थी, कांसे का पान का डब्बा था, राख से मंजा हुआ झिलमिल करता पीतल

का दीपदान था अर्थात् एक संपन्न गृहस्थ के घर जो होता है, सब कुछ था। रोगिणी के कमरे की साज-सज्जा के उपकरणों पर रामकनाई की प्रशंसनीय दृष्टि निबद्ध देख कर नालू बोला — इस बार घूर्णी के कुम्हारों के बनाये मिट्टी के फल लाने की सोच रहा हूं। वह कौड़ियों वाला अलगना देख रहे हैं, ढाई रुपये में विनोदपुर के एक ब्राह्मण की लड़की से खरीदा है। अपने हाथ से बनाया था उसने।

—बहुत सुंदर चीज है।

—कविराज मोशाय, बीमारी ठीक हो जायेगी ना?

—नहीं ठीक होगी तो आयुर्वेद का माधवनिदान शास्त्र झूठा साबित होगा। पर एक बात का ख्याल रहे, अनुपान और सहपान बिल्कुल सही होने चाहिए। दवा से रोग ठीक नहीं होगा, अनुपान और सहपान से होगा। कलमी शाक का रस पीना पड़ेगा — वह हुआ अनुपान। समझे?

—जी।

किसी शूद्र के घर का अनाज नहीं खाते थे रामकनाई, अतः जलपान में नारियल की गिरी, नारियल के लड्डू व बताशे वगैरह दिये गये। दक्षिणा में एक कठौता चावल, मदर की दाल की बड़ियां और अठन्नी मिली।

रास्ते में भवानी मिल गये। हाथ जोड़कर नमस्कार किया उन्होंने।

रामकनाई ने पूछा — अच्छे हैं जमाई बाबू?

—आपका आशीर्वाद है। जरा मेरे घर चलना पड़ेगा। मुन्ने को दो-तीन दिन से खांसी-बुखार है, देखते जाइये।

—हां, हां, चलिये।

मुन्ना अपनी मामी का बनाया रंग-बिरंगे फूलों वाला कांथा ओढ़े सो रहा था। रामकनाई ने नब्ज देखकर कहा — नया बुखार है। गोली दे दूंगा, शहद और हरसिंगार के पत्ते के रस में मिलाकर चटा देना।

उसकी मां तिलु और दोनों छोटी मां उत्सुक व शंकित मन वहीं खड़ी थीं। वे तीनों इस गांव की बहू नहीं, बेटियां थीं और इसलिये उन्हें हरेक के सामने निकलने या जहां-तहां जाने की कोई रोक-टोक नहीं थी। परंतु अगर दूसरे गांव की लड़कियां होतीं और इस गांव की बहू तो किसी अपरिचित व्यक्ति के सामने निकलना तो बहुत दूर की बात होती, अपने पति के सामने भी दिन के उजाले में आना और बात करना बेहयापना समझा जाता।

रूआंसे कंठ से तिलु ने पूछा — मुन्ने का बुखार कैसा है कविराज मोशाय?

—कुछ नहीं बेटी, नया बुखार है। इस ऋतु में हर तरफ हो रहा है। डरने को कोई बात नहीं है।

—ठीक हो जायेगा ना?

—नहीं ठीक होगा तो हम किसलिये बैठे हैं?

निलु बोली — आपके पैरों पड़ती हूं करिवाज मोशाय। जरा अच्छी तरह देख लीजिए मुन्ने को।

—बेटी, मैं कह रहा हूं न कि दवा से तीन दिन में बिल्कुल ठीक हो जायेगा मुन्ना। आप लोग डरिये मत।

—उसके गले में गर्र-गर्र आवाज क्यों हो रही है?

—कफ कुपित हो गया है और नाड़ी रसस्थ। इसमें ऐसा हो जाता है। चिंता मत करो। मेरे सामने ही यह वटी पीसकर खिला दो। खरल है?

—खरल अभी सिधु काका के घर से ले आती हूं।

तिलु बोली — कविराज मोशाय, समय हो गया है, आप यहीं खा लीजिये। दोपहर को घर आये आदमी को भी कहीं बिना खाये जाने दिया जाता है? आपको खाना ही पड़ेगा।

भवानी ने भी हाथ जोड़कर कहा — बस भात और शाक। गरीब के घर का रूखा-सूखा जो भी है।

उन लोगों के सरल व आत्मीय व्यवहार से रामकनाई बड़े ही अभिभूत एवं मुग्ध हो गये। पहले कभी किसी ने उनको इतना आदर सम्मान नहीं दिया था। और वह भी दीवान जी के बहनोई से तो ऐसे व्यवहार की कल्पना भी नहीं कर सकते थे वह।

तिलु ने दो आसन लगाकर दोनों को खाना खिलाया। इतनी मनुहार से कभी किसी ने नहीं खिलाया था उन्हें। कम से कम उन्हें तो याद नहीं आ रहा था। मूंग की दाल, परवल, मछली का झोल, आमड़े की चटनी, घर का जमाया दही, कटहल और केला। जाने किसका मुंह देखकर उठे थे आज! विभोर हो गये रामकनाई।

खाने के बाद बड़ा गंभीर प्रश्न पूछ बैठे वह भवानी से — अच्छा जमाई बाबू, आप तो ज्ञानी, साधु आदमी हैं। सब आपकी प्रशंसा करते हैं। हमने तो खास पढ़ाई-लिखाई की नहीं। सामान्य संस्कृत सीखकर तेघरा सेनहाटि के पतितपावन कविराज से आयुर्वेद पढ़ा था। यह कहकर अपने गुरु के प्रति हाथ जोड़ दिये उन्होंने, फिर बोले — अच्छा बताइये आदि संवाद क्या है?

—क्या कहा? कौन सा संवाद?

—आदि संवाद।

—जी, मैं ठीक से समझ नहीं पाया आप क्या कह रहे हैं।

—ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों ने मिलकर ही तो जगत की सृष्टि की थी। अब इसके भीतर की बात खोलकर बताइये। अपने कमरे में लेटे-लेटे अनेकों बार मन में यह सब प्रश्न उठते हैं। कैसे क्या हुआ?

मुसीबत में पड़ गये भवानी। ब्रह्मा, विष्णु ने कोई उनसे परामर्श करके तो संसार की सृष्टि की नहीं थी, फिर वह भला भीतर की बात कैसे बता सकते थे? कहने को था

क्या? पातंजल, सांख्य, वेदांत सब याद आया, पर निपट देहाती कविराज के सामने उनकी बोलती बंद थी। हंसी भी आ रही थी जोर से। आदि संवाद।

अचानक रामकनाई बोले — लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश सब एक हैं। एक ही तीन हैं और तीनों ही एक हैं। क्यों, क्या ख्याल है?

भवानी की आंखों के सामने उस क्षण रामकनाई अगर चतुर्भुज विष्णु में रूपांतरित होकर ऊपर के दोनों हाथों को वरामय मुद्रा में उठाकर कहते — "वत्स, वरं वृणु-इहागतोहस्मि" तो भी वह शायद इतने विस्मित नहीं होते जितनी उनके मुंह से अद्वैत ब्रह्मवाद का तत्व इतनी सहज व सरल भाषा में सुनकर हुए।

कुछ देर के लिये तो भवानी स्तब्ध रह गये। वह आदमी को पहचानते थे। बहुत कुछ देखा था उन्होंने, बहुत घूमे थे वह। मुंह उठाकर बोले — कविराज मोशाय, ठीक कह रहे हैं आप। आपको क्या समझाऊंगा मैं? आप ज्ञानीरूप हैं।

खिलखिला कर हंस पड़े रामकनाई। बोले — हां, जमाई बाबू, अब पकड़ा आपने। एक ज्ञानी आदमी ढूंढ निकाला न आपने।

तिलु भी रामकनाई की बात सुनकर अवाक रह गयी थी। पति से उसने बहुत कुछ सीखा था पढ़ा था, वेदांत का भी मोटा ज्ञान था। पर रामकनाई के मुंह से उसकी इतनी सहज व्याख्या सुनने की आशा नहीं थी उसे। आगे बढ़कर बोली — आपके बारे में बहुत कुछ सुना है मैंने। नील कोठी के लोगों और मेरे भाई ने बड़े जुलुम ढाये हैं आप पर, लेकिन आप रुपये लेकर साहबों के पक्ष में झूठी गवाही देने को तैयार नहीं हुए। कोई झूठ नहीं बुलवा पाया आपसे। मुझे सब पता है। कितने दिनों से आपको देखने की इच्छा थी मन में। मैंने सोचा भी नहीं था कि आज आप हमारे घर आयेंगे और मुझे आपको खिलाने का सौभाग्य प्राप्त होगा। आपकी बातें सुनकर पता चला कि चूंकि आप सत्य का आश्रय लिये हुए हैं, इसलिए आपके मन में सत्य बात का अपने आप ही उदय हुआ है।

भवानी सोच भी नहीं सकते थे कि तिलु इतनी बातें इस तरह कह सकती है। उसकी ओर देखकर उन्होंने कहा — बहुत खूब।

तिलु ने हंसकर पूछा — क्या?

बहुत अच्छा कहा तुमने। अच्छा कविराज मोशाय, आपकी उम्र कितनी है?

1834 साल के माघ का जन्म है। हिसाब लगा लीजिये।

आप मुझसे बड़े हैं। भैया कहूंगा आपको।

तिलु बोली — मैं भी। भैया, कभी-कभी यहां रूखा-सूखा खाने आ जाया करिये। बोलिये आयेंगे न?

रामकनाई सोचने लगे, आज दिन अच्छा था, नहीं तो इन जैसे आदमी उनको इतना आदर सम्मान क्यों देते?

—क्यों नहीं आऊंगा। हजार बार आऊंगा। अपनी बहन के घर नहीं खाऊंगा तो भला

कहां खाऊंगा? अच्छा चलूं बहन। अभी सबाइपुर एक रोगी और देखने जाना है। मुन्ने को जो दवा दी है, उससे शाम तक बुखार उतर जायेगा। कल सुबह फिर देखने आऊंगा।

निलु ने दाल में छौंक लगाकर उतार दी। तिलु मुन्ने को उसके पास बिठाकर भाई के घर गयी थी। राजाराम पर भारी विपदा आन पड़ी थी। साहब लोगों के साथ कहीं जाना पड़ा था उन्हें। यही बात पूछने गयी थी वह।

खोकन बोला — छो-मा-छो-मा...

—क्या है?

—दे।

—क्या दूं? नहीं, और गुड़ नहीं खाते।

शांत लड़का था, चुप होकर खेलने लगा। खेलते-खेलते तेल की कटोरी उलट दी और लड़खड़ाता हुआ चुल्हे की ओर बढ़ने लगा।

निलु चिल्लाई — मुन्ना, नहीं, जल जायेगा। अच्छी मुसीबत है! खाना भी बनाओ और मुन्ने को भी संभालो। वह ठहरीं राजरानी, बच्चे को गोद में लेकर बाप के घर कैसे जातीं। ओ मंझली दीदी — मंझली दीदी... क्या मजाल जो काम के वक्त कोई घर में टिक जाये। चल बैठ वहां।... नहीं सुना? ठहर जा... अभी मजा चखाती हूं।

मुन्ना बोला — मां।

—अभी आती है मां। बैठ वहां। वो आ रही है।

मुन्ने ने बाहर की तरफ देखकर कहा — नईं है।

—अच्छा नहीं है तो नहीं सही। बैठ जा चुप होकर।

—बाबू।

—अभी आते हैं। नदी पर नहाने गये हैं।

—मां।

—आती है।

—मां।

—बाप रे बाप! और नहीं बक सकती मैं तेरे साथ। बैठ यहां।

बस जरा सी डांट खायी और मुन्ने ने मां... आ...आ... कहकर रोना शुरू कर दिया।

निलु ने झट से उठकर मुन्ने को गोद में उठा लिया और चुप कराने लगी — अरे...रे... राजा बेटा मेरा। चंदा मेरा। रोने लगा? ओ मंझली दीदी... भाड़ में जाओ सब।

मुन्ना उससे चिपक कर और भी सिसक-सिसक कर रोने लगा।

तभी तिलु भागी-भागी अंदर आयी और बोली — अरे... मुन्ना रो क्यों रहा है?

—जरा-सी उंची आवाज़ सुनते ही तुम्हारा लाड़ला गोपाल ओंठ उलट देता है। क्या मजाल कि कोई कुछ कह दे। कहां गये हैं भैया, देख आयीं?

—कहीं तीतू मीर नाम का आदमी महारानी के साथ युद्ध कर रहा है। उसी लड़ाई में नील कोठी के साहब और लोगों के साथ भैया को भी ले गये हैं।

—तीतू मीर?

—हां, सुना तो यही है। भाभी रो-रोकर बेहाल हुई जा रही है। लड़ाई का मामला है, क्या ठिकाना कौन मरता है, कौन जीता है।

यह सुनते ही निलु ने बुक्का फाड़कर रोना शुरू कर दिया। मुन्ना कुछ क्षण तो टकटकी लगाये छोटी मां को रोते देखता रहा फिर उसने भी जोर-जोर से रोना शुरू कर दिया। तभी जल्दी से दौड़ती हुई गिरती-पड़ती बिलु भी आ गयी। मुन्ने को और निलु का रोना सुनकर व समझी कि अवश्य ही कोई दुर्घटना हो गयी है। आकर हांफते-हांफते उसने पूछा — क्या हुआ दीदी? निलु को क्या हुआ?

तिलु बोली — भैया के तीतू मीर की लड़ाई में जाने की बात सुनकर रो रही है। जाने यह कब बड़ी होगी। लाड़ कर करके भैया ने सिर पर चढ़ा लिया है इसे। हमारे भैया तो है नहीं जैसे।

बिलु भी पास बैठकर समझाने लगी — चुप हो जा निलु। तू जब तक चुप नहीं होगी, मुन्ना भी रोता रहेगा। कोई अकेले भैया तो गये नहीं है, कोठी के सारे लोग गये हैं। ऐसे रोना बड़ा अशुभ होता है।

तभी भवानी ने कमरे में पैर रखा और बोले — यह क्या? यह रोना-धोना क्यों मचा रखा है?

कारण जानकर बोले — भैया तो वापस भी आ गये। अभी तो घोड़े से उतरते देखकर आ रहा हूं।

निलु रोना भूलकर झट से उठ खड़ी हुई और बिलु से बोली — चलो मंझली दीदी, भैया से मिल आयें।

भवानी बोले — नहीं, अभी मत जाओ।

—क्यों?

—तुम लोगों के साथ तुम्हारी दीदी भी जाना चाहेगी। फिर मुन्ने को कौन संभालेगा? इससे तो अच्छा है मैं ही जाकर सारी बातों का पता लगा आऊं।

इसके बाद किसी ने जाने को नहीं कहा। तीनों भवानी के कथनानुसार ही चलती थीं, उनके मना करने पर कभी कोई काम नहीं करती थीं। निलु बोली — जाइये, आप ही जाइये। जलेबी के बक्खर सा है आपका मन, समझे? हमें ही पता है कि भैया के लिये हमारा मन कैसा हो रहा है।

आधा घंटे बाद दीवान राजाराम के चंडीमंडप में बहुत लोग इकट्ठे हो गये। भवानी भी थे उनमें।

फणी चकत्ति बोले — कोई चोट-वोट तो नहीं लगी भैया?

राजाराम ने कहा — नहीं भैया, कोई चोट नहीं लगी। आप लोगों के आशीर्वाद से युद्ध

ही नहीं हुआ। हमारे पहुंचने से पहले उन्होंने बहुत लोगों को मार डाला था। सब बेचारे निरीह, गांव के लोग थे।

—यह तीतू मीर है कौन?

—उन लोगों की बातों से तो ऐसा लगा कि मुसलमानों का मुखिया है। उस दिन मेरे सामने ही बड़े साहब के पास चिट्ठी आयी थी कि तीतू मीर नाम के एक फकीर ने महारानी के साथ लड़ाई शुरू कर दी है। नील कोठी के लोगों पर बहुत क्रुद्ध है। लूटपाट कर रहा है। खून-खराबा हो रहा है।

—बड़े साहब के पास चिट्ठी भेजी किसने?

—डंकिन्सन साहब की जगह जो नया मजिस्ट्रेट आया है, उसने लिखा था कि तुम लोग अपने आदमी लेकर आओ। वहां जाकर देखा, सारी नीलकोठियों के साहबों ने यमुना के किनारे आम के बगीचे में तंबू गाड़ रखे थे। सरकारी सेना भी आ गयी थी। मुझे तो बड़ा मजा आया। प्रसन्न अमीन भी साथ गया था। बड़ा ही जीवट का आदमी है, बोला — मैं जरा देख आऊं तीतू मीर कहां है, कैसा है। हमें किसी को भी डर नहीं लगा। युद्ध हुआ ही नहीं।

—बहुत सारे साहब आये थे?

—हां। बोयालमारि, पानचिते, रघुनाथगंज, पालपाड़ा, दीघेड़े — विष्णुपुर, सारी कोठियों के साहब अपने-अपने लोग लेकर आये थे। बंदूकों, गोलियों और बारूद का ढेर लग गया था। गांव के लोग मुर्गी, हंस, खासी जुटाते-जुटाते तंग आ गये थे। तीतू मीर का किला वहां से पौने दो कोस दूर था। इन लोगों ने यमुना के किनारे बांस का किला बनाया था।

—लड़ाई कितनी देर चली?

—कहां हुई। तीतू मीर ने अपने आदमियों से कह रखा था कि साहब लोगों की गोलियों से उसका कुछ नहीं बिगड़ेगा। सरकार के सिपाहियों ने पहले हवा में बंदूकें छोड़ीं तो तीतू मीर ने अपने लोगों से कहा — देखा मैंने सारी गोलियां निगल लीं। उसके बाद बंदूकों में गोलियां भरकर छोड़ी गयी तो बाइस आदमी खेत हो गये। बस फिर क्या था, बाकी लोग सिर पर पांव रखकर भागे। तीतू मीर की मुश्कें बांधकर कलकत्ता भेज दिया गया। बस लड़ाई खतम हो गयी और हम लोग चले आये।

हुक्के का कश लगाकर नीलमणि समाद्दार बोले — हम लोगों की तो चिंता के मारे जान निकली जा रही थी। तुम ठहरे हमारे गांव के सिरमौर। तुम गांव में न रहो तो बड़ा सूना-सूना लगता है सब। शाम बागदी की बड़ी लड़की कुसुम अपने बहनोई के साथ भाग गयी। मादुरपुर से पकड़ कर लाया उसका बाप। उसका मामला परसों था, पर तुम्हारे न होने की वजह से नहीं हुआ। सुना है आज होगा।

शाम को शाम बागदी और उसकी लड़की दोनों आये।

राजाराम बोले — क्यों शाम?

—लड़की को मालिक के पास ले आया! जो फैसला करना हो कर दीजिये।

राजाराम बड़े घुटे हुए आदमी थे, एकदम से कोई बात मुंह से नहीं निकाली उन्होंने। पूछा — तेरी लड़की कहां है?

—वह क्या आड़ में खड़ी है। ए कुसी सुन...

कुसुम सामने आकर खड़ी हो गयी। अट्ठारह-बीस के बीच उम्र होगी, पूर्ण यौवना। घने काले बाल, काले पत्थर को तराश कर बनाया जैसा चेहरा और चमकती हुई बड़ी-बड़ी आंखों की शांत व सरल दृष्टि। गया मेम का चेहरा घूम गया राजाराम की आंखों के सामने। सोचने लगे, देखने में तो अच्छी खासी है। अगर बड़े साहब की नजर पड़ गयी तो एकदम से लपक लेंगे।

—नाम क्या है तेरा?

—कुसुम।

—चली क्यों गयी थी?

कुसुम निरूत्तर।

—बाप का घर क्यों नहीं सुहाता?

भयभीत दृष्टि से राजाराम की ओर देखकर कुसुम बोली — सौतेली मां पेट भर कर खाना नहीं देती। डांटती है, मारती है। जीजा ने कहा — घर खरीद दूंगा, खाने को दूंगा...

—दिया था?

—कब देता? बापू तो जाकर पकड़ लाये।

—मेरे घर रह, खाने को मिलेगा। रहेगी?

—नहीं।

—क्यों?

—मन नहीं लगेगा।

—क्यों नहीं लगेगा? बाप को तो छोड़कर चली गयी थी और सौतेली मां मारती है, फिर किसके लिये मन नहीं लगेगा?

कुसुम चुप।

उसका बाप शाम बागदी इतनी देर से चुप था। अब बोला — असल में मेरा सबसे छोटा लड़का इससे बहुत हिला हुआ है, मालिक।

—अगर यह बात है तो उसे छोड़कर गयी क्यों थी? तुम लोगों की बातें भी न्यारी हैं। बोल रहेगी मेरे यहां। खाने-पहनने को मिलेगा। ज्यादा काम नहीं करना पड़ेगा, बस गोबर-सानी करना।

शाम बागदी बोला — रह जा न मालिक के यहां, हर तरह का आराम रहेगा।

राजाराम ने जगदंबा को बुलाकर कहा — अजी सुनती हो, आज से यह लड़की हमारे यहां रहेगी। जरा खाने की शौकीन है। मुड़कि है घर में?

जगदंबा ने ध्यान से उसकी ओर देखकर कहा — यह बागदीपाड़ा की कुसी है ना? बचपन में अपनी नानी के साथ कितना आया करती थी यहां — क्यों री, याद नहीं है?

कुसुम ने गर्दन हिलाकर कहा — बहुत छोटी थी मैं, याद नहीं है।

—रहेगी यहां?

—हां।

—ठीक है। चिवड़ा मुड़कि खायेगी? चल, रसोई में चल।

राजाराम बोले — लड़की की तरह रहना और गाय की देखभाल करना। जब जो कुछ खाने का मन हो मां से मांग लेना। नारियल खाना हो तो खा लेना पेट भर, ढेर से पड़े हैं। खाने के लिये भी कोई घर से भागता है? दूसरे गांव के लोग आकर मेरे घर का खा जाते हैं और मेरे ही गांव की लड़की खाना न मिलने की वजह से घर छोड़कर भाग जाये। शाम अपनी दूसरी बीबी से भी कह देना कि उसने अच्छा नहीं किया। अरे, जब उसकी मां नहीं है तो कौन देखेगा उसे?

खिन्न स्वर में शाम ने कहा — मालिक, बस पूछिये मत उसकी बात। मेरा तो जी जला रखा है उसने। मैं खेत से लौटता हूं तो यह नहीं कभी कटोरी भर मुरमुरे भी दे दे। बस रोज बासी भात सामने रख देती है। जिस दिन गरम खाना देने को कह देता हूं तो शाम को जाकर मिलता है। मरती भी तो नहीं कि फिर से ब्याह कर लूं।

बाप की बात सुनकर कुसुम के ओठों पर मुस्कराहट दौड़ गयी।

रामकनाई ने भवानी को देखकर खजूर के पत्तों की चटाई बिछाते हुए कहा — आइये, जमाई बाबू आइये।

—क्या कर रहे थे?

—कांस की जड़ उबालने की तैयारी कर रहा था। इतनी बारिश में कहां से आ रहे हैं? एकदम तर हो गये हैं आप तो। गमछा लेकर बदन पोंछ डालिये। हुक्का भरकर लाता हूं, बैठिए।

—बारिश के कारण तीन दिन से घर में बैठे-बैठे ऊब गया था। इस गांव में और कोई तो ऐसा है नहीं जिसके पास बैठकर दो घड़ी कुछ ज्ञान की बातें की जा सकें। इसलिये आपके पास चला आया।

—मैं कितना भाग्यशाली हूं जमाई बाबू। थोड़ा चिवड़ा खायेंगे? दूं? गुड़ है।

—अगर आप खायें तो खा लूंगा।

—हां-हां, मैं भी खाऊंगा। अतिथि सत्कार के लिये कुछ भी तो नहीं है घर में। जो है, दे दिया। एक शीशी में थोड़ा गाय का घी है, मिला दूं?

—देखूं! खुद बनाया है या खरीदा है?

लकड़ी की चौकी से एक छोटी शीशी उठाकर रामकनाई ने भवानी को दे दी। बोले — खुद ही बनाता हूं। पिता का संबंध जोड़कर गया मेम थोड़ा दूध दे जाती है। बड़ी

अच्छी लड़की है। वही यह शीशी कोठी से ले आयी थी। जो भी मलाई होती है, जमा कर घी बना लेता हूं। हमारी दवा में घी की जरूरत पड़ती है। बहुत से लोग गाय के घी की जगह बाजार से भैंस का घी खरीद कर उपयोग में लाते हैं, लेकिन यह गलत है। जहां जीवन का प्रश्न हो, वहां शठता व प्रवंचना करने वाले एक दिन उनके सामने क्या जवाब देंगे?

—कविराज मोशाय, किसी भी तरफ नजर उठाकर देख लीजिए, ऐसा प्रतीत होता है कि यह दुनिया शठता और प्रवंचना पर ही चल रही है। अपने इस गांव को ही लीजिए, सब एक-दूसरे की काट में लगे रहते हैं, गरीब का शोषण करने में जरा भी नहीं हिचकते। परनिंदा और परचर्चा के अलावा कोई बात नहीं करते। कुएं के मेंढक की तरह इस मोहमाया में पड़े हुए हैं।

तब तक रामकनाई ने चिवड़े में घी मिला लिया था। खड़े होकर छींके पर रखी मिट्टी की हंडिया से गुड़ निकाला और एक पत्थर की कुंडी में चिवड़ा रखकर भवानी को देते हुए पूछा — हरी मिर्च दूं?

—दे दीजिए एक....

—अच्छा, आदि संवाद के विषय में थोड़ा बतायेंगे? भगवान कैसे हैं? उन्हें देखा जा सकता है? क्या बताऊं, इस कमरे में रात को अकेले बैठा सोचता रहता हूं, भगवान कौन है? पर जवाब देने वाला कौन है। आप ही बताइये।

भवानी बड़ी विवशता का अनुभव करने लगे। रामकनाई सत्पुरुष थे, सत्य खोजने के इच्छुक थे। उनकी श्रद्धा करते थे वह। इतने गंभीर प्रश्न का उत्तर दे पायेंगे वह? इस वृद्ध के पिपासु मन की खुराक जुटाने की योग्यता है उनमें? विशेषतः विश्व के कर्ता भगवान के बारे में समझा पायेंगे क्या वह? हर जगह हर ऐरे गैरे से वह उनके संबंध में बात करने में संकोच का अनुभव करते थे।

> "अविद्यायां बहुधा वर्तमाना।
> वयं कृतार्था इत्यभिमन्यन्ति बालाः।

अर्थात् तरह-तरह की अज्ञानता व मूढ़ता में स्वयं को डुबोये रखकर भी अज्ञानी व्यक्ति सोचता है, "मैं ठीक हूं, कृतार्थ हूं।"

वह भी क्या इसी गिनती में नहीं आते?

यह वृद्ध ब्राह्मण क्या उनके उपयुक्त व्यक्ति नहीं है? यह क्या इनकी गिनती में नहीं आता—

> "तपः श्रद्धे य हयपवस्यारण्ये,
> शांता विद्वांशो भैक्षाचर्या चरतं।
> सूर्यद्वारेण ते विरजाः प्रयांति,
> यथामृतः स पुरुषो हयव्ययात्मा।"

"भिक्षावृत्ति अवलंबन करके जो सब शांत ज्ञानी व्यक्ति अरण्य में वास करते हैं,

श्रद्धा सहित तपस्या करते हैं, वे सिब निरासक्त निर्लोभी व्यक्ति सूर्यद्वार के पथ से वहीं जाते हैं, जहां वह अरण्यात्मा अमृतमय पुरुष विद्यमान है।

वह विनीत भाव से बोले — मेरे मुंह से क्या सुनियेगा? वही विराट हैं, इस विश्व के स्रष्टा हैं। वही अक्षर ब्रह्म हैं, प्राण हैं, वाक्य हैं, वही मन है।

"तदेतदक्षरं बहम स प्राणस्तदुवाङ मनः
तदेतत् सत्यं तदमृतं तद्वेद्वव्यं सोम्यविद्धि—

रामकनाई संस्कृत के विद्वान् तो नहीं थे पर उसमें नितांत अनभिज्ञ भी नहीं थे। सुनते-सुनते आंखें बंद हो गयीं उनकी और आवेग भरे स्वर में कहने लगे — आहा! आहा! आहा!

फिर भवानी के दोनों हाथ पकड़कर बोले — क्या वाणी सुनायी, जमाई बाबू! यहां ऐसी बातें कोई नहीं कहता। जी जुड़ा गया। बड़ी अच्छी लगती हैं यह सब बातें। और कहिये...

भवानी श्रद्धा भाव से कहने लगे—

"अणोरणीयान्महतो महीयाम- -
आस्य जन्तो निहितं गुहायां

वह शुद्र से भी क्षुद्रतर और महत् से भी महत् हैं। वे समस्त प्राणियों के हृदय में ही वास करते हैं। आसीनों दूरं व्रजन्ति, उपविष्ट होते हुए भी वह दूर जाते हैं, शयानो याति सर्वतः — सोये रहते हुए भी वह सर्वत्र गमन करते हैं।

"यदर्चियमद् यदगुम्योहणु च
यस्मिन् लोको निहिता लोकिनश्च।

जो दीप्तिमान हैं, अणु से भी सूक्ष्म हैं जिनमें सारे लोक समाविष्ट हैं, उन लोकों के अधिवासी निहित हैं।

रामकनाई ने चिवड़ा खाते-खाते कटोरी एक ओर खिसका दी। उनके दाहिने हाथ में आधी खाई हुई हरी मिर्च थी। चेहरे पर सरल बालक से निश्छल भाव थे और आंखों से आंसू बह रहे थे। सब कुछ एक चित्र सा प्रतीत हो रहा था। भवानी उनकी डबडबायी आंखें देखकर विस्मित हो गये।

खाड़ी के उस पार बबूल के पेड़ की फुनगी के ऊपर स्वच्छ आकाश में सप्तमी का चांद चमक रहा था। सरकंडों के जंगल में कहीं उल्लू बोल रहा था।

भवानी जब घर की ओर चले, रात काफी हो गयी थी। शरत के आकाश में अगणित नक्षत्र चमक रहे थे। दूर जंगल में कठफोड़वा की लगातार ठक-ठक एवं सियारों की आवाज, सब कुछ बड़ा रहस्यमय प्रतीत हो रहा था। आज एक अनास्वादित रस से उनका अंतर अमृतमय हो गया था। एक ऐसा रस जो रहस्यमय होने के साथ-साथ अत्यंत मधुर भी

था। मन ही मन बोले — हे शांत, परमव्यक्त एवं अव्यक्त महादेवता समस्त आकाश अंधकार की तरह ही आप में ओत-प्रोत है। तुम सब पर दया करना। मुन्ने पर भी दया करना, उसे भले ही दरिद्र बनाना, परंतु इतनी बुद्धि अवश्य देना कि तुम्हें जान सके। उसकी तीनों मां पर भी दयादृष्टि रखना।

तिलु बैठी पति का इंतजार कर रही थी। चिंतित भी थी। रात गहरा रही थी और भवानी का पता नहीं था। निलु बिलु भी आकर कई बार पूछ गयी थीं। थोड़ी देर बाद निलु फिर आयी और तिलु को उसी तरह बैठी देख बाहर निकलकर इधर-उधर सड़क पर देखने लगी। कुछ पल बाद ही दूर भवानी को आते देख बोली — वह आ रहे हैं मूर्तिमान। भवानी के पास आने पर बोली — आज नागर किस वृन्दावन कुंज में गये थे? हमारी तो छोड़ो, अब क्या दीदी भी मन नहीं भाती?

भवानी अंदर आते हुए बोले — तुम लोग तो इस तरह आफत मचा रही हो, जैसे मुझे सुंदरबन का बाघ उठा ले गया हो। रात को घर से निकल नहीं सकता क्या? कविराज रामकनाई के घर गया था।

बिलु ने ताना मारा — वहां क्या आजकल गांजे का अड्डा जमने लगा है?

निलु बोली — नहीं तो इतनी रात तक वहां क्या हो रहा था?

तिलु हमेशा पति को बहनों के आक्रमण से बचाने की कोशिश करती थी। किसी तरह उन्हें समझा बुझा कर कमरे में भेजा और पति के लिए हाथ पैर धोने को पानी ले आयी। बोली — पैर धो दूं? कीचड़ में सन गये हैं।

—उस कटहल के पेड़ के नीचे बहुत कीचड़ था ना!

—क्या खायेंगे?

—कुछ नहीं। कविराज के घर से चिवड़ा खाकर आ रहा हूं।

—खाना तो पड़ेगा ही। सुबह की सूक्तनि रखने को कहा था, वह कौन खायेगा? निलु ने एक कटोरा उठाकर रख दी थी।

—अच्छा, ले आओ। मुन्ने को क्या खिलाया?

—दूध पिलाया था।

—खांसी तो नहीं उठी?

—पिसी सोंठ गरम पानी के साथ दी थी।

खाते हुए भवानी ने तिलु से कविराज के यहां की सारी बातें विस्तार से बतायीं। सुनकर तिलु ने कहा — वह और ही किस्म के आदमी हैं। याद है उस दिन भी यही पूछा था? आपने उस दिन पुरूषात्र पर किंचित् श्लोक पढ़ा था — अर्थात् उनसे बड़ा विश्व में कुछ नहीं है, यही अर्थ है न?

—बिल्कुल ठीक।

—मैं भी और पढ़ने की सोचती हूं, लेकिन घर के काम से फुर्सत ही नहीं मिलती।

अच्छा, एक बात कहना तो भूल ही गयी, कल हम लोगों को दो-दो आने पैसे दे दीजियेगा।

—क्यों?

—कल तेरस-पालन है। वन-भोज में जाना है।

—मैं भी चलूंगा।

—यह कैसे हो सकता है? कितनी लड़कियां, बहुएं रहेंगी। अच्छा आपको पता है, कि तेरस-पालन के दिन बारिश जरूर होती है?

—सब बेकार की बातें हैं।

—बेकार की बात नहीं है जी। आप देख लेना, जरूर होगी।

—तुम भी इन कुसंस्कारों में विश्वास रखती हो? भला जंगल में बैठकर खाने का बारिश के साथ क्या कारण हो सकता है?

भादों की तेरस थी आज। इछामती के किनारे "तेरस पालन" के लिये पांच-पोता गांव की सारी बहुएं जमा हुई थीं। नालू की पत्नी तुलसी की सभी बहुत खातिर कर रही थीं। उसका आदमी अब बड़ा आदमी बन गया था। तेरस-पालन हमेशा नदी किनारे के एक बहुत पुराने जिडलि के पेड़ के नीचे होता था। यह जिडलि और कदंब के दोनों पेड़ एक साथ खड़े थे। कितने पुराने थे, कोई नहीं जानता था। पुराने लोगों में नीलमणि समाद्दार की मां कहा करती थी कि जब वह छियत्तर साल पहले बहू बनकर गांव में आयी थीं, तब भी उन्होंने अपनी सास और ननिया सास के साथ इसी पेड़ के नीचे तेरस-पालन का वन-भोजन किया था। पिछले साल नीलमणि की मां पचासी साल की होकर मरी थीं।

अलग-अलग मुहल्लों की औरतों ने अलग-अलग घेरा बनाकर वन-भोजन का आयोजन किया था। वहां खाना बनाया नहीं जाता था, घर से अपनी अपनी सामर्थ्य के अनुसार बनाकर लाती थीं और केले के पत्तों में खाती थीं। खाकर छंद सुनातीं, गाने गातीं, शंख बजातीं। दिन बड़े उल्लास में बीतता। इस वन-भोज की एक प्रथा थी खाना आपस में बांट कर खाना। बड़े-छोटे घर का, जात-पांत का कोई अंतर नहीं होता था।

हमेशा की तरह आज भी तुलसी, यतीन की बहू और बहन नंदरानी के पास आयीं। यतीन की बहू थोड़े से मुरमुरे, दो पके केले और एक लोटा मट्ठा लायी थी बस।

तुलसी बोली — कैसी हो स्वर्ण?

—अच्छी हूं दीदी। मुन्ना नहीं आया?

—नहीं। घर छोड़ आयी। लाती तो बहुत तंग करता। क्या खा रही हो?

—यह है ना। मट्ठा घर का है। तीन दिन की मलाई का आज सुबह ही निकाला है। पीना हो तो थोड़ा ले जा दीदी।

तुलसी मट्ठे के लिये पत्थर की कूंडी ले आयी, साथ-साथ दो बड़ी-बड़ी फेनी, बताशे और चार चुनिया केले भी लेती आयी।

—यह क्या दीदी?

—घर के हैं। असाढ़ में बारिश के पानी से चरखा खराब हो गया था, छोटे रह गये।

तिलु केवल बिलु को लायी थी। निलु मुन्ने की वजह से घर रह गयी थी। दोनों की सभी बहुत खातिर कर रही थीं। कोई दूध दे रही थी, तो कोई चीनी के खिलौने, खील, गन्ने के गुड़ की चिक्की आदि तरह-तरह की चीजें।

सबसे खराब अवस्था नीलमणि समाद्दार की पुत्रवधु की थी। तिलु ने उससे पूछा — क्या लाई हो दीदी?

—थोड़े मुरमुरे लायी थी।

—दूध नहीं लायी?

—दूध कहां से लाती? गाय बियाई ही नहीं अभी।

—अच्छा। कब ब्यायेगी?

—अगहन के अंत में।

तिलु के इशारे पर बिलु ने चिवड़ा, मुड़कि, चीनी के खिलौने वगैरह लाकर उसके सामने रख दिये। षष्ठी चौधरी की बहू छह-सात केले दे गयी।

फणी चकत्ति की पुत्रवधू बोली — हमारे यहां खजूर का गुड़ बहुत भरा हुआ है, इसलिये ले आयी।

तिलु बोली — मैं नहीं लूंगी भाई, छोटी काकी को दे दो। मेरे पास तो बहुत चीजें इकट्ठी हो गयी हैं।

इस प्रकार सबने मिलकर खाया-पिया, मौज-मस्ती की। फिर सबने भजगोविंद बांडुज्जे की पुत्रवधू को कामदेवपुर के रत्नेश्वर गांगुली की तीसरी लड़की निस्तारिणी से श्यामा संगीत सुनाने को कहा। रत्नेश्वर गांगुली तबला बजाने के लिये मशहूर थे। निस्तारिणी का सांवला रंग और एकहरा बदन था। स्वर बहुत ही मधुर था। उसने गाया—

"नीलवरणी नवीना वरूणी नागिनी-जड़ित जटा विर्भीषणी,
नीलनयनी जिनि त्रिनयनी किवा शोभे निशानाथ निभाननी।"

गाना खतम होते ही तिलु ने पीछे से आकर चीनी का एक पूरा खिलौना उसके मुंह में ठूंस दिया। निस्तारिणी इतनी सारी औरतों के सामने थोड़ा संकुचित हो गयी। नई-नई बहू थी, इस तरह के व्यवहार की आदी नहीं थी वह।

शरमाकर बोली — दीदी, ननदोई जी को खिलाना ऐसे...

—अपने ननदोई को देखा है तूने?

—तभी बिलु सामने आकर बोली — क्यों री छोटी बहू, यह ननदोई की याद अचानक कैसे आ गयी? तबियत आ गयी है क्या? सावधान। उस तरफ आंख मत

उठाना। हम तीन सौतें झाड़ू लेकर दहलीज में बैठी पहरा देंगी, समझी? अंदर घुसने का कोई मौका नहीं मिलेगा।

अलग-बगल खड़ी सारी औरतें यह सुनते ही खिलखिला पड़ीं।

तभी कंधे पर लाल गमछा डाले और गोद में मुन्ने को उठाये भवानी का वहां साक्षात् आविर्भाव देखकर सबकी आंखें फटी रह गयीं।

तुलसी बोली — यह लो। नाम लेते ही ननदोई जी हाजिर हो गये।

पास आकर भवानी बोले — बहुत खूब। मेरे जिम्मे इसे छोड़ कर सब गायब। वह रहता है? नींद खुलते ही मां मां कहकर चीखना शुरू कर दिया। समझाते-समझाते हार गया, पर वह क्या समझता है?

मुन्ने ने एक विभ्रांत दृष्टि चारों ओर डालकर पुकारा — मां...

बिलु ने दौड़कर मुन्ने को गोद में ले लिया और बोली — क्यों, निलु कहां है? आपके जिम्मे किसने छोड़ा? हम तो निलु को सौंपकर आये थे।

—भाभी ने निलु को बुला भेजा। भैया की तबियत ठीक नहीं है और वह मेरे सिर डाल गयी।

सारी बहुएं भवानी को देखकर आपस में कानाफूसी करने लगीं। लेकिन प्रकट में कोई नहीं बोल रही थी। ऐसा नियम नहीं था। फणी चकत्ति की विधवा बहन विधु, जो इस गिनती में नहीं आती थी, सामने आकर बोली — ओ बड़े-मंझले-छोटे जमाई बाबू, सारी बहुएं कह रही हैं कि ननदोई जी जब पकड़ाई में आ ही गये हैं तो अब आसानी से नहीं छोड़ेंगी। हमारे...

आगे की बात पूरी नहीं करने दी भवानी ने। जल्दी से दोनों हाथ जोड़कर बोले — नहीं माफ करिये विधु दीदी, मैं अकेले पार नहीं पा सकता... उमर हो गयी है...

इस बात से फिर सबके बीच हंसी की लहर दौड़ गयी। कोई मंद-मंद मुस्कुरा रही थी, तो कोई खिलखिला कर हंस रही थी। कोई मुंह फिराकर हंस रही थी तो कोई घूंघट के अंदर खी-खी कर रही थी। हंसी के उस प्लावन में भादों के ढलते सूरज की गुलाबी धूप इछामती के किनारे के कदंब वृक्ष पर पड़ रही थी, दूसरे किनारे पर कासनी के फूल मंद बयार में झूम रहे थे। निस्तारिणी की गोद में मुन्ना किलकारियां भर रहा था। सब मिलाकर निस्तारिणी को आज का तेरस-पालन बड़ा अच्छा लगा था। ननदोई कितने विनोदी व्यक्ति हैं। और उम्र हो जाने पर भी चेहरे पर क्या चमक है!

नये मजिस्ट्रेट नील कोठी का मुआयना करने आये थे। मिस्टर डंकिन्सन के चले जाने के बाद बहुत दिनों से किसी मजिस्ट्रेट का कोठी में पदार्पण नहीं हुआ था। इसलिये अभ्यर्थना का आडंबर कुछ अधिक ही हुआ। खूब खाना-पीना, नाच-गाना हुआ। जाते समय नये मजिस्ट्रेट कोलमैन बड़े साहब को एकांत में ले जाकर कुछ बातें कह गये।

—डू यू रीड नेटिव न्यूजपेपर्स? यू डू? हार्ड टाइम्स आर एहेड, मिस्टर शिप्टन,

स्टफ सम विजडम इनटु द ब्रेंस आफ योर मेन। यू अंडरस्टैंड? आई होप यू विल नॉट माइंड माइ सेइंग सो?

—एक्सप्लेन दैट टु मी।

—आइ विल, प्रेजेंटली।

असली बात है समय क्रमशः खराब होता जा रहा है। देशी अखबार वालों ने बहुत शोर मचाना शुरू कर दिया है। हिंदू पेट्रियट अखबार में हरीश मुखुज्जे बड़े उत्तेजक लेख लिख रहे हैं, रामगोपाल घोष नीलकरों के विरूद्ध आग उगल रहे हैं, नेटिव आदमी बन गये हैं। अब पुराने दिन नहीं रहे, सावधानी से काम करो। हमें गुप्त रूप से सरकार ने सर्कुलर भेजा है कि नील संबंधी झगड़ों में हम जहां तक संभव हो प्रजा के पक्ष में फैसला करें।

अगले दिन बड़े साहब ने डेविड साहब को बुलाकर सारी बात बतायी। ऐसा लगा जैसे डेविड को बात पसंद नहीं आयी। बोला — यू सी, आई कैन वर्क एंड आई कैन डू विथ वेरी लिटिप स्लीप एंड आई हैव नेवर वेस्टेड टाइम आन लाइकिंग पिपुल, परहैप्स आई एम नॉट क्लेवर एनफ...

—नो डेविड, वी हैव ए स्टेक डाउन हियर, इन दिस गॉड फारसेकेन लैंड, यू सी? व्हाट आइ वांट टु ड्राइव एट इज दिस...

तभी श्रीराम मोची ने आकर कहा — साहब, बाहर दफ्तर में रैयत बैठी है। बड़ा हंगामा मचा हुआ है। हिंनाड़ा, रसूलपुर के बागदी विद्रोही हो गये हैं। उन लोगों ने नील के खेतों में ढोर-डंगर छोड़कर सारी फसल खिला दी है...

डेविड उछल कर बोला — कहां के लोग? हिंनाड़ा? सादेक मुखिया और छिहरि सरदार, इन दो बदमाशों पर मेरी बहुत दिनों से नजर है, सजा देना आता है मुझे।

शिप्टन साहब आग बबूला होकर बोले — द डेविल दैट इज! इन विथ यू दिस टाइम, विल यू लाइक टु कम ऑन ए माउस हंट टुमारो मार्निंग?

—श्योर आई विल।

—आई वंडर व्हेदर आई एवर टोल्ड यू दीज थीविंग पिपुल ड्रोव ऑफ सम आफ आवर हार्सेस फ्राम द विलेज?

—माई स्टमक! यू नेवर डिड।

—वेल, बी रेडी टुमारो मार्निंग। मे बी वी वुड किल आफ द माइस राइट अवे।

—श्योर।

अगले दिन सुबह बड़ा ही अभिनव दृश्य देखा गया।

आगे दो घोड़ों पर दोनों साहब और पीछे एक सफेद बड़े घोड़े पर दीवान राजाराम राय एवं उनके पीछे एक बादामी रंग के घोड़े पर प्रसन्न अमीन लाइन में जा रहे थे। सबसे पीछे कोठी के लठैतों का सरदार रसिक मल्लिक था। लोग-बाग देखकर डर से सिहर

उठे। समझ गये कि अवश्य ही कोई बहुत ही भयंकर मामला होगा। अचानक एक स्थान पर प्रसन्न ने घोड़े की लगाम खींची और पलक झपकते घोड़े से उतर गये और राजाराम को हांक लगाकर कहा — दीवान जी, आप चलिए, घोड़े की जीन ढीली हो गयी है, ठीक से कसी नहीं....

उन लोगों के आंखों के ओझल हो जाने पर उन्होंने घोड़े को एक अमलतास के पेड़ से बांधा और सड़क से कुछ दूर एक घर के सामने जाकर आवाज लगायी — गया, ओ गया...

अंदर से गया की मां की आवाज आयी — कौन है?

प्रसन्न चकत्ति असमंजस में पड़ गये। यह बुढ़िया तो इस समय कभी घर रहती नहीं थी, मेम साहब का काम करने कोठी चली जाती थी। चिल्लाकर बोले — मैं हूं दीदी।

—कौन है? अमीन बाबू? इस वक्त?

कहते-कहते वरदा बागदिनी बाहर निकल आयी, शायद चावल उबाल रही थी, हाथों में चूल्हे की कालिख लगी हूई थी। उलझे बालों का कसकर ऊंचा जूड़ा बंधा हुआ था। मुंह पर अप्रसन्नता के भाव थे।

प्रसन्न चकत्ति बोले — कौन? दीदी? चलो, अच्छा ही हुआ। पता नहीं घोड़े के पैर में क्या हो गया है, चल ही नहीं पा रहा है। थोड़ा नारियल का तेल है?

—नहीं, तेल तो नहीं है। तेल बहुत महंगा हो गया है।

—अच्छा! तो फिर चलूं।

वरदा घूर-घूर कर अमीन के मुंह की ओर देखने लगी। उसे शायद उनकी बात पर विश्वास नहीं हो रहा था। वह क्या जानती नहीं थी कि लड़की के पीछे लोग शहद की मक्खी की तरह घूमते थे? कितने बेकार आवेदनों पर झाड़ू फेरनी पड़ती है उसे। दूध पीती बच्ची नहीं है वह। प्रसन्न की उमर हो गयी है। वह अमीन है तो क्या हुआ, संदेह के घेरे से बाहर थोड़े ही रखा जा सकता है उसे। जाने कितने बुड्ढों जवानों को देखा है उसने। यहां तक कि सगे-संबंधियों का भी विश्वास नहीं किया जा सकता अब तो।

प्रसन्न ने घोड़े पर चढ़कर जोर से एड़ लगायी। घोड़ा हवा से बातें करने लगा।

हिंनाड़ा गांव के बाहर चारों ओर नील के खेत थे। नील के पौधे उस समय अच्छे बड़े हो गये थे। बड़े साहब ने छोटे साहब को हाथ से दिखाते हुए कहा — सी व्हाट दे आर अप टु।

तभी बागदिपाड़ा की तरफ से बहुत से आदमी लाठी हाथ में लिये उस ओर आते दिखायी दिये।

राजाराम बोले — साहब, ये लोग हमें घेर लेना चाहते हैं। और आगे चलिये...।

डेविड बोला — तुम चले जाओ और अपने आदमी ले आओ। इन लोगों के घरों को आग लगानी पड़ेगी।

इस पर रसिक मल्लिक ने कहा — कोई जरूरत नहीं है साहब। आप लोग ठहरिये, मैं आगे जाता हूं।

बड़े साहब बोले — यू स्टे। मैं और छोटे साहब, हम दोनों जायेंगे। बल्लम लाये हो?

—नहीं साहब, बल्लम की कोई जरूरत नहीं है। मेरी लाठी के सामने सौ आदमी भी नहीं ठहर सकते। आप पीछे हट जाइये।

तब तक राजाराम ने अपना घोड़ा हिंनाड़ा गांव के उत्तरी कोने की तरफ दौड़ा दिया था। पीछे से बड़े साहब चिल्लाये — दीवान, रसिक तुम्हारे साथ जायेगा।

कुछ देर बाद भयानक आर्तनाद और चीख-पुकार सुनायी दी। बागदीपाड़ा की औरतें-बच्चे जान लेकर चीखते चिल्लाते इधर-इधर भागते दिखायी दिये। सत्तर साल का बुड्ढ़ा रामधन सड़क किनारे पेड़ के गिरे तने पर बैठा तमाखू पी रहा था, उसके सर पर लाठी पड़ते ही वहीं ढेर हो गया वह। उसकी पत्नी चिंघाड़ मारकर रो दी।

पांच मिनट बाद ही मुहल्ले से आग की लपटें दिखायी दीं। भगदड़ मच गयी फिर तो। जो लोग लाठियां लिये खेतों की तरफ आये थे, आग देखकर अपने-अपने घर की तरफ भागे।

लोगों ने किसी तरह आग पर काबू पाया। राजाराम ने भीड़ को तितर-बितर करने के इरादे से ही आग लगायी थी। उनका मकसद पूरा हो गया। रसिक मल्लिक से सभी डरते थे। जाति से निम्न शूद्र था। लाठी चलाने में उस इलाके में उस जैसा कोई नहीं था। आठ-दस साल पहले उसने सियार समझकर अपने लड़के को ही बल्लम से बींधकर मार दिया था। उन दिनों कटहल पक गये थे। मुहम्मदपुर परगने के अधीन नूरपुर गांव का रहने वाला था। घर के बाहर अहाते की बाड़ से टिका एक बड़ा सा पका कटहल रखा हुआ था। शाम का झुटपुटा होने पर उसका नौ साल का लड़का चुपके से बाहर निकला और बाड़ में छेद बनाकर हाथ से निकाल-निकाल कर कटहल खाने लगा। रसिक ने खस्-खस् आवाज सुनी तो सोचा सियार कटहल खा रहा है। बस उसी छेद से बल्लम का ऐसा निशाना लगाया कि सीधे उसके मुंह को बींध दिया उसने।

बच्चे की चीख सुनकर सबके सब तेल के दीवट लेकर बाहर दौड़े तो देखा लड़का चित्त पड़ा था और खून की नदियां बह रही थीं। जिस हाथ में कटहल था, उसकी मुट्ठी खुलकर कटहल जमीन पर गिर गया था, आंखें पथरा गयी थीं। बस दोनों पैर आगे-पीछे हो रहे थे। अगले क्षण सब शेष हो गया।

उस रात की बात रसिक मल्लिक कभी नहीं भूल पाया। परंतु वह वास्तव में दस्यु था, पिशाच था। रुपये की खातिर सब कुछ कर सकता था। रामू सरदार और नेवाजी मुखिया के भाई सातू को उसी ने मारा था।

इसके बाद रसिक मल्लिक और बड़े साहब को एक साथ देख कर बागदीपाड़ा के लोग थोड़ा पीछे हट गये।

रसिक ने हांक लगायी — कहां है तुम्हारा छिहरि सरदार? भेजो उसे सामने। बड़े

साहब का हुकुम है उसका सर बल्लम में बींधकर कोठी ले जाऊं। अपनी मां का दूध पिया हो तो सामने आ सियार के बच्चे! आ सामनें सूअर के बच्चे! आ सामने कुत्ते के बच्चे! ले आओ अपने बाप को बुलाकर हरामजादो!

छिहरि सरदार जैसे ही आगे आने लगा, उसकी बहू ने झट से उसकी धोती पकड़ ली। यद्यपि जरा भी डर नहीं था उसके मन में, लेकिन अगर आ जाता तो शायद प्राणों से हाथ धोने पड़ते उसे। रसिक मल्लिक के सामने टिक नहीं पाता वह। जिसका पेशा ही खून हो, उसके सामने एक सीधा-सादा गृहस्थ लठैत कितनी देर टिकता?

छोटे साहब बोले— रसिक, इस साले छिहरि और सादेक को पकड़कर ला सकेगा?

तब बड़े साहब का मिजाज थोड़ा ठंडा हो गया था, उन्होंने कहा — आई एम अफ्रेड दैट वुड नॉट बी क्वाइट विदिन द बाउंड्स आफ लॉ। लेट अस रिटर्न।

फिर हंसकर बोले — सफीशियेन्ट अनटु डे — द इविल देयर आफ...

छोटे साहब को बड़े साहब पर गुस्सा आने लगा, सोचा, आमीन कह दे, लेकिन हिम्मत नहीं पड़ी।

दीवान राजाराम ने घोड़े का मुंह कोठी की तरफ फेर दिया था। प्रसन्न भी साथ लौट रहे थे, पर अचानक बांस की झाड़ियों की आड़ में एक षोड़शी तन्वी बहू को छिपे देख घोड़े की लगाम खींच ली उन्होंने। आस-पास कोई नहीं था। बहू के भयभीत होकर वहां से निकलकर भागने की चेष्टा करते ही उन्होंने जहां तक बना गले के स्वर को मुलायम करके पूछा — कौन हो तुम?

कोई उत्तर नहीं मिला।

—अरी मैं क्या बाघ या भालू हूं, जो इतना डर रही हो?

उत्तर में उसके चीखकर रोने की आवाज आयी।

प्रसन्न ने झट से चारों ओर नजर डाली और घोड़े को एक छलांग में झाड़ी के परली तरफ उसके पास ले गये। वह भी बागदीपाड़ा की बहू थी। चीखें मारती हुई जान लेकर घनी झाड़ियों की तरफ दौड़ गयी। उन कांटों भरी झाड़ियों में घोड़ा ले जाना संभव न देख प्रसन्न को अपना-सा मुंह लेकर लौटना पड़ा।

बड़े साहब ने छिहरि सरदार से पूछा — तुम्हारा इरादा क्या है?

—अब हम लोग नील नहीं बोयेंगे। आप चाहे मार डालें या कोई भी सजा दें।

—इसका कारण क्या है?

—क्या कारण बताऊं साहब, इस नील के कारण हम लोगों के घरों में खाने को दाना नहीं है, पहनने को कपड़ा नहीं है। मां काली की कसम खाकर कहता हूं कि अब हम नील नहीं बोयेंगे।

—क्या लेकर नील बोओगे।

—कैसे भी नहीं बोयेंगे, धान बोयेंगे। आपके अमीन के सारी धान की जमीन पर निशान लगा आने की वजह से हम धान नहीं बो पाते। आप लोग हल बैल खरीदकर अपनी जमीन पर नील की खेती करो, कोई नहीं रोकेगा। पर प्रजा की जमीन पर जबरदस्ती कब्जा करके नील क्यों बोते हो साहब?

—तुमको पांच सौ रुपया बख्शीश देगा। तुम नील बोने में बाधा मत डालो।

—माफ करिये साहब। मेरे अकेले के कहने से कुछ नहीं होगा। तेरह गांवों के लोग इकट्ठे हो गये हैं। भवानीपुर, माटाबेड़े और हूदोमानिककोलि की नीलकोठी की प्रजा भी एकजुट हो गयी है। पूरब और दक्षिण से हवा आ रही है।

यह बस बड़े साहब जानते थे। इसी कारण उस दिन के उस अभियान के बाद आज उन्होंने बहुत आश्वासन देकर छिहरि सरदार को कोठी बुलवाया था। पर उन्होंने यह नहीं सोचा था कि छिहरि इस तरह अड़ जायेगा।

फिर भी बोले — तुम कोशिश करके तो देखो। मेरे पास चले आना, बहुत रुपये मिलेंगे। दफ्तर में नौकरी करना चाहते हो?

—नहीं साहब। मेरी सात पीढ़ियों में कभी किसी ने नौकरी नहीं की। आपको एक बात और बता दूं साहब, मैं अकेला यह तूफान नहीं झेल पाऊंगा। पूरे जिले में विद्रोह शुरू हो गया है, अकेला छिहरि सरदार क्या करेगा? आप खुद सोचकर देखिये, साहब। अकेले मुझे दोष मत दिजिये। मैंने कोठी का बहुत नमक खाया है, इसलिये आपको सारी बात बता दी।

डेविड को बुलाकर बड़े साहब ने कहा— आई से, डेविड, दिस मैन स्विम्स इन शैलो वाटर, लेट हिम गो सेफली आउट एंड दैट नो हार्म इज डन टू हिम, नॉट वर्थ द ट्रबल।

उस दिन शाम के बाद नील कोठी में गुप्त बैठक बुलायी गयी।

नीलकोठी के जासूस और भी बहुत सी खबरें लाये थे। जिले की प्रजा भड़क उठी थी। लोगों ने नील का दादन न लेने का निश्चय कर लिया था। सत्रह नील कोठियों पर इसका सीधा असर पड़ रहा था। गांव-गांव में सभा हो रही थी, पंचायत की बैठकें हो रही थीं। किसी-किसी मौजे में लोगों ने नील की जमीन में तिल और धान बो दिये थे। बैठक में आस-पास की कोठियों के अंग्रेज मैनेजर हिस्सा लेने आये थे। किसी गुप्त या जरूरी बैठक में वह लोग किसी नेटिव को नहीं बुलाते थे। मैलिसन साहब ने कहलाया था — नो नेटिव नीड बी काल्ड, वी शैल मेक आवर डिसीजन नोन टु देम इफ नेसेसरी।

कोल्डवेल साहब बोले— मजिस्ट्रेट से और बंदूकों के लिये कहो। इस समय हर कोठी में ज्यादा से ज्यादा बंदूकें और गोला-बारूद रखना चाहिये।

कोल्डवेल भवानीपुर नीलकोठी के बड़े दुधर्ष मैनेजर थे। लोगों की जमीनों को बेदखल करने में उन जैसा निपुण उत्साद कोई नहीं था। खून-खराबे में भी उसका

जोड़ीदार मिलना मुश्किल था। कुछ दिनों से उसका मन थोड़ा उखड़ा-उखड़ा सा था, उसकी मेम उसी के दोस्त के साथ भाग गयी थी।

शिप्टन साहब ने कहा — दीज ब्लूमिंग नेटिव लीडर्स शुड बी शॉट लाइक पिग्स।

कोल्डवेल बोले — आई से, यू कैन गो ऑन विथ योर प्रिग स्टिकिंग आफ्टर-वर्ड्स, नाउ डिसाइड व्हाट वी शुड डू विथ आवर इम्प्रेशन रजिस्टर्स दैट इज व्हाई वी हैव मेट टु डे।

इतने में श्रीराम बेयरा एक ट्रे में शेरी की बोतल और कई डिकेंटर लाया और उन लोगों के सामने रख दिये।

कोल्डवेल ने कहा — नो शेरी फार मी, आई विल हैव ए पेग ऑफ नीट ब्रांडी। नाउ, शिप्टन, ओल्ड बॉय, लेट अस सी हाउ यू कीप योर इम्प्रेशन रजिस्टर्स। दिस मैन आफ योर इज रिलायबेल? नाउ-ए-डेज, वाल्स हैव इयर्स, यू सी।

शिप्टन ने श्रीराम की ओर देखकर कहा — ओह, ही इज आल राइट।

दादन का खाता नीलकोठी का बहुत ही महत्वपूर्ण दस्तावेज होता था। सब लोगों के अंगूठों के निशान बड़ी चालाकी से लेकर वह खाता तैयार किया जाता था। स्वयं मजिस्ट्रेट आकर दादन के खाते का निरीक्षण करता था। अधिकांश कोठियों में दादन के दो खाते होते थे, मजिस्ट्रेट को असली वाला दिखाया जाता था।

शिप्टन ने दादन का खाता पहले से ही लाकर रखा हुआ था, खोलकर सबको दिखा दिया।

मैलिसन ने पूछा — दिस इज योर ओरिजिनल रजिस्टर?

—येस, द अदर वन इज इन द आफिस। दिस आई कीप आलवेज अंडर लाक एंड की।

—श्योर, यू हैव गॉट दिस वीक्स इंगलिश मैन?

—श्योर आई हैव।

—इट इज फनी, ए डेप्युटेशन वेटेड ऑन द लेफ्टिनेंट गवर्नर द अदर डे। द ब्लूमिंग ओल्ड फैलो हैज गिवेन देम ए बेनेडिक्शन।

—ऐज ही आलवेज इज। द ओल्ड पादरी।

इसके बाद आपस में सलाह मशविरा हुआ। मुख्य विषय था कि प्रजा के विद्रोह में नील कोठियों के आक्रांत होने की कितनी संभावना थी और बच्चों व औरतों को चूयाडांगा की बड़ी कोठी में रखा जायेगा या कलकत्ता भेजा जायेगा।

शिप्टन ने मंतव्य प्रकट किया — आई डोंट थिंक द बेगर्स वुड डेयर एज मच। आई विल कीप देम हियर ऑल राइट।

कोल्डवेल ने कहा — प्लीज योरसेल्फ। ओल्ड बाय। यू आर द सेम वुल हेडेड जॉनी शिप्टन ऐज एवर। पास मी ए ग्लास ऑफ शेरी मैलिसन, विल यू?

मैलिसन ने भंवे सिकोड़कर कहा — फनी, इज इट नॉट? यू सेड यू वुड हैव टु डु नथिंग विथ शेरी, डिड यू नॉट?

—श्योर आई डिड। आई वाज फीलिंग आउट ऑफ सॉर्ट्स विथ द वरीज एंड ट्रबल्स एंड आल्सो विथ द लांग राइड थ्रू ड्रेंचिंग रेन। बेयरा इधर आओ। नींबू ला सकोगे?

शिप्टन ने श्रीराम की ओर देखकर कहा — साहब के लिए बगीचे से नींबू ले आओ, समझे?

—हां, साहब।

श्रीराम के चले जाने पर फिर बातचीत शुरू हुई। तय हुआ कि अगले दिन सुबह होते ही चूयाडांगा की बड़ी कोठी के मैनेजर के पास आदमी पता लगाने भेजा जाये कि वहां कितने हथियार और आग्नेशास्त्र हैं। इसके अलावा यह खबर भी भेज दी जाये कि सारी कोठियों की मेमें और बच्चे वहां भेजे जा रहे हैं।

मैलिसन ने शिप्टन से कहा — यू ऑट नॉट टु बी अलोन एट प्रेजेंट।

शराब के ग्लास से घूंट भरकर शिप्टन बोले — व्हाट डू यू मीन? अलोन? व्हाई, हैवन्ट आई माई ओन मेन? आई मस्ट फाइट दिस आउट बाइ माइसेल्फ। लीव ए ब्रीथिंग टु मी।

—वेल आल राइट देन।

उस रात सब वहीं रहे। पहले जैसे दिन होते तो सब अपने-अपने घोड़े पर चढ़कर चले जाते, परंतु अब अकेले रात को जाने की हिम्मत नहीं पड़ी।

शेष रात को खबर आई कि विद्रोही प्रजा का दल रामनगर की कोठी लूटने आया था, लेकिन बंदूक की गोलियों के सामने टिक न पाकर पीछे हट गया। रामनगर की कोठी वहां से तीस मील दूर थी, उसके मैनेजर एन्ड्रू साहब ने कितनी औरतों को सतीत्व लूटा था, उसकी गिनती नहीं थी। यहां तक कि इस कारण उसे उसकी जात वाले भी अच्छी नजरों से नहीं देखते थे। खबर सुनकर मैलिसन ने भवें सिकोड़कर, मुंह विकृत करके कहा — ओह द ओल्ड बेगर।

फिर शिप्टन की ओर देखकर बोले — यू डोंट सी एनीथिंग सिग्नीफिकेंट इन दैट?

शिप्टन ने कहा—आई डोंट सी व्हाट यू मीन, आई कैन नॉट कैरी ऑन दिस इन्डिगो बिजनेस हियर विदाउट दैट वाइलि ओल्ड डीवान टु हैल्प अस, यू सी? दे विल नॉट फेल मी ऐट लीस्ट, आई नो।

—वेरी काइंड हाफ देम, इफ दे डोंट।

सुबह साहब लोगों की छोटी हाजिरी का खाना बड़ा ही अद्‌भुत ढंग का था। नींबू का रस निकालकर रात का बासी खाना। रात का हीं बचा हुआ ठंडा हैम। खीरे। सरसों के तेल में तली मछलियां। बंगाल के देहात में बहुत दिनों से रहते-रहते इन लोगों का

खान-पान स्थानीय निवासियों जैसा ही हो गया था। आम-कटहल का रस निकालकर भात खाते थे, हुक्का पीते थे। विलायत से उनके बंधु-बांधव आते तो मुंह बिचकाकर आपस में कहते — "गान नेटिव।" पर यह लोग परवाह नहीं करते थे।

दिन चढ़ने लगा तो सबने विदा ली। करीब चार दिन बाद खबर आयी कि आस-पास की सारी कोठियों के साहबों ने अपने बीबी-बच्चों को चूयाडांगा अथवा कलकत्ता भेज दिया था। राजाराम हमेशा घोड़े से कोठी के आस-पास गांवों का चक्कर लगाते रहते थे। एक दिन उन्हें पता चला कि सात गांवों के लोग मिलकर उस दिन आधी रात को कोठी लूटने आयेंगे। खबर नबू गाजी ने दी थी। कभी किसी मामले में बड़े साहब ने उस पर रिआयत की थी, उसको वह भूला नहीं था। उसी उपकार का बदला उसने यह खबर देकर चुकाया था।

राजाराम ने साहबों से कहकर आदमी तैयार करवा लिये। दोनों साहब स्वयं हाथों में बंदूक लिये आगे खड़े हो गये। थाने में खबर भेजने के लिये बड़े साहब ने सख्ती से मना कर दिया था, इसलिये पुलिस नहीं आयी।

आधी रात के करीब इछामती के किनारे वाले रास्ते पर हल्ला सुनायी दिया। साहबों ने हवा में फायर किये। राजाराम बैठकखाने और समाधिस्थान के बीच झाउ वृक्षों की कतार के अंधेरे में लाठियों व बमों से लैस रसिक मल्लिक और उसके साथियों के साथ खड़े थे।

रसिक बोला — दुहाई है दीवान मोशाय, इस बार हम लोगों को कुछ दिखाने का मौका दीजिये। उसकी खाज इस बार न मिटा दूं तो मैं भी विरभंग मल्लिक का बेटा नहीं...

—रुक साले। लोगों का खून कैसे किया जा सकता है? और कोई जगह होती तो भी कोई बात नहीं थी, पर यह तो कोठी के हाते में है। पुलिस आकर तहकीकात करेगी तो मुश्किल हो जायेगी।

—लाशें रातोंरात गायब नहीं कर दूंगा। यह जिम्मेदारी मुझ पर डाल दीजिये दीवान मोशाय...

—अच्छा, अभी ठहर। जब तक हुकुम न दूं तो लाठी-भाला मत चलाना...

चांदनी खिली हुई थी। राजाराम के मन में आज एक नया ही भाव था। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। झाउ वृक्षों की डालियों की फांक से चांदनी सड़क पर पड़ रही थी। तीनों बहनों का विवाह कर दिया था, भांजे का मुंह देख लिया था। जीवन के समस्त दायित्वों से मुक्त हो गये ते। आज इस दंगे में अगर उनकी जान चली भी जाये तो कोई साध नहीं रह जायेगी मन में। जगदंबा का इंतजाम उन्होंने कर दिया था। जितनी चल अचल सम्पत्ति थी, उससे एक अच्छा-बड़ा परिवार बिना कुछ किये आराम से रह सकता था। आज साहबों के लिये एकदम निश्चित होकर मर सकते थे। बहुत नमक खाया था उनका।

बोले — रसिक तैयार हो जा। पर जान से तभी मारना जब एकदम सर पर आ जाये।

वृक्षों के अंधेरे और उनके बीच से छनती चांदनी द्वारा सड़क पर बनी जाली में लोगों का झुंड आगे बढ़ता दिखायी दिया। उनके हाथों में मशाल, भाले, लाठी साफ दिखायी दे रहे थे। रसिक ने जोर से हुंकारा — आओ, सामने आओ सालों, तुम लोगों की गर्दनें बींधूं।

कुछ लोग आगे आकर बोले — कौन? रसिक भैया?

—भैया नहीं, तुम्हारा बाप...!

—ऐसी बात नहीं कहते... छिः आगे आओ भैया...

पलक झपकते रसिक राजाराम की बगल से गायब हो गया। कुछ पल बाद ही सामने की भीड़ तितर-बितर होकर इधर-उधर भागती दिखायी दी। भागते लोगों के बीच कोई चकरी सी घूम रही थी। और कभी-कभी एक चमकीली वस्तु झलक उठती थी। सोचा — हैं, रसिक मल्लिक है क्या? हिश्। यह क्या कर रहा है?

कोठी के अहाते के बाहर बड़े जोर का हल्ला मचा और फिर सब एकदम शांत हो गया। कहीं कोई नहीं था। बैठक के कमरे के उत्तरी पथ पर राजाराम को साहबों के घोड़ों की टाप सुनायी दीं तो वह आगे बढ़े। सड़क पर एक के बाद एक पांच आदमी पड़े थे। सब शेष हो गये थे। भाले से मरे थे सब।

उन्होंने आवाज लगायी — रसिक? ओ रसिक?

राजाराम का सर भन्नाने लगा। एक नयी मुसीबत पैदा कर दी थी रसिक मल्लिक ने। सारी लाशें तुरंत गायब करनी पड़ेंगी। साहबों को तुरंत बताना पड़ेगा।

आधा घंटे बाद छोटे साहब और दीवान राजाराम के बीच गंभीर परामर्श चल रहा था।

डेविड ने कहा — पांच लाशें कहां छिपाओगे? बांसोड़ के पानी में तो फेंक नहीं सकते, बंद के मुंह पर आ जायेंगी।

—नहीं साहब, कहीं नहीं बहायेंगे। हीरा डोम और उसके साले कालू को हुकुम दीजिये आने का। मैंने इंतजाम सोच लिया है।

क्या?

—पहले कर आऊं, फिर बताऊंगा। आप जल्दी से बुलवा लीजिये दोनों को। रात ही रात में काम निपटाना पड़ेगा। सड़क पर पड़ा खून भी साफ करना होगा। रसिक पर थोड़ा जुर्माना कर दीजियेगा कल।

पौ फटने से पहले सारा काम निपटाकर राजाराम अपने घर जाकर सो गये। लौटने पर जगदंबा ने झल्लाकर पूछा था — ऐसा भी क्या काम, सारी रात निकल गयी।

राजाराम ने शांत स्वर में कहा था — हिसाब-किताब का काम चल रहा है न। बही-खातों का मामला है, इतनी जल्दी थोड़े ही खतम होता है।

भवानी मुन्ने को गोद में लेकर मुहल्ले में मछली ढूंढ़ने निकले थे। मुन्ना अब थोड़ा-थोड़ा बोलना सीख गया था।

उन्होंने पूछा — मुन्ना, मछली खायेगा?

गर्दन हिलाकर मुन्ना ने कहा — मछली।

—मछली?

—मछली।

कुछ दूर जाने पर यदु धीवर मछली लिये आता दिखायी दिया। भवानी को देखकर यदु ने प्रणाम करके पूछा — मछली लेंगे?

—कौन सी मछली है?

—एक भेटकी मछली है, डेढ़ सेर की होगी।

—कितने की दोगे?

—तीन आने दे दीजिये।

—बहुत ज्यादा मांग रहे हो।

यदु ने कंधे से चप्पू उतारकर कहा — बाबू आप खुद सोचकर देखिये बाजार में हर चीज के दाम कहां जा रहे हैं। जब मैं छोटा था, चावल दो पैसे पायली मिलता था। फिर एक आना हो गया और अब छह पैसे है। मेरे परिवार में छह प्राणी हैं खाने वाले। दो वक्त में तीन आने तो चावल में चले जाते हैं, नून, तेल, सब्जी, कपड़ा, दवा-दारू, कारज परोजन कहां से करूं? गुजारा चलाना मुश्किल हो रहा है जमाई ठाकुर। अब दुनिया में गरीब का कोई ठिकाना नहीं रहा।

भवानी ने आगे कुछ न कहकर मछली ली और घर की तरफ चल पड़े। उनको देखते ही बिलु निलु दौड़ी आयीं। बिलु ने पति के हाथ से मछली लेते हुए पूछा — कौन-सी है? भेटकी या चीतल?

निलु बोली — मछली तो बहुत बढ़िया लाये हो। मुन्ना, मछली खायेगा? आ, मेरी गोद में आ जा।

मुन्ने ने पिता को और कसकर पकड़ लिया और बाबा-बाबा कहने लगा।

बिलु ने आंखें दिखाते हुए कहा — नहीं आयेगा?

—नईं।

—अच्छा। तेरे बाबा ही तुझे रांधकर खिलाते हैं न।

—बाबा।

—मछली नहीं खायेगा ना?

—खाऊंगा।

—तो फिर आ।

रूआंसा होकर मुन्ने ने पिता की ओर देखकर आवेदन किया — वो देखो...

अर्थात् मुझे तुम्हारी गोद से जबरदस्ती ले रही है। यह "वो देखो" कहना उसने

नया-नया सीखा था और जब तब बोल पड़ता था। भवानी बोले — रहने दो। महादेव मुखुज्जे के चंडीमंडप घुमा लाता हूं इसे।

निलु ने पूछा — मछली का क्या करना है, बताते जाइये...

—जो मर्जी हो कर लेना। तिलु कहां है?

—भैया के घर की छत पर बड़ी तोड़ने गयी है। आपके घर तो छत है नहीं, बड़ी कहां तोड़ती? कब बनायेंगे पक्का कोठा।

—जाकर अपने भैया से कहो ना, कुलीन कन्याओं का उद्धार किया है, लोहे के संदूक से कुछ रुपये निकाल दें। दुमंजिला कोठा बनवा दूंगा। मैं ब्याह नहीं करता तो उमर भर कुंवारी रह जाती, कौन करता ब्याह?

—इससे तो भैया गले में कलसी बांधकर इछामती में डुबो देते। क्या ब्याह किया। आहा मर जाऊं मैं। बूढ़ा वर, जिसकी तीन चौथाई बीत गयी, एक चौथाई रह गयी है।

—तो कर क्यों नहीं दिया किसी जवान के साथ? इतनी बड़ी धींगड़ी क्यों हो गयी? मैं ब्याह करने को तुम लोगों के पैर पकड़ने तो गया नहीं था।

—कान मल दूं आपके इसी बात पर...

कहकर निलु के क्षिप्रगति से हाथ पति के कान के पास ले जाते ही बिलु ने धमकाया — ए... निलु। क्या हो रहा है?

निलु फिक से हंसकर मछली लेकर भाग गयी। भवानी मुन्ने को लेकर चल दिये। सड़क पर आकर बोले — बता तो कहां जा रहे हैं हम?

मुन्ने ने गर्दन हिलाकर कहा — जाना...

—कहां?

—मछली।

रास्ते में एक बबूल के पेड़ पर किसी बेल के चढ़ जाने के कारण वहां घनी छाया थी। पेड़ की डाल पर किसी पक्षी ने घोंसला बना रखा था। भवानी ने मुन्ने को पेड़ के नीचे खड़ा करके हाथ उठाकर घोंसला दिखाते हुए कहा — वह देख मुन्ना, पाखी....

मुन्ने ने कहा — पाखी...

—पाखी लेगा?

—पाखी....

—अच्छा। दूंगा तुझे।

और मुन्ना पिता की ओर देखकर हंस दिया। इस निष्पाप, सरल शिशु का संग भवानी को बहुत ही अच्छा लगता था। उसकी निश्छल मुस्कान में उन्हें जाने क्या दिखायी देता था, अपार सुख मिलता था मन को।

—लेगा मुन्ना?

—हां — मुन्ने ने जोर से गर्दन हिलाकर कहा।

उसकी यह हां भवानी को बड़ी अच्छी लगी —प्रथम उच्चारित ऋक्मंत्र जैसे ऋद्धिमान और सुंदर।

—कितने लेगा?

—एक...

—ठीक है, एक ही दूंगा।

अगले क्षण मुन्ना बोला — बाबा।

—क्या?

—मां क्या?

—घल...

—अभी तो आया है घर से। अभी मां घर पर नहीं है। फिर उसने सामने की तरफ हाथ उठाकर कहा — वां.......

—नहीं, वहां नहीं।

—वां... उसने फिर कहा...

—नहीं चल घूमकर आते हैं। गोद से उतरेगा? पैरों-पैरों चलेगा?

—हां...

—भवानी के गोद से उतार देने पर मुन्ना उसके आगे-आगे ठुमकता हुआ चलने लगा। जरा आगे जाकर रुक गया और सामने हाथ उठाकर भयजनित स्वर में बोला— छियाल।

—कहां?

सियार नहीं एक बड़ा घोंघा सड़क पार कर रहा था। भवानी ने मुन्ने का हाथ पकड़कर आगे बढ़ते हुए कहा — चलो, वह कुछ नहीं है। पर मुन्ना आगे बढ़े ही नहीं। भवानी ने फिर कहा — डरो मत, चलो।

चेहरे पर आत्मसमर्पण का भाव झलक उठा उसके। पिता की उंगली पकड़कर भयभीत पर पूर्ण निर्भरता से आगे चल पड़ा। भवानी सोचने लगे — काश! हम लोग भी अगर इस शिशु की तरह भगवान पर निर्भर हो पाते। इस बच्चे से कितनी बातें सीखने को मिलती हैं उन्हें। वैषायिक लोगों के चंडीमंडप में बैठकर व्यर्थ की बातों में समय गंवाना अच्छा नहीं लगता अब उन्हें।

एक महान शिल्पी की विराट प्रतिमा का अवदान है यह शिशु। आकाश के विराट नक्षत्र लोक की ओर जब भी देखा है, मुग्ध हो गये हैं। उस ओर निहारना भी एक नीरव व निश्छल उपासना है। पश्चिम में गुरु के आश्रम में रहते समय चैतन्यभारती महाराज कितनी बार आकाश की ओर उंगली उठाकर कहा करते थे — वह देखो विराट अक्षय पुरुष...

"अग्निर्मूर्द्धा चाक्षुषी चन्द्रसूर्यो
दिशः श्रोत्रे वागवृत्ताश्च वेदाः

वायुः प्राणो हृदयं विश्वमस्य पदत्यां
पृथिवी हयेष सर्वभतांतरात्मा....

अग्नि जिसका मस्तक है, चंद्र और सूर्य चक्षु, दिशाएं कर्ण, वेद भाषा, वायु प्राण, विश्व हृदय, पृथ्वी दोनों पैर — वही समस्त प्राणियों की अंतरात्मा है।

उन्होंने ही आकाश देखना सिखाया था, आंखें खोल दीं उन्होंने। उन्होंने ही सिखाया था — जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि से सहस्रों स्फुलिंग निकलते हैं, उसी प्रकार उस अक्षर पुरुष से असंख्य जीवों की उत्पत्ति होती है और उन्हीं में विलीन हो जाते हैं वे!

यही उपनिषद् की अमर वाणी है।

यह शिशु उसी अग्नि का एक स्फुलिंग होने के कारण क्या वही अग्नि नहीं है? वह स्वयं भी क्या वही नहीं है? यह जंगल-झाड़ियां, यह पक्षी, सब क्या वही नहीं है?

इस निष्पाप शिशु की हंसी और अर्थहीन शब्द जैसे एक नये जगत का संधान देते हैं उन्हें। जिस प्रकार इस शिशु के प्यार से उन्हें खुशी मिलती है, उसी प्रकार वह भी तो भगवान की संतान है, अगर वह भी भगवान को इसी तरह प्यार करें तो क्या भगवान भी उनकी तरह खुश नहीं होंगे?

बरसों पहले साधुओं का संग छोड़कर आये थे वह। वहां सुबह से संध्या तक अमृत तुल्य भागवत कथा के अलावा और कोई बात नहीं होती थी, असीम तारों भरी रात के विभिन्न यामों में विनिद्र ज्ञानी और भक्त अप्रमत्त मन विश्वदेवता के चरण कमलों में लगाये रहते थे। हिमालय की वनभूमि के हर वृक्ष के पत्ते-पत्ते पर, तुषार धारा के रजतपट पर युगयुगांतरव्यापी उस उपासना की रेखा अंकित है। उनके अंतर्मुखी मन की मौन प्रशांति में जो निभृत वनकुंज है, वहां उस परम सुंदर देवता के उद्देश्य से आकुल आवेग की सुरभि में प्रेमार्द्र निवेदित होता था।

अत्यंत उच्च स्तर के भक्तों को यद्यपि उन्होंने अपनी आंखों से नहीं देखा पर उनके होने की बात उन्होंने साधुओं से सुनी थी और उन्हें अटल विश्वास था कि वे हैं।

वह हैं इसलिए इस प्रवंचना, शठता, मिथ्याचार व आसक्ति से भरी पृथ्वी पर आज भी पाप-पुण्य का ज्ञान बाकी है, भगवान के नाम में आस्था है, चांद निकलता है, तारे चमकते हैं और वनकुसुम की गंध से अंधकार सुवासित होता है।

इस देहात में आकर उन्होंने देखा कि सब के सब जमीन-जायदाद, रुपये-पैसे, परचर्चा में व्यस्त हैं। कोई भी तो उस परम पुरुष के संबंध में कभी जिज्ञासा प्रकट नहीं करता, धर्म चर्चा नहीं करता। भगवान के संबंध में यह लोग एकदम अज्ञ हैं। एक अद्‌भुत, अवांतर वस्तु को भगवान के सिंहासन पर बिठाकर पूजा करते हैं और भय से कांपते हैं। सारी पूजा-अर्चना के पीछे विषयलाभ की कामना होती है बस। उस परम्‌देवता की महान सत्ता, उसकी अविचल करुणा के संबंध में जानने का प्रयास तक नहीं करते। केवल रामकनाई कविराज और वटलता की वह सन्यासिनी, दो ही ऐसे व्यक्ति हैं, जिनसे भगवद्‌चर्चा

करके मन को सुख मिलता है। कूप-मंडूकता के दर्शन और जीवनवाद का वास्तविक परिचय यहीं आकर हुआ उन्हें।

उन लोगों की अपेक्षा तो इस शिशु का संग कहीं अधिक अच्छा है, जो न झूठ बोलना जानता है और न विषय संबंधी कोई बात सोच सकता है।

सड़क के दोनों ओर वृक्ष और झाड़ियां थे। मुन्ने ने चलते-चलते जैसे स्वयं से कुछ कहा।

भवानी ने पूछा — क्या है हे मुन्ना? क्या कह रहा है?

—नहीं आया।

—क्या नहीं आया रे? कौन आयेगा?

—चांद।

—चांद अभी थोड़े ही आता है बेटा। वह तो रात को आयेगा। चलो। मुन्ना ने भयभीत स्वर में कहा — छियाल।

—डरो मत, सियार नहीं है।

—बाबा!

—क्या?

—मां....

—मां अभी घर पर नहीं है। जब आयेगी, तब जायेंगे। अच्छा क्या खायेगा?

—मुकि। अर्थात् मुड़कि।

महादेव मुखज्जे के चंडीमंडप में बहुत से लोग बैठे हुए थे। भवानी को देख कर फणी चकत्ति बोले— आओ, आओ बाबाजी, सुबह-सुबह। मुन्ने को घुमाने निकले हो शायद? मुन्ना शैतानी करेगा, खेलने थोड़े ही देगा।

महादेव मुखज्जे बोले — मुन्ने को घर के अंदर भेजे देता हूं अभी। यह कहकर उन्होंने आवाज लगायी — मुंगली.... ए मुंगली...।

भवानी बोले — नहीं, रहने दो मामा। वहां टिकेगा नहीं, रोयेगा।

महादेव ने मुन्ने से पूछा — मुन्ना, क्या नाम है तुम्हारा?

मुन्ना विस्मय एवं भयमिश्रित दृष्टि से उनकी ओर देखता रहा, कोई जवाब नहीं दिया।

—क्या नाम है मुन्ना?

—मुन्ना।

—मुन्ना? यह तो बड़ा अच्छा नाम है। अरे वाह! ए....मेरी पारी है...

कुछ देर बात ही अंदर से सबके लिये मुरमुरे और नारियल के टुकड़े आ गये। खाकर सब पुनः खेल में ऐसे मस्त हो गये, मानों जीवन का वही चरम लक्ष्य हो।

तभी सत्यंबर चाटुज्जे का जमाई श्रीनाथ वहां आया। कलकत्ते में नौकरी करने के कारण वह एक सम्मानित व्यक्ति था। गांव के किसी आदमी ने कलकत्ता नहीं देखा था,

यहां तक कि दीवान राजाराम ने भी नहीं। किसी ने कभी जाने की जरूरत ही नहीं समझी। न तो बाल बच्चों को पढ़ाने का ख्याल था और ना जीविका के लिए किसी के द्वार पर धरना देना था।

फणी चकत्ति बोले — आओ बाबाजी, कलकत्ता की क्या खबर है?

श्रीनाथ जब भी गांव आता था, बड़ी अद्भुत खबरें सुनाया करता था। उसके वर्णन के झरोखे से ही, उस गांव के वातावरण में बाह्य जगत की हवा का प्रवेश होता रहता था जब-तब। बोला — बहुत गंभीर खबर है, किसी ने हमारे बड़े लाट का खून कर दिया।

सब एक साथ बोले — खून कर दिया? किसने?

—किसी वहाबी जाति के पठान ने।

महादेव मुखुज्जे बोले — क्या तो नाम था हमारे बड़े लाट का?

—लार्ड मेयो।

—लार्ड मेयो?

इसके बाद खेल नहीं जम पाया। वैसे तो लार्ड मेयो के मरने-जीने से उनमें से किसी को कोई फर्क नहीं पड़ता था। परंतु जीवन की एकरसता में उस नयी घटना से थोड़ी हलचल सी अवश्य हो गयी थी — झील के शांत ठहरे हुए जल में किसी के कंकड़ फेंकने की तरह। बस वही परम सुख था। श्रीनाथ ने विस्तारपूर्वक सारी बात बतायी कि उसके बाद कैसे खबर आते ही गोरों में उत्तेजना फैल गयी और सारे दफ्तर, कचहरी, बाजार बंद हो गये।

इसी में दोपहर होने को आ गयी। भवानी मुन्ने को लेकर घर लौटे तो तिलु बरस पड़ी — कैसी अकल है आपकी? कहां थे इतनी देर। भूख के मारे मुंह सूख गया है मुन्ने का, दिखायी नहीं दिया?

मुन्ना दोनों हाथ बढ़ाकर मां-मां कहता हुआ भवानी की गोद में उछला। उसे तिलु को देकर भवानी बोले — अरे तुम्हें खाने की पड़ी है, वहां लार्ड मेयो का खून हो गया।

—कौन था वह?

—बड़ा लाट। भारतवर्ष के बड़े लाट।

—किसने मारा?

—एक पठान ने।

—ओह! ये तो बहुत बुरा हुआ। कहकर तिलु मुन्ने को लेकर अंदर चली गयी।

लार्ड मेयो के मारे जाने के कुछ दिन बाद ही नीलकरों पर संकटों का पहाड़ टूट पड़ा जैसे। साहबों की जल्दी-जल्दी बैठक होने लगी। मजिस्ट्रेट साहब घड़ी-घड़ी अपना अर्दली भेजकर परवाना जारी करने लगे।

राजाराम घोड़े पर बैठकर नीलकोठी की तरफ जा रहे थे। रास्ते में रामकनाई एक

पेड़ के नीचे खड़े होकर उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। राजाराम के पास पहुंचते ही बोले — जरा ठहरिये दीवान बाबू?

भ्रू कुंचित करके राजाराम ने कहा — क्या है?

—एक बात सुनते जाइये। आप आगे मत जाइये। कनसोना के बागदी झुंड बनाकर षष्ठीतला के मैदान में आपको मारने के लिये लाठियां लिये खड़े हैं। मुझे पता चल गया इसलिये आपको बताने के लिये बहुत देर से यहां खड़ा इंतजार कर रहा हूं।

—कौन-कौन हैं?

—यह तो पता नहीं बाबू। मैं ठहरा गरीब आदमी। कानों में बात आयी, इसलिये बताना अपना कर्त्तव्य समझा, अधर्म नहीं कर सकता। एक दिन भगवान को जवाब तो देना ही पड़ेगा। आप ब्राह्मण हैं, आपको सावधान करने का भार उन्हीं ने सौंपा है मुझे।

इस पर भी राजाराम को आगे जाने का उद्यत देख रामकनाई ने हाथ जोड़ कर कहा — दीवान जी, मेरी बात मान लीजिये। बड़ी भारी विपदा आने वाली है आप पर। आगे मत जाइये। सुनिये बाबू... बाबू...

पर तब तक राजाराम काफी आगे चले गये थे। जाते-जाते सोच रहे थे, रामकनाई का क्या सिर फिर गया है? नीलकोठी के आदमियों द्वारा उन पर किये गये अत्याचार की जड़ में उनके होने की बात जानते हुए भी उन्हें बचाने के लिये इतना सिरदर्द उठा रहा है? नहीं, सब गलत है।

परंतु षष्ठीतला के मैदान में घोड़े के पैर पड़ते ही वास्तव में विपदा आ गयी। लाठियां लिये हुए बड़ी भीड़ ने उन्हें चारों तरफ से घर लिया। घेरने वालों में बांध के दंगे में मारे गये रामू बागदी का बड़ा लड़का हारू और उसका साला नारान सबसे आगे थे।

पलक झपकते प्रलय हो गयी। कुछ लोग चिल्लाये — उतर साले। आज लौटकर नहीं जायेगा तू...

नारान बोला — ओ साले साहब के कुत्ते.... आज तेरे सिर से षष्ठीतला के मैदान में गिल्ली खेलूंगा...

दूसरी तरफ से तीन-चार आदमी चिल्लाये — यह सब कहने की क्या जरूरत है? गर्दन पकड़कर उतार और जमीन पर पटककर छाती पर बैठकर गंडासे से सर उड़ा दे...

हारू बोला — तुम लोग हटो, मैं देखता हूं, मेरे बापू को साले ने धोखे से लठैतों से पिटवाकर मरवा दिया था...

एक बोला — तेरा बाप वह रसिक कहां है? बुला उसे, आकर बचाये तुझे... यम के घर जाना है न तुझे अभी।

और बस किसी का बल्लम बांयी तरफ पसलियों में घुस गया। डरकर घोड़े के तेजी से पलटते ही राजाराम धक्का नहीं संभाल पाये। सिर जैसे लट्टू की तरह घूमने लगा,

आंखों के सामने तारे टूटने लगे। ऐसा लग रहा था जैसे नारियल के पेड़ के ऊपर से तूफान गुजर गया हो, जाने क्या हो रहा था चारों तरफ। कविराज रामकनाई कहां गये? रामकनाई?

सिर पर जोर से लाठी पड़ी। सर भन्ना गया।

फिर से बांयी ओर से पसलियों में बर्फ सा ठंडा तीक्ष्ण अनुभूत हुआ। क्या हो रहा है उन्हें? इतना पानी कहां से आ रहा है? जाने किसने कहा — साले, रामू की याद आयी?

सामने के एक आदमी की लाठी का वार रोकने के लिये राजाराम ने हाथ उठाया। पर इतने लोगों की लाठियां कैसे रोकेंगे वह? इतना पानी कहां से आया? अल्प क्षण के लिये उन्होंने अपने कपड़ों की तरफ देखा, साथ-साथ जी मितला उठा। जैसे तेज बुखार में सिर घूमता है और उल्टी आने को होती है, ठीक वैसे ही। धरती जैसे बड़ी जोर से घूम रही थी।...

तिलु का बेटा जैसे मैदान के छोर पर बैठा हर बात से बेखबर हंस रहा था। फिर आंखें बंद होने लगीं। सारी दुनिया पर जैसे अमावस का अंधेरा उतर आया।

रामकनाई के भयाकुल पुकार से घबड़ाये गांव वाले जिस समय लाठी-बल्लम लिये दौड़ते हुए षष्ठीतला के मैदान में पहुंचे तो वहां कोई नहीं था। जमीन पर राजाराम की खून से लथपथ लाश पड़ी थी।

प्रायः एक वर्ष उपरांत

राजाराम का खून होने के पश्चात् हुआ शोरगुल कुछ दिनों में शांत हो गया था। जगदंबा ने सती होने की जिद पकड़ी थी, लेकिन तिलु-बिलु और निलु ने समझा-बुझाकर रोक लिया था। परंतु ज्यादा दिन जीवित नहीं रही वह। सोचते-सोचते दिमाग पर असर हो गया था। तीनों ननदों ने बड़ी लगन से सेवा की थी। पिछले दुर्गा उत्सव के बाद तीन दिन के बुखार में चली गयी थी वह। निःसंतान राजाराम की समूची सम्पत्ति का तिलु का लड़का ही उत्तराधिकारी था। सभी गांव वालों ने उन लोगों से राजाराम के पैतृक घर जाकर रहने का बहुत अनुरोध किया था, पर भवानी राजी क्यों नहीं हुए, यह वही जानते थे। अतएव वह अभी भी विवाह में राजाराम द्वारा प्रदत्त जमीन के उसी छोटे टुकड़े पर छप्पर वाले कच्चे मकान में रहते थे।

अंत में जब एक दिन तिलु ने भी भवानी से राजाराम वाले मकान में जाकर रहने की बात कही तो भवानी बोले — तिलु, तुम भी यह अनुरोध क्यों करती हो?

—क्यों नहीं करूं, आप ही समझाइये ना? अपने ससुर के मकान में रहने में क्या एतराज है आपको?

—नहीं। मेरा लड़का वह सम्पति नहीं लेगा।

—सम्पत्ति भी नहीं लेगा?

—नहीं, गुस्सा मत होओ तिलु। हजारों लोगों पर अत्याचार कर करके वह सम्पत्ति

संचित हुई है। मैं नहीं चाहता मेरा लड़का उस सम्पत्ति का अन्न खाये। देखो तिलु, अनेकों अच्छे लोगों की संगत में रहा हूं मैं। बस इतना जान पाया हूं कि जहां विलासिता है, अति है वहीं पाप है, गंदगी है। वहां आत्मा मलिन हो जाती है। चैतन्यदेव ने रघुनाथ दास को अच्छा न खाने और अच्छा न पहनने का उपदेश व्यर्थ थोड़े ही दिया था।

—आप जैसा ठीक समझें।

—मैंने तुमसे कई बार कहा है कि मैं अन्य पथ का पथिक हूं। बुरा मत मानना, तुम्हारे भैया का कामकाज मुझे कभी पसंद नहीं आया। रामू बागदी का खून उन्होंने ही कराया था। रामकनाई कविराज पर भी उन्होंने ही अत्याचार किये थे। पर उसी रामकनाई ने उन्हें विपत्ति की चेतावनी दी थी। होनी ऐसी थी, सुनते कैसे? किंतु वह सब बातें छोड़ो। मेरा मुन्ना अगर जीवित रहा तो वह अन्य प्रकार से जीवन-यापन करेगा। निर्लोभी होगा वह, सरलचित्त, धार्मिक एवं सत्यपरायण होगा। अगर वह परमेश्वर को जानना चाहेगा तो उसे सरलता और दीनता में जीवनयापन करना होगा। मलिन एवं विषयासक्त मन से भगवदर्शन नहीं होते। मैं उसे यही शिक्षा देना चाहता हूं।

—वह क्या आपकी तरह संन्यासी बन जायेगा?

—तुम जानती हो कि मैंने संन्यास ग्रहण नहीं किया। मेरे गुरुदेव महाराज ने कहा था — बच्चा, तेरा अभी भोग है और संन्यास नहीं दिया था। उन्होंने मेरा भविष्य देखकर मुझे आशीर्वाद दिया था कि गृहस्थी में रहकर भी भगवान को न भूलूं। असत्य, लोभ और पाप के पथ पर कदम न बढ़ाऊं। श्रीमद्भागवत के "वित्तशाठ्य नों" पर आचरण करूं, अर्थात् विषय के लिये छल, जुआ-चोरी कभी न करूं। फिर अपने लड़के को उस पथ पर कैसे ठेल दूं। तुम्हारे भाई की सम्पत्ति का भोग करने से ऐसा ही होगा।

—तो फिर भैया का सम्पत्ति का क्या होगा?

—क्यों, तुम तो हो।

—मेरा लड़का नहीं लेगा और मैं लूंगी? मुझे क्या समझा है आपने?

—तो फिर तुम्हारी दोनों बहनें हैं?

—उन्हें ही इस रास्ते पर क्यों धकेल रहे हो?

—अगर वे चाहें?

—चाहें भी तो आप उनके पति हैं, परमगुरु हैं, समझाइयेगा। वह बुद्धिहीन औरतें हैं तो आप तो समझदार हैं, बुद्धिमान हैं।

—ऐसा नहीं होता तिलु। वे दोनों बड़ी हो गयी हैं, अगर उनकी इच्छा हो तो भोग करें। किसी को जबरदस्ती किसी बात से नहीं रोका जा सकता।

—जबरदस्ती क्यों करेंगे? समझाइयेगा। पहले मैं ही उनके मन की थाह ले लूं, फिर आपको बता दूंगी।

—अच्छी बात है, अगर कोई नहीं लेगा तो वह सम्पत्ति अपने भाई-भाभी के नाम से

गरीब दुखियों की सेवा के लिये अर्पित कर देना। इससे उनकी आत्मा की उन्नति एवं तृप्ति होगी।

उसी दिन शाम को सहसा हला पेके आ पहुंचा। दूर से ही आवाज लगायी उसने — ओ बड़ी दीदी, मुन्ना कहां है?

मुन्ने को बुलाकर तिलु ने पूछा — वह कौन है रे?

जरा देर गौर से हला की ओर देखकर मुन्ना बोला — भैया...

—भैया नहीं रे, मामा है।

—मामा।

हला ने अंटी में खोंसी सोने की दो चूड़ियां निकालीं और मुन्ने को पहनाने को जैसे ही हाथ बढ़ाया, तिलु ने रोकते हुए कहा — नहीं भैया, यह नहीं पहनाने दूंगी।

—क्यों दीदी?

—उनसे पूछे बिना ऐसा नहीं करने दूंगी।

—उस बार भी नहीं लेने दीं। इस बार नहीं लीं तो क्या मेरा मन नहीं दुखेगा दीदीमणि?

—तो मैं क्या करूं? तुम यह सब लाते ही क्यों हो?

—जी चाहता है, इसलिये लाता हूं। मुन्ना, तू अपने मामा को प्यार करता है न?

विस्मित दृष्टि से हला की ओर देखकर मुन्ना बोला — हां।

—कितना प्यार करता है?

—इतना — दोनों हाथ फैलाकर मुन्ने ने कहा।

—अच्छा... तो फिर यह ले। कहकर हला ने उसकी ओर चूड़ियां बढ़ा दीं।

मुन्ने ने दोनों हाथों में चूड़ियां ले लीं तो हला ने खुश होकर कहा — देखो, उसने ले लीं। राजा मुन्ना चूड़ियां पहनेगा।

तभी भवानी ने घर में कदम रखा और हला को देखकर बोले — अरे तुम कहां से?

हला ने उठकर भवानी को साष्टांग प्रणाम किया। भवानी ने हंसकर कहा — बड़ी भक्ति दिखा रहे हो। इस बार क्या वसूल हुआ? फिर मुन्ने के हाथों पर नजर पड़ते ही बोले— हैं! उसके हाथों में चूड़ियां कहां से आयीं?

तिलु बोली — हला भैया लाये हैं।

हला का मुंह उतर गया। तिलु ने हंसकर भवानी से कहा — अपने लाड़ले की बात सुनो। हां रे, अपने मामा को कितना प्यार करता है?

फिर से दोनों हाथ फैलाकर मुन्ना बोला — इतना सारा।

भवानी ने कोई प्रतिक्रिया न दिखाकर कहा — चूड़ियां वापस कर दो। कैसे ले सकते हैं हम?

भवानी से सामने हला को कुछ कहने का साहस नहीं हुआ, पर उसका मुख म्लान हो

गया। तिलु बोली — भैया की बहुत इच्छा है। इस बार भी लाया था तो आपने नहीं लेने दी थीं।

भवानी ने हला से कहा — तुम यह सब लाकर हमें कठिनाई में क्यों डालते हो भला?

हला चुप। एक चुप सौ को हराये, किसी ने सच ही कहा है।

—चलो, इस बार छोड़ जाओ। पर फिर कभी कुछ....

हला का मुंह खुशी से चमक उठा। भवानी के चरणों की धूल लेकर बोला — अच्छा फिर कभी कुछ नहीं लाऊंगा। पर यह वह चीज नहीं है, जो आप समझ रहे हैं। यह मेरी अपनी चीज है।

भवानी बोले — तुम लोगों को जीवन भर अकल नहीं आयेगी। इतनी उमर हो गयी, अभी भी बुरा काम नहीं छोड़ते। काल का भी डर नहीं है?

तिलु बोली — अच्छा अब डांट-फटकार बंद करो अपनी। भूख से उसका मुंह सूख गया है। चलो भैया, रसोई की तरफ चलो।

हला उठकर तिलु के पीछे चल दिया और रसोई के दरवाजे पर बैठ गया।

उस दुर्धर्ष डाकू को तिलु और मुन्ना ने कैसे पालतू कुत्ते के समान वश में कर लिया था, भगवान ही जानें।

तिलु ने एक छोटी सी डलिया में भुने चावल, नारियल के टुकड़ों की माला और पत्थर की कटोरी में खजूर का गुड़ उसके सामने लाकर रख दिया।

हला वास्तव में बहुत भूखा था। देखते-देखते सारे चावल खतम करके बोला — दीदी, अगर हों तो थोड़े और दे दो।

—बैठो, अभी लायी। कहकर तिलु अंदर गयी और कांसे के बेले में चावल लाकर उसकी डलिया में डालते हुए बोली — कोई डकैती की कहानी सुना दो भैया।

हला ने खाते हुए कहानी शुरू की — भंडारखोला गांव के नील मणि मुखुज्जे के घर मैं और अघोर मोची पाबांसा पहनकर डाका डालने गये थे। वहां जाकर देखा, घर में चार-पांच आदमी और आठ-दस औरतें थीं। दो नौकरों में से एक अपने परिवार के साथ वहीं ढोर-डंगर वाले दालान के पास बने कमरे में रहता था। आपस में परामर्श करके लूटने का ही निश्चय किया और ढेंकी से दरवाजा तोड़ डाला। अंदर मर्द लाठी बल्लम लिये तैयार खड़े थे। दरवाजा टूटते ही औरतों ने जोर-जोर से चीखना-चिल्लाना शुरू कर दिया।

तिलु बोली — आहा!

—आहा नहीं, दीदीमणि! आगे सुनो तो। उस रात तो मरते-मरते बचे थे हम। उस घर की दाक्षायणी नाम की एक विधवा लड़की बाहर भागकर गयी। डंगरों के बीच में छुपकर ऐसे बल्लम चलाने लगी कि अच्छे-अच्छे हार मान जायें। मर्द किसी तरह जीने से ऊपर चढ़ गये और वहां से ईंट-पत्थर फेंकने लगे। हमारा एक आदमी जख्मी हो गया।

—मर गया?

—नहीं उस वक्त तो नहीं मरा, पर बाद में हमारे हाथों से मरा। जब दाक्षायणी के वारों से अपने को बचाना असंभव दिखायी दिया, तो मुंह से झंप बजा दिया...

—वह क्या होता है?

—ऐसी आवाज निकाली मुंह से कि डर के मारे औरत के पेट का बच्चा भी गिर जाये — करूं, सुनोगी? पर नहीं, मुन्ना डर जायेगा। फिर हमने भी लाठी बल्लम चलाने शुरू कर दिये। तब तक हो हल्ला सुनकर गांव वालों ने आकर घेर लिया था हमें। अघोर ने भागने का इशारा किया — लेकिन भागते कैसे, चारों तरफ से तो घिर गये थे। तब अपना आखिरी शस्त्र चलाया — दोनों हाथों से लाठी चलाते हुए, सर को बीच में रखकर कुम्हार के चाक की तरह घूमता हुआ भीड़ में से निकलकर सबके लिये रास्ता बना दिया और जो आदमी मर गया था, उसका सिर काटकर, लेकर भाग आये। वंशीधर नाम था उसका। बड़ा अच्छा भाला चलाने वाला था।

—पर अपने ही आदमी को खुद क्यों मारा?

सिर नहीं काटकर लाता तो ताश से शिनाख्त हो जाती और अगर जिंदा रह जाता तो पुलिस वाले सबसे नाम उगलवा लेते। जरा सी देर हो जाती तो सब के सब मारे जाते, बस भाग ही आये। तीस तोले सोने के गहने हाथ लगे थे।

—वह कैसे? औरतें तो ऊपर छत पर चढ़ गयीं थीं।

—वह तो अंदर घुसते ही छीन लिये थे। लूट-पाट में देर थोड़े ही की जाती है। काम फतह हो जाने पर जो चाहे करते रहो, चीखते-चिल्लाते रहो।

—यह सब मत किया करो भैया। बड़ा पाप का काम है। ऐसा अन्न तुम्हारे गले से उतरता कैसे है, जिसमें सैकड़ों लोगों के आंसू और बद्‌दूआ मिली हों। छिः छिः अपने पेट के लिये ऐसा काम?

कुछ क्षण चुप रहकर हला बोला — पाप-पुण्य की बात मत करो दीदी। वह जमाना चला गया। न वैसा राजा रहा और न वैसा देश। याद नहीं, हम लोग बचपन में गाया करते थे —

धन्य राजा सीताराम बंगाल बहादुर
जिसके डर से चोरी डाका हो गए दूर
शेर-बकरी और घाट पर पीते पानी
पोटली बांध गंगास्नान को जायें रामी शामा।

तिलु हंसकर बोली — यह गाना दीनू बुढ़िया बहुत गाया करती थी। सीताराम नलदी परगने का राजा था। मसूदपुर उसका किला थी और मेरे मामा का घर मसूदपुर के हरिहरनगर में था। मैंने सीताराम के टूटे किले के ईंट-पत्थर, सीताराम का सुखसागर नाम का तालाब सब कुछ देखा है। अब तो वहां घना जंगल हो गया है, सांप, शेर, चीते रहते हैं। वहां एक मंदार का पेड़ था, उसके फल बहुत खाया करते थे बचपन में। बहुत मीठे होते थे।

भवानी स्नान से निवृत्त होकर पूजा करने बैठे। तिलु उनके कमरे में तीन-चार खीरे काटकर, गोले के टुकड़ों की आधी माला और थोड़ा खजूर का गुड़ रख गयी। भवानी के खा लने के बाद थाली भर भात एक बटलोई दाल से खाया और आराम करने लगा।

कुछ देर बाद मुखेज्जेपाड़ा की तरफ से रोने-पीटने की आवाज आयी। तिलु ने हला से कहा — भैया जरा देखकर आओ तो, कौन रो रहा है?

भवानी भी उठकर भागे। आकर बोले — फणी मामा की बड़ी ताई जहाज डूबने से मर गयी। गणेश खबर लाया है।

तिलु ने आश्चर्य से कहा — हाय राम! जहाज डूबने से? वह कैसे?

—हां। सर जॉन्स लॉरेंस नाम का जहाज था।

—जहाज का भी कोई नाम होता है?

—होता क्यों नहीं। वह जहाज पुरी जाते हुए, रास्ते में समुद्र में डूब गया। बहुत सारे लोग मरे हैं।

—उसमें तो इसी गांव से सात-आठ आदमी थे जी। टगर कुम्हार की मां थी, पेंचो ग्वाले की सास और बड़ी विधवा लड़की क्षेंति थी, राजू सरदार की मां थी, नीलमणि काका की बड़ी भाभी थी। क्षेंति के साथ उसका सात साल का लड़का भी गया था।

गांव में सचमुच रोआराट मच गया। नदी के घाट पर, लोगों के चंडीमंडपों में, खेत-खलिहानों में, बाजार में, हर जगह इसी की चर्चा थी।

इस जहाज में बंगाल के बहुत से जिलों के बहुत तीर्थयात्रियों के डूबकर मर जाने के कारण इस घटना का बंगाल के सामाजिक इतिहास में एक विशिष्ट स्थान है।

गया मेम बड़े साहब की कोठी से निकलकर कुछ ही दूर आयी थी कि प्रसन्न अमीन ने पीछे से आवाज लगायी — गया... ओ गया, जरा सुनो।

गया ने एक बार पीछे मुड़कर देखा और कहा — इस वक्त नखरे उठाने का वक्त नहीं है मेरे पास।

—एक बार सुन जाओ बस।

—क्या?

—शाम को घर रहोगी?

—रहूं न रहूं आपको इससे क्या?

—नहीं, ऐसे ही क़ह रहा हूं।

—यहां कोई बात नहीं। अगर कुछ कहना हो दो शाम को घर आकर मां के सामने कहियेगा।

प्रसन्न चकत्ति पास आकर दांत निपोरते हुए बोले — अरे नहीं, मैं यहां थोड़े ही कुछ कह रहा हूं — मैं तो पूछ रहा था कि कैसी हो तुम, जरा दुबली लग रही हो।

—बस-बस रहने दीजिये, यहां सड़क पर खड़े होकर नाटक मत करिये।

—नहीं, इस गया को ठीक से समझ ही नहीं पाये। जब भी लगता है कि उन पर जरा प्रसन्न हुई, तभी झट से मुंह फेरकर चली जाती है। हतबुद्धि से खड़े रह गये प्रसन्न।

पीछे से घोड़े की टाप सुनायी दी तो घूमकर देखा उन्होंने, बड़े साहब कहीं जा रहे थे। दिल जोर-जोर से धड़कने लगा, कहीं बड़े साहब ने तो उसे गया मेम से बात करते नहीं देख लिया? हे भगवान!

आजकल सांझ इतनी देर से क्यों होती है। बांजोड के किनारे का पेड़ ढलती धूप में लाल दिखने लगा था, पक्षियों का झूंड नदी पर से उड़ता हुआ खाड़ी की ओर चला गया था, पर तब भी लगता था जैसे सांझ होने में अभी बहुत देर है। काफी देर बाद बाग्दी पाड़ा और कलुपाड़ा के घरों से संध्या का शंख बजने की आवाज आयी और इधर वटतला की खेपी सन्यासिनी के मंदिर के कांसे का घंटे की आवाज वातावरण में गूंज उठी।

प्रसन्न चकत्ति ने जाकर जरा भयजनित स्वर में पुकारा — ओ वरदा दीदी...

गया का नाम लेकर आवाज देने की हिम्मत नहीं पड़ी।

यह क्या? यह तो बिन मांगे मोती मिल गये। गया स्वयं बाहर आयी और बोली — क्या है काका मोशाय?

—वरदा दीदी घर पर नहीं है?

—नहीं, क्यों?

—अच्छा इसीलिये।

गया मेम के अधरों पर एक तिर्यक मुस्कान खेल गयी, बोली — मां से काम था आपको? युगी के घर गयी हैं, ठहरिये बुला लाती हूं।

—नहीं, नहीं। बैठो गया, असल में तो तुम्हीं से दो बात करनी थी।

—क्या?

—अच्छा, मैं तुम्हें कैसा लगता हूं?

—बुड्ढ़ा आदमी जैसा लगता है, वैसा ही।

—मैं क्या बहुत बुड्ढ़ा हूं? देखो झूठ मत बोलना गया। बड़े साहब क्या अब भी जवान हैं? उनकी उमर नहीं हुई?

—उन लोगों की बात छोड़िये। आप क्या कहना चाहते हैं, वह कहिये...

—अच्छा बताओ तो, मुझे तुम्हें देखे बिना चैन क्यों नहीं पड़ता?

—मुझसे यह बात कहते शर्म नहीं आती आपको?

—शर्म आने की वजह से ही तो अब तक नहीं कह पाया...

—क्या कहने। और अब लगता है जुबान को लगाम नहीं रही...

—नहीं सच गया, इतनी लड़कियां देखीं, पर तुम्हारे जैसी सुंदरता पहले कभी आंखों में नहीं पड़ी....

—यह सब बातें छोड़िये। एक सलाह देती हूं। सुनिये...

—क्या?

—किसी से कहियेगा तो नहीं?

प्रसन्न का चेहरा खिल गया। इतनी घनिष्ठता के साथ गया ने पहले कभी बात नहीं की थी। उसकी भंवों की भंगिमा, उसके अधरों की मुस्कान दिल में उतर गयी थी। लगता था जैसे स्वर्ग धरा पर उतर आया हो।

क्या कहेगी गया? दिल धुक-धुक करने लगा। अधीर होकर व्यग्र स्वर में बोले — बोलो गया... क्या बात है? अपने दोनों के बीच की बात मैं भला किससे कहने जाऊंगा?

अंतिम वाक्य प्रसन्न ने बहुत जोर डालकर कहा था। पर गया ने उस बात के इंगित की पूर्णतया उपेक्षा करके सहज स्वर में कहा — सुनिये, आपके भले के लिये कह रही हूं। साहब लोगों के दिन पूरे हो रहे हैं। जल्दी ही यहां से चले जायेंगे वे लोग। बड़े साहब की मेम जल्दी ही जाने वाली हैं। दिल की अच्छी है वह। जाते समय कुछ मांग लीजियेगा उससे। दे देगी।

प्रसन्न चकत्ति बुद्धिमान आदमी थे। उन्हें इस बात का थोड़ा बहुत अनुमान न हो, ऐसी बात नहीं थी। पर गया ने उनसे इतने दिन बाद आज ऐसे अपनेपन से यह बात क्यों कही? उनके सुख-दुख उन्नति अवनति से उसे क्या फर्क पड़ता था? उनका शरीर पुलकित हो उठा, शिराओं में रोमांच दौड़ गया। उस गोधूलि की बेला में इतनी उम्र के बाद जीवन के अंतिम प्रहर में जाने कैसी नयी अनुभूति हुई उन्हें।

पूछा — साहब जा क्यों रहे हैं?

हंसकर गया ने कहा — जानते नहीं काका मोशाय? आपने कुछ नहीं सुना?

—हां, सुना तो है कुछ-कुछ।

—सारे जिले के लोग विद्रोही हो गये हैं। मजिस्ट्रेट साहब के पास से रोज चिट्ठी आ रही है। सावधान रहने को कहता है। इसीलिये मेमों को यहां से भेज रहे हैं। आप भी जरा सावधानी से चलिये। प्रजा पर पहले जैसे अत्याचार मत करिये। नहीं तो मुसीबत में पड़ेंगे...

—क्यों, मेरे मरने से तुम्हें क्या फर्क पड़ेगा गया?

सहसा प्रसन्न चकत्ति का स्वर अत्यंत गाढ़ा हो गया।

खिलखिलाकर हंस दी गया। बोली — आपका भी जवाब नहीं है। काम की बात कही मैंने तो और आपने शुरू कर दी बेकार की बातें...

—मैंने कौन सी खराब बात कही गया?

कंठ स्वर पहले से भी गाढ़ा हो उठा।

—फिर वही बेकार की बातें। जो बात कही, वह कानों में गयी या नहीं? ठहरिये आप...

कहकर प्रसन्न चकत्ति को स्तंभित व अवाक करती हुई गया ने उनके एकदम पास आकर जोर से पीठ पर दुहत्तड़ मारकर कहा — मच्छर... यह देखिये....

रग-रग में सिहरन दौड़ गयी प्रसन्न अमीन के। लगा जैसे धरती लट्टू की तरह घूम रही थी। गया बोली — जैसा कहा है, वैसा ही करियेगा। समझे? सुनायी दिया कुछ?

—हां, सुनायी दिया। अच्छा गया, अगर तुम्हारी बात न सुनूं तो? तुम्हारा क्या नुकसान है?

गया ने जरा गुस्से से कहा — मेरा भला क्या नुकसान होगा। नहीं सुनेंगे तो मरियेगा दीवान जी की तरह।

—गुस्सा क्यों होती हो गया? मेरा मरना ही अच्छा। कौन रोयेगा मेरे लिये। कहकर एक दीर्घश्वास छोड़ी प्रसन्न चकत्ति ने।

—आ हा हा! स्वांग तो देखो। जी जलकर राख हो जाता है। एक सीधी सी बात कही तो मरने के बाद कौन रोयेगा करने लगे। मैं पूछती हूं सीधे रास्ते नहीं चला जाता?

—अच्छा छोड़ो।

—यही ठीक है।

—मुझे देखकर तुम्हारा जी जलकर राख हो जाता है, क्यों?

—मुझे कुछ नहीं मालूम। यह सब बेकार की बातों का जवाब देने का वक्त तो है नहीं मेरे पास। बैठकर गप्पें मारने के अलावा तो जैसे मेरे पास और कोई काम है नहीं। अब उठिये, मां के आने का वक्त हो गया...

प्रसन्न ने घूमकर कहा — क्या?

—सुनिये।

—कहो ना, क्या कहना है?

—नाराज तो नहीं होंगे?

—नहीं। चलता हूं अब...

—सुनिये तो।

—क्या?

—आप एक पागल हैं।

—क्या कह रही हो तुम भी। अच्छा एक बात सुनो — पास आओ...

—नहीं, यहीं कहिये।

—निधु बाबू का टप्पा सुनोगी...

—नहीं, आप जाइये, मां आने वाली है...

प्रसन्न चकत्ति चार कदम भी नहीं गये होंगे कि गया ने फिर पीछे से कहा — फिर आइयेगा किसी दिन... सुना? आइयेगा ना?

—क्यों नहीं आऊंगा। जरूर आऊंगा।

दूर मैदान वाला रास्ता पकड़ा प्रसन्न चकत्ति ने। गया के घर से काफी दूर चले आये

थे। भरोसा था कि वरदा ने नहीं देखा था। कितनी अच्छी तरह बात की गया ने। मां न देख ले, इसलिये कैसे उन्हें वहां से खिसका दिया उन्हें।

परंतु उससे भी अद्‌भुत, उससे भी आश्चर्यजनक, ऊपर से नीचे तक सारे शरीर को रोमांचित करने वाली बात थी गया का मच्छर मारना।

इतने पास आकर, सटकर खड़ा होना।

सचमुच क्या पीठ पर मच्छर था? कहीं मच्छर मारने के बहाने गया ने उनके निकट तो नहीं आना चाहा था?

वह तो तकदीर थी कि गया की मां घर पर नहीं था। नहीं तो गया से साक्षात् ही नहीं होता। शरद की ऐसी संध्या वृथा ही चली जाती...

सम्पूर्ण जीवन में बस यही एक दिन तो उनका अपना था। चिरकाल से जिसकी कामना करते आये थे, आज इतने दिन बाद क्या वह प्राप्त हो सका था? नारी के प्रेम के लिये क्या उनका सारा जीवन पिपासु नहीं था?

प्रसन्न चकत्ति बड़ी देर से घर लौटे। घर के नाम पर एक छोटा-सा कमरा और उसके साथ छप्पर की एक छोटी सी रसोई। सदर अमीन नकुल घाड़ा अनुपस्थित था, नहीं तो बोल-बोल कर प्राण ले लेता। आज बातें करने का मिजाज नहीं था। बस बैठे-बैठे सोचने का जी चाह रहा था... गया ने उनके एकदम निकट आकर मच्छर मारा... ऐसा भी होता है। स्वर्ग की उर्वशी मेनका भी कभी हाथ की पहुंच में आ जाती है, वह चाहते थे कि...

अचानक बारिश होने लगी। छप्पर के छेद में से मिट्टी के चूल्हे पर टप-टप बूंदें पड़ रही थीं। करेला कच्चा केला डालकर भात चढ़ाया हुआ था। बस और कुछ नहीं। किसी और चीज की जरूरत क्या थी? खाने की इच्छा ही नहीं थी। बस केवल सोचना अच्छा लग रहा था... गया मेम की वह अद्‌भूत भंगिमा, उसकी वह मोहक मुस्कान... मच्छर मारने के लिये इतने पास आकर थप्पड़ मारना...

क्या सचमुच पीठ पर मच्छर बैठा था?

अच्छा, अगर ऐसा होता...

कि वह खाना बना रहे हैं और मुस्कुराती हुई गया आकर झांककर कहती — क्या कर रहे हैं, काका मोशाय?

—खाना बना रहा हूं गया।

—क्या बना रहे हैं?

—भात।

—बड़ी तकलीफ उठानी पड़ती है आपको!

—क्या करूं गया, मेरा है ही कौन? खाया, नहीं खाया या क्या खाया, कौन देखने वाला है?

—आपके लिये मछली लायी हूं।

—मेरा इतना ख्याल क्यों रखती हो गया?

—आपके लिये मन बड़ा खराब होता है। अकेले रहते हैं, इतनी तकलीफ में जी रहे हैं...

भात हो गया। जलने की बास आने लगी थी। सरसों का तेल मिलाकर भात खाने लगे प्रसन्न चकत्ति। रेंड़ी के तेल का पानी वाला दुमंजिले दीवट की लौ हवा के झोंकों के साथ नृत्य कर रही थी। जब खाना खतम होने को आया तब सहसा होश आया कि नमक तो डाला ही नहीं था, अलोना ही खा लिया था उन्होंने।

अच्छा, पीठ पर क्या सचमुच मच्छर बैठा हुआ था?

रामकनाई कविराज सुबह इछामती में स्नान करके वापस लौटे तो किनारे की झाड़ियों में खिले फूल देखकर प्रसन्न हो गये। तोड़ने का लोभ संवरण नहीं कर सके। सोचा बहुत अच्छी पूजा होगी। कांटों का जंगल भेदकर बड़ी कठिनाई के फूल तोड़े उन्होंने। घर लौटते-लौटते खासी देर हो गयी।

रोज प्रातः स्नान करके गांव के कुम्हार द्वारा निर्मित राधा-कृष्ण की मूर्ति की पूजा करते थे। मन को भा जाने पर भासानपोता के चैत्र संक्रांत के मेले में खरीदी थी। उस मूर्ति के पैरों पर फूल चढ़ाना बहुत ही अच्छा लगता था। चंदन घिसकर लगा देते थे, एक दो अगरबत्ती जला देते थे। नैवेद्य कभी अमरूद काटकर, कभी पपीते का टुकड़ा चढ़ा देते, कुछ नहीं होता एक डली ईख का गुड़ चढ़ा देते।

पूजा करते-करते कोई आ न जाता तो बहुत देर तक पूजा करते रहते। कभी-कभी आंखों से आंसू भी बहने लगते।

किसी ने बाहर से पुकारा — कविराज मोशाय हैं?

—कौन? अभी आया।

—सबाइपुर के अंबिक मंडल के लड़के को बुखार है। वहां चलना पड़ेगा।

—अच्छा, चलता हूं। बैठो।

पूजा-अर्चना करके प्रसाद लेकर बाहर आये रामकनाई और थोड़ा सा उस आदमी के हाथ पर रख दिया।

—क्या बीमारी है?

—जी, तीन दिन से बुखार है।

—तुम जाओ। मैं दो मरीज और देखकर आऊंगा।

दो फांक खीरे की खाकर रामकनाई रोगी देखने निकल गये। कई जगह घूमकर दोपहर के वक्त सबाईपुर अंबिका मंडल के घर पहुंचे। अंबिका मंडल बैंगन की खेती करता था, माली हालत अच्छी नहीं थी। बड़े ध्यान से देखा रामकनाई ने, फिर बोले — नब्ज की हालत अच्छी नहीं है। एक बार झटका जरूर खायेगी।

सारे घर वालों ने मिलकर कविराज को उस दिन वहीं कहने का आग्रह किया। किसी को यह मालूम नहीं था कि रामकनाई ने कुछ खाया नहीं था, इस कारण किसी ने

खाने के लिये पूछा भी नहीं। वह बेचारे भूखे-प्यासे सांझ तक बच्चे के सिरहाने बैठे रहे। फिर घर आकर संध्या-अर्चना करके खाना बनाया खाया और फिर से रात के प्रथम प्रहर में रोगी के घर जा पहुंचे।

रामकनाई का नाड़ी ज्ञान विलक्षण था। आधी रात के समय रोगी की अवस्था अब गया-तब गया हो गयी। सूचिकाभरण का प्रयोग करके झटका संभालना पड़ा उन्हें। छोटा सा घर था, एक पीढ़े पर आसन बिछा दिया उन लोगों ने, सुबह होने तक उसी पर बैठे रहे रामकनाई। सुबह फिर नाड़ी देखी तो गंभीर मुंह हो गया उनका, बोले — यह रोगी नहीं बचेगा। विषम सान्निपातिक ज्वर है, विकार उपस्थित हो गया है। मैं चलता हूं। मुझे कुछ भी नहीं देना होगा तुम लोगों को।

इतने परिश्रम के बदले एक फूटी कौड़ी भी नहीं मिली रामकनाई को। परंतु इसके लिए उनके मन में जरा भी दुख नहीं था, बल्कि रोगी को बचा न पाने का अफसोस अवश्य था।

इन दिनों एक छात्र मिल गया था उन्हें। भजन-घाट के अक्रूर चक्रवर्ती का लड़का था। नाम निमाई था और उमर प्रायः बाइस तेइस। वह घर के बाहर दूर्वाघास पर माधव-निदान पोथी लिये बैठा था। अध्यापक के आते ही उठकर प्रणाम किया उसने।

उसे देखकर प्रसन्न हो गये रामकनाई बोले — बैठो बेटा निमाई! नाड़ी का च्युत होना कैसा होता है रे?

—जी नाड़ी का च्युत होना क्या होता है? समझ नहीं पाया मैं।

—कितने के बाद च्युत होने पर संकटग्रस्त नाड़ी होती है?

—तीन के बाद एक बार, चार के बाद एक बार।

—वह कैसे? सात के बाद, आठ के बाद होने से क्यों नहीं होती?

—जी, तब भी होगी।

—तो यह कहो ना। आज एक रोगी देखा जिसकी नाड़ी सात के बाद च्युत थी। वहीं से आ रहा हूं।

—बचा?

स्वयं धन्वन्तरि का असाध्य है — कृति साध्या भवेत् साध्य-सुश्रुत में कहा है। बेटा एक बात कहूं? वैद्यक पढ़ने तो आये हो, पर शरीर में कोई दोष मत रखना। झूठ मत बोलना। लोभ मत करना। अल्प में संतुष्ट रहना। दुखी गरीबों की बिना मूल्य चिकित्सा करना। भगवान में मति रखना। नशा भांग मत करना। तभी अच्छे कविराज बन पाओगे। मेरे गुरुदेव मंगलगंज के गदाधर सेन कविराज (यह कहकर उनकी याद में हाथ जोड़े रामकनाई ने) हमेशा यह बात कहा करते थे। मैं उनका अत्यंत प्रिय छात्र था न। पर उनके उपयुक्त नहीं बन सका। हम लोग उनके कुलांगार छात्र हैं। वह नब्ज देखकर जो कह देते थे, पत्थर की लकीर होता था। वह कहा करते थे, मन पवित्र रखे बिना नाड़ीज्ञान नहीं होता। कुछ खाओगे?

सलज्ज भाव से छात्र ने कहा — नहीं, गुरुदेव।

—तेरा मुंह देखकर तो लग रहा है कि तूने कुछ खाया नहीं है। पर तुझे खाने को दूं भी क्या, कुछ भी तो नहीं है घर में — एक नारियल है वही छील ले।

—हंसिया है?

—वटकृष्ण सामंतों के यहां से ले आ, वह नदी किनारे बांसों के नीचे घर है। पहचान लेगा या साथ चलूं?

—नहीं, पहचान लूंगा....

दोनों गुरु-शिष्य ने कच्चा नारियल और चने की भुनी दाल खाकर पढ़ने-पढ़ाने में मन लगाया। दोपहर हो गयी पर कविराज को जैसे होश ही नहीं था। "माधव-निदान" पढ़ाते-पढ़ाते चरक और चरक के बाद कलाप व्याकरण। सबसे आखिर में श्रीमद्भागवत शुरू हुआ। रामकनाई अच्छे संस्कृतज्ञ थे। व्याकरण की उपाधि तक पढ़ी थी उन्होंने।

छात्र से बोले —

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदार धी।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेतः पुरुषं पर।

अकाम अर्थात् विषय-कामना शून्य होकर भक्ति द्वारा ईश्वर का भजन करना। समझे बेटा, उनकी असीम दया प्राप्त होगी — चैतन्यचरितामृत में कविराज गोस्वामी ने कहा है—

सकाम भक्त अज्ञ जानि दयालु भगवान
स्वचरणों से करते इच्छा का निदान...
उनके चरणों की शरण लेते ही वह कृपा करते हैं। मनुष्य की अज्ञता देखकर अगर वह दया नहीं करेंगे तो कौन करेगा?

शिष्य जाकर जंगल से लकड़ी बीन लाया। गुरु बोले — एक जिमीकंद क्यों नहीं ले आया जंगल से? है वहां?

—बहुत हैं।

—ले आ। वटकृष्ण के यहां से फावड़ा मांग ले और उनका हंसिया दे आ? दे आ। बड़ा सा जिमिकंद देखकर लाना, खाने के लिये और कुछ नहीं है घर में। जिमिकंद— भात में सरसों पीसकर मिलाने से बहुत अच्छा लगेगा। और सुन वटकृष्ण के यहां से दो हरी मिर्चें भी मांग लाना...

—मुंह में खाज तो नहीं लगेगी गुरुदेव?

—अरे नहीं, नहीं। सरसों पीसकर मिलाने से खाज नहीं लगेगी।

—जिमीकंद तुरंत निकालकर नहीं खाना चाहिए, दो-तीन दिन धूप में सुखा लेना चाहिए।

—वह सब पता है। आज भात के साथ कुछ तो खाना होगा ना? तू ले आ जाकर। जा, और तू भी यहीं खाना।

खाना खाकर दोनों ने फिर पढ़ना शुरू कर दिया। शाम हो गयी, बांस बन में झींगुर बोलने लगा। अंधेरा हो जाने से किताब के अक्षर दिखने बंद हो गये। तब गुरु के आदेश से शिष्य ने बस्ता बांधा और भूमिष्ठ होकर प्रणाम करके कहा — तो अब जाऊं गुरुदेव।

—अरे, जायेगा कैसे? बांसबन के ऊपर घने बादल छाये हुए हैं, तेज बारिश आयेगी और तू तो छाता भी नहीं लाया आज...

—उसका बेंटा टूट गया था। एक छाता और बना रहा हूं। अच्छे कचिया ताड़ के पत्ते लाकर मिट्टी लपेटकर रख दिये हैं। सात-आठ दिन में पक जायेंगे। उन ताड़ पत्तों का मजबूत छाता बनेगा।

—क्यों केतकी के पत्तों का अच्छा छाता बनता है।

—टिकता नहीं है गुरुदेव। ताड़ के पत्तों वाला सबसे मजबूत होता है।

—किसने कहा नहीं टिकता? केतकी के पत्तों का छाता बनाना सबको नहीं आता। मैं बनाकर दूंगा तुझे, तब देखना...

शिष्य के चले जाने के कुछ देर बाद गया मेम घर में घुसी। हाथ में पके केलों का गुच्छा था। दूर से रामकनाई को प्रणाम करके दहलीज के पास ही खड़ी रही। रामकनाई बोले — आओ बेटी, बैठो-बैठो खड़ी क्यों हो? हाथ में क्या है?

साहस पाकर गया बोली — केले का गुच्छा है। आपके चरणों में चढ़ाने को लायी थी।

—वह तो नहीं ले सकता बेटी... मैं किसी का दान नहीं लेता...

—एक कौड़ी देकर दे लीजिए।

—रोगियों के घर से ले लेता हूं। उसमें दोष नहीं है। वटकृष्ण सामंत मेरा रोगी है। हांफनी का रोग है, उसके यहां से थोड़ा बहुत जब तक ले लेता हूं। पर तुम तो मेरी रोगी नहीं हो बेटी... और यही आशीर्वाद देता हूं कि तुम कभी रोगी न बनो।

—रोग की खातिर ही तो आयी हूं, बाबा।

—क्या रोग है?

—सर्दी हो गयी है शायद। रात को नींद नहीं आयी।

—ठीक कह रही हो?

—ठीक कह रही हूं बाबा। आप साक्षात पितृतुल्य हैं। आपसे झूठ बोलकर नरक में नही सड़ना पड़ेगा?

दुखित स्वर में रामकनाई बोले — नहीं बेटी, ऐसी बात नहीं कहते। मैं तो बड़ा तुच्छ आदमी हूं। अच्छा, मैं दवा देता हूं तुम्हें। अदरक और शहद मिलाकर खाना।

—अच्छा बाबा...

—क्या?

—सब लोग आप जैसे क्यों नहीं होते? लोग इतने दुष्ट बदमाश क्यों होते हैं?

—मैं भी उन्हीं में से हूं। मैं भला सबसे अलग कैसे हो सकता हूं? हां, इस गांव में एक आदमी अच्छा है, दीवान जी का जमाई भवानी बांडूज्जे। कभी झूठ नहीं बोलता, गरीबों का उपकार करता है, लक्ष्मी की गृहस्थी है, भगवान की बातों में दिन बिताता है।

—मैंने देखा है दूर से। पास जाने की हिम्मत नहीं पड़ती... सच कह रही हूं आपसे। हम लोगों का जन्म वृथा गया। आप तो सब जानते ही हैं बाबा।

—उन्हें पुकारो। उनकी कृपा से सब संभव है। तुम तो क्या कितने बड़े-बड़े पापी तर गये।

—बाबा, सच कभी-कभी मन को बड़ा खेद होता है। तबियत होती है, सब कुछ छोड़-छाड़कर निकल जाऊं, पर मां के कारण संभव नहीं होता। मां ने ही मुझे भ्रष्ट किया। मां आज मर जाये तो कहीं चली जाऊं। सच कह रही हूं बाबा....

रामकनाई चुप रहे। कुछ कहने को जी नहीं चाहा।

गया ने पूछा — केले लेंगे?

—दे जाओ। ठहरो बेटी, दवा दे दूं। शहद है? नहीं हो तो दे दूं, मेरे पास है...

गया दवा लेकर प्रणाम करके चली गयी। रास्ते में अचानक प्रसन्न चकत्ति से सामना हो गया। गया के लौटने के रास्ते में वह एक पेड़ के नीचे खड़े थे।

—अरे गया तुम? कहां गयी थी? हाथ में क्या है?

—दवा है काका मोशाय। यहां कैसे खड़े हैं?

—सोच रहा था, तुम इसी रास्ते आओगी।

—आप ऐसा मत किया करिये... चलिये रास्ता छोड़िये...

—क्यों, मुझ पर इतनी गुस्सा क्यों हो? क्या हुआ...

—गुस्सा राजी की बात नहीं है। आप रास्ता छोड़िये... मुझे जाना है...

यह कहकर गया हिनहिनाती हुई बगल से चली गयी। पीछे से आवाज लगाने का साहस नहीं हुआ प्रसन्न चकत्ति को। गया ने एक बार मुड़कर भी नहीं देखा।

नहीं, औरत की मति कब कैसी होगी, कुछ नहीं कहा जा सकता।

पूरे यशोर और नदीया जिले में नील विद्रोह शुरू हो गया था। नया दीवान हरकाली सुर आफिस में खबर लेकर आया।

शिप्टन साहब कोठी के पश्चिम वाले बरांडे में बैठे बंदूक की नली साफ कर रहे थे। हरकाली सुर ने सलाम करके कहा — तेरह गांवों की प्रजा विद्रोह कर रही है साहब। छोटे लाट खुद यह सारी जगहें देखने आ रहे हैं। प्रजा उनसे सारी बातें कहेगी...

सिर हिलाकर शिप्टन ने कहा — हियर मी, डीवान। प्रजा को काबू में करना आता है मुझे। पहले वाले दीवान को जिन लोगों ने मारा था, उनके घर जला दिये हैं...दीज

पिपुल वांट ए रिवोल्ट...डू दे? सारी नीलकोठियों के साहबों की सभा हुई थी, तुम जानते हो?

—जानता हूं हुजूर। उस समय मैं रणविजयपुर की कोठी में...

—ओ... दैट रणविजयपुर? जहां जेफ्रिस साहब का खून हुआ था?

—खून नहीं हुआ था हुजूर। शराब ज्यादा पी लेने से घोड़े से गिरकर बेहोश हो गये थे...

—-वह सब नेटिव अमला लोगों की कारसाजी थी। इट वाज ए प्लाट अगेंस्ट हिज लाइफ.... मुझे सब पता है। कौन मैनेजर था? रॉबिन्सन? ¬

—जी हुजूर।

—अब कान खोलकर सुन लो, आइ वांट ए वेरि इंटेपिड़ डीवान, जैसा राजाराम था। बट....अपना सिर हाथ से दिखाकर बोले — ही वाज नॉट ए ब्रेनी चैप.... समथिंग रांग विथ हिज थिंक बाक्स.... बुद्धि नहीं थी। सावधान रहना नहीं जानता था, इसीलिये मरा। बंदूक देखा?

—हां हुजूर।

—सात नया गन आया है। मेरा नाम शिप्टन है.... आइ विल शूट देम लाइक पिग्स।

—हुजूर।

—हमारा मीटिंग में ठीक हुआ है, हम लोग हटेंगे नहीं। गवर्नमेंट की बात नहीं मानेंगे। जरूरत पड़ी तो खून करेंगे। मेम साहब लोगों को यहां नहीं रखेंगे.... मैं भी मेमसाहब को भेज रहा हूं।

—कब हुजूर?

—मंडे नेक्स्ट, बाइ बोट फ्रोम हियर टु मंगलगंज। तुम नाव तैयार रखना।

—जो आज्ञा हुजूर। सब ठीक रहेगा... साथ में कौन जायेगा हुजूर?

—क्या जरूरत है? आइ डोंट थिंक दैट इज नेसेसरी...

दीवान हरकाली सुर पक्का घाघ था। अंदर की बहुत सी बातें जानता था। पर अभी तक यह नहीं समझ पाया था कि कितना कहना चाहिये, कितना नहीं। सर खुजाकर बोला — हुजूर , आप साथ जाते तो अच्छा था....

भवें सिकोड़कर शिप्टन ने कहा — शी कैन टेक केयर आफ हरसेल्फ... वह अपनी रक्षा करना जानती हैं। मुझको नहीं जाना पड़ेगा... तुम सब ठीक करो।

—हुजूर करीम लठैत को साथ भेजना चाहता हूं...

—व्हाट? इज इट ऐज वर्स एज दैट? कोई दरकार नहीं। तुम जाओ! इतना डरकर नील कोठी नहीं चला सकते। ठीक है।

—जो आज्ञा हुजूर...

—एक बात सुनते जाओ। आर यू श्योर इज ऐज मच ऐज दैट? क्या खबर मिली?

हुजूर अभय दें तो कहूं — षडयंत्र बहुत गहरा है, मेमसाहब के साथ करीम लठैत और एक पायक को अवश्य भेजिये।

साहब ने मुंह से सीटी बजाते हुए कहा — ओ... दिस नेवर इमैजिन्ड पॉसिबिल। इट विल मेक मी फील डिफरेंट... यह विश्वास करना मुश्किल है। अच्छा, तुम जाओ। लीव एव्रीथिंग टु मी... जो करना होगा, किया जायेगा।

हरकाली सुरबोला — एक बात कहूं हुजूर। मैं अपना बंदोबस्त करूं, आपको जो करना हो, आप करिये। सलाम हुजूर....

तीन दिन बाद बड़ा साहब की मेम नीलकोठी से विदा लेकर कूलतला के घाट पर लगे बजरे पर जा चढ़ीं। साथ दस आदमियों के साथ करीम लठैत था, स्वयं हरकाली सुर अलग नाव पर बजरे के पीछे थे।

पुराने कर्मचारियों में प्रसन्न अमीन घाट पर जा पहुंचे और हाथ जोड़कर बोले — मां, मेरी जगद्धात्री मां! आप जा रही हैं, नीलकोठी में अंधेरा हो गया आज। और यह कहकर बुक्का फाड़कर रो पड़े।

मेम साहब बोली — डोंट यू क्राइ माइ गुड मैन... अमीन बाबू, रोओ मत... क्यों रो रहे हो?

—मां, मेरा क्या होगा? मुझे किसके भरोसे छोड़े जा रही हो? किसको अपना दुखड़ा सुनाऊंगा, मां मेरी...

चतुर हरकाली सुर ने मुंह फिराकर बड़ी मुश्किल से अपनी हंसी रोकी।

मेम साहब ने अपने गले से सोने की पतली चेन निकालकर अमीन की ओर फेंक दी। रोना भूलकर प्रसन्न ने जल्दी से दौड़कर दोनों हाथों से चेन लपक ली।

सब अवाक रह गये। हरकाली सुर भी स्तम्भित हो गये और करीम लठैत का मुंह खुला का खुला रह गया।

बजरा घाट छोड़कर चला गया।

प्रसन्न अमीन बहुत देर तक खड़े-खड़े जाते बजरे की ओर देखते रहे, फिर चार की खूंट से आंखे पोंछकर घाट से ऊपर चढ़कर अपने रास्ते चल दिये।

बड़े साहब की मेम के चले जाने के साथ-साथ नील कोठी की लक्ष्मी विदा हो गयी।

गया मेम हंसते हुए बोली — क्यों काका मोशाय? आधा हिस्सा देना पड़ेगा...

दोपहर का वक्त था। दोनों सड़क किनारे वटवृक्ष के नीचे मिल गये थे। मिलना आकस्मिक नहीं था, प्रसन्न चकत्ति बहुत देर से वहां खड़े गया का इंतजार कर रहे थे। हंसकर बोले — ले लेना, तुम्हारी वजह से ही तो मिला है।

—क्यों, कहा था न?

—तुम ले लो यह तुम्हें ही देने की...

—पागल! मुझे इतना बेवकूफ समझा है? साहबों की चीज मैं पहनूंगी तो सब क्या कहेंगे? मैं क्या कभी छूती हूं वह सब?

—तुम बहुत अच्छी लगती हो गया।

—अच्छी बात है।

—तुम्हें देखकर इतनी खुशी मिलती है कि...

—तो आप यही बात बातें कहने के लिये यहां खड़े थे?

—वह... वह...

—अच्छा अब चलती हूं। एक बात और सुनिये — अब आप दूसरी जगह नौकरी देखिये...

—वह सब समझता हूं मैं। इन लोगों का प्रताप कम हो रहा है यह न देख पाऊं, इतना बेवकूफ नहीं हूं मैं। बस तुम्हें छोड़कर कहीं जाने को मन नहीं मानता...

—फिर वही सब बातें।

—चलती क्यों नहीं मेरे साथ?

—कहां?

—चलो, जहां दोनों आंखें ले जायें...

खिलखिला पड़ी गया। फिर बोली — तो फिर इस बार सोलह कलायें पूर्ण हो जायेंगी।

प्रसन्न उसका मतलब न समझकर चुप रहे। गया मुस्कुराकर बोली — क्यों, चुप क्यों हो गये? ओ काका मोशाय?

—क्या कहूं? तुमसे बात करने का साहस नहीं होता।

—बहुत साहस दिखा लिया, और दिखाने की जरूरत नहीं है। अच्छा एक बात बताइये, मां को छोड़कर कहां जाऊंगी? इतने दिन जिनका नमक खाया, उनको छोड़कर कहां जाऊंगी? आप चले जाइये... आजकल खाना कहां खा रहे हैं? कौन बनाकर दे रहा है?

जवाब नहीं दे पाये प्रसन्न। बस हतचकित से गया के मुंह की ओर देखते रहे। कैसी बातें थीं ये सब? किसी ने ऐसी बातें कहीं थी क्या? फिर रंगों में आनन्दानुभूति की सिहरन दौड़ गयी। कैसी अपूर्व अनुभूति थी। आंखें भीग आयीं। अन्यमनस्क भाव से कहा — भात? भात रांधना... ओ... समझ लो खुद ही बनाता हूं आजकल।

—एक बार देखने की इच्छा होती है कि कैसे पकाते हैं?

—खाओगी?

—वह आपकी दया है। क्या बनायेंगे?

—बैंगन वाला भात और मूंग की दाल। अगर मिल गयी तो हिलसा मछली तल लूंगा...

—आपने सचमुच अभी तक नहीं खाया?

—नहीं। तुम्हारी प्रतीक्षा में कबसे खड़ा हूं।

—गया गुस्से में बोली — हाय राम! यह कैसी बातें करने लगे फिर? मैं क्या आपके चरणों में सिर पटकूंगी? अभी चले जाइये घर। अब एक नहीं सुनूंगी। जाइये...

—जा रहा हूं... पर।

—नहीं, अब पर वर कुछ नहीं। जाइये...

गया को जाने को उद्यत देख प्रसन्न उसके जहां तक बन पड़ा निकट जाकर बोले — तुम गुस्सा तो नहीं हुईं गया? बोलो गया...

—नहीं, गुस्सा नहीं हुई, जी जुड़ा गया... ऐसा पागलपन क्यों करते हैं आप? जाइये अब...

—गुस्सा मत करो गया, तुम गुस्सा हो गयी तो मैं ज़िंदा नहीं रह पाऊंगा। उनके स्वर में विनती थी।

भवानी जैसे ही शाम को घूमने जाने को तैयार हुए, मुन्ने ने रोना शुरू कर दिया — बाबा, जाऊंगा...

तिलु ने धमकाया — नहीं, रहो मेरे पास।

मुन्ने ने दोनों हाथ बढ़ाये — बाबा, जाऊंगा...

भवानी ने छाता दिखाकर कहा — किसका छाता? मेरा छाता। चलो, फिर बारिश होगी...

मुन्ना बोला — बारिश होगी।

भवानी की गोद में पहुंचते ही मुन्ने को जैसे आकाश का चांद मिल गया। भवानी ने पूछा — कहां जा रहा है मुन्ना?

—मुकि लेने।

—मुड़कि खायेगा?

—हूं।

—चल बाजार से लेंगे।

बरसात के पानी से इछामती का पानी उफना पड़ रहा था। मुन्ने को लेकर भवानी एक नाव पर बैठ गये। दोनों किनारों पर घनी हरीतिमा थी। बबूल के पीले फूल खिले हुए थे। वृक्षों पर लटकती हुई लताएं पानी को छू रही थीं।

भवानी देख-देख कर मुग्ध हो रहे थे और सोच रहे थे, किस महाशिल्पी का यह अपरूप शिल्प था। यह शिशु भी उस शिल्प के अंतर्गत था। उनसे बाहर क्या है? जय हो उनकी।

मुन्ने ने हाथ बढ़ाकर कहा — कितना पानी! कितना पानी!

भवानी ने पूछा — मुन्ना, नदी अच्छी है?

मुन्ने ने सिर हिलाकर कहा — अच्छी है।

—घर जायेगा?

—हूं।

—तू तो कह रहा था, नदी अच्छी है?

—मां के पास जाऊंगा...

अंधेरे में जंगल से होकर लौटते मुन्ने को डर लगता था। दो साल का बच्चा, सब कुछ तो समझ नहीं पाता था। पिता से चिपटकर बोला — बाबा, डर लगता है। वो क्या है?

—कहां, कुछ भी तो नहीं है।

मुन्ना कसकर पिता का गला अपने छोटे-छोटे हाथों से पकड़े रहा। उसका डर दूर करने के लिये भवानी ने कहा — मुन्ना देख, वह क्या चमक रहा है?

मुन्ने ने शायद डर से आंखें बंद कर रखी थीं। पिता के पूछने पर आंख खोलकर सामने देखते हुए बोला — जुगनू।

—मां को जाकर बताना।

—हूं।

—कौन-सी मां को बतायेगा?

—तिलु को।

—क्यों निलु को नहीं?

—हूं।

—एक और मां का क्या नाम है?

—तिलु।

—और?

—निलु।

—दुर पगले, तिलु मां और निलु मा और तीसरी मां कौन है?

—बिलु।

—ठीक।

अभी भी सामने बांस का घना जंगल था। घना अंधेरा था, रह-रहकर जुगनू चमक उठते थे। अचानक चर्र की आवाज हुई, शायद कोई सूखी डाल टूटकर गिरी थी कहीं। दूर झींगुर बोल रहे थे।

मुन्ना फिर चुप हो गया था।

तभी दूर कहीं शंख बजा। मुन्ना एकदम से बोल पड़ा — दुग्गा दुग्गा... नम नम।

तीनों मां की देखादेखी वह भी सीख गया था। आंख खोलकर चारों तरफ एक नजर दौड़ायी, उसने और फिर तत्क्षण बंद कर ली। भयजनित स्वर में बोला — ओ भवानी...

—क्या है बेटा?

—मां के पास जाऊंगा, डर लगता है।

—मां के पास ही तो जा रहे हैं।

—भवानी...

—क्या है?

—डर।

—किसका डर? कोई डर नहीं है।

तभी फिर कहीं शंख बज उठा। मुन्ना ने अभ्यास के अनुसार जल्दी से दोनों हाथ जोड़कर माथे लगाते हुए पुनः दुग्गा दुग्गा, नम नम कहा।

भवानी हंसकर बोले — देखो, अब दुर्गा के नाम से डर चला जायेगा।

सचमुच उसका डर चला गया। जंगल खत्म होकर मुहल्ला शुरू हो गया था। घर-घर में प्रदीप जल रहे थे। कुंडली बनाता धूआं ऊपर उठ रहा था।

भवानी बोले — देखो घर आ गया...

भवानी ने चौखट पर पैर रखा ही था कि टपाटप बूंदें पड़ने लगीं। ठंडी हवा चलनी शुरू हो गयी। तिलु ने जल्दी आकर मुन्ने को गोद में ले लिया में ले लिया और लगी भवानी पर बरसने — आपको कभी अकल भी आयेगी? सही सांझ बच्चे को लेकर जंगल से होकर आ रहे हैं? उस पर आज शनिवार है, कुछ हो गया तो?

आज बिलु की बारी थी। रात काफी हो गयी थी। तिलु पान देने आयी भवानी को तो बोली — ठंडी हवा चल रही है, सिरहाने की खिड़की बंद कर जाऊं?

—क्यों, तुम नहीं आओगी आज?

—नहीं, आज बिलु रहेगी।

—और मुन्ना?

—मेरे पास रहेगा।

भवानी का मन खराब हो गया। तिलु वाले दिन मुन्ना वहीं रहता था। अब उसके बिना उन्हें एक पल भी कल नहीं पड़ता था।

बिलु पान से ओठ रंग आकर बिस्तर के किनारे बैठ गयी। हाथ में पान का डिब्बा था।

भवानी बोले — आओ बिलुमणि, आओ।

बिलु के चेहरे पर उदासी का भाव था। बोली — आप तो मुझे चाहते नहीं हैं।

—नहीं चाहता?

—हां, मुझे पता है कि आप मुझे नहीं चाहते। आप अभी भी दीदी के बारे में सोच रहे थे।

—गलत। मुन्ने के बारे में सोच रहा था।

—ले आऊं उसे?

—नहीं। रात को तुम्हारे पास कैसे रहेगा?

—रुकिये, अभी आयी। बिल्कुल रहेगा। यह कहकर वह पलक झपकते कमरे से बाहर हो गयी और कुछ क्षण ही सोये मुन्ने को गोद में उठाये आ पहुंची।

हंसकर बोली — दीदी सो गयी थी, चुपके से उठा लायी...

—सच?

—जाकर देख लीजिये। घोड़े बेचकर सो रही है।

—कमरा बंद नहीं किया?

—निलु आयेगी, इसलिए भेड़ रखा था। निलु अभी रसोई का काम निपटा रही है। बड़ियों की दाल पीसने की वजह से दीदी बहुत थक गयी होगी, इसीलिये जल्दी सो गयी। बहुत काम करती है।

—क्यों काम करने देती हो उसे? वह लड़के की मां है। तुम लोगों को काम करना चाहिये ना।

आपको क्या पता कि हम उसे करने देते हैं या नहीं। पर आपके मन का सारा दर्द तो बस दीदी के लिये है। हम तो बस ऐसे ही आलतू-फालतू हैं, बाढ़ में बहकर आ गये हैं। लीजिये, पान खाइयेगा?

—मुन्ने को अच्छी तरह उढ़ा दो। आज बहुत ठंड है। पान किसने बनाये?

—निलु ने। पता है निलु की आज रात आपके साथ रहने की बड़ी इच्छा थी।

—तो तुमने रहने क्यों नहीं दिया?

—मैंने कहा न, आपको तो हर बात में बस मेरी गल्ती नजर आती है। दीदी और निलु की सारी बातें अच्छी हैं। इससे तो अच्छा था भगवान मुझे उठा लेते।

भवानी जानते थे कि आजकल बिलु जब-तब इस तरह अभिमान प्रकट करती रहती थी। पर उसने मन में यह क्षोभ क्यों था, समझ नहीं पाते थे। शायद वह मन से सुखी नहीं थी। यद्यपि वह अत्यंत ही शांत व दबे स्वभाव की थी, पर तब भी कभी-कभी मन का दुख प्रकट हो जाता था। क्यों होता था ऐसा? उन्होंने तो कभी जान बूझकर उसका अनादर नहीं किया। पर औरत की सूक्ष्म व सतर्क दृष्टि से कुछ भी छुपा नहीं रहता। वह शायद समझ गयी थी कि वह हमेशा तिलु के ही संसर्ग की कामना करते थे।

भवानी का मन दुखी हो गया। सोचने लगे, तीनों बहनों से एक साथ ब्याह करके बड़ी भूल की उन्होंने। उस समय इसके प्रतिफल को समझ नहीं पाये — एक संन्यासी परिव्राजक की इसकी अभिज्ञता होती भी कैसे! उस वक्त तो कुलीन कुमारियों का उद्धार करने की झक सवार हो गयी थी। परंतु यह तो सोचा ही नहीं कि तीनों को खुश भी कर पायेंगे?

ठंडे दिमाग से सोचा तो पाया कि वास्तव में वह हमेशा बिलु का अनादर करते आये थे। हालांकि अज्ञानता वश ही किया होगा, पर जैसे भी हो बिलु समझ गयी थी।

उन्होंने देखा बिलु दीवार की तरफ मुंह किये निःशब्द रो रही थी। उसका हाथ

पकड़कर दूसरे हाथ से मुंह अपनी ओर फिराकर बोले — छिः बिलु, यह क्या? पागलों की तरह रो क्यों रही हो?

बिलु की अब तो हिचकियां बंध गयीं। सुबकते हुए बोली — मैं सच कह रही हूं कि कभी-कभी मन में आता है कि मैं मर जाऊं तो अच्छा है। आप दीदी और निलू के साथ सुख से रहियेगी। मैं ही रास्ते का रोड़ा हूं।

—ऐसी बात नहीं कहते बिलु। बताओ मैंने कब तुम्हारा अनादर किया है?

—यह बात जाने दीजिये, मैं आपको तो कुछ नहीं कह रही। मेरी तकदीर ही खोटी है। किसी का दोष नहीं है... जरा खिसकिये, मुन्ने की गर्दन सीधी कर दूं।

भवानी ने उसका हाथ पकड़कर कहा — शायद मुझसे ही गलती हो गयी बिलु! उस समय समझ नहीं पाया...

बिलु सचमुच उतना-सा प्यार पाकर जैसे सारा दुख भूल गयी। बोली — नहीं, ऐसा मत कहिये।

—नहीं, सच कह रहा हूं।

—चलिये, छोड़िये यह सब। एक पान खा लीजिए। मेरी बात का ख्याल मत करिये, मैं तो पागल हूं।

भवानी को सचमुच पड़ा पछतावा हो रहा था। विवाह के समय उसे कितना खुश देखा था, उसकी आंखों में आशाओं के कितने फूल खिलते देखे थे। क्यों उसका जीवन नष्ट किया उन्होंने?

लेकिन जान बूझकर कुछ नहीं किया। क्या जाने क्यों ऐसा हुआ।

उस रात बिलु से बड़ी मीठी-मीठी बातें की उन्होंने, भविष्य के बड़ी खूबसूरत सपने दिखाये। कहने लगे, जो कुछ वह नहीं कर पाये, मुन्ना करेगा। वह अपनी तीनों माताओं का समान दृष्टि के देखता था।

बादलों से झांकते चांद का प्रकाश बिस्तर पर पड़ रहा था। रात बहुत हो गयी थी। ऊपर के पेड़ पर कोई रात को जागने वाला पक्षी बोल रहा था।

सहसा बिलु बोली — अच्छा, अगर मैं मर जाऊं तो तुम रोओगे नागर?

—फिर वही बात?

हंसकर बिलु मुन्ने के पास आयी और नींद में हंसते देखकर बोली — देखिये, देखिये कैसा हंस रहा है, बेमाता आयी है।

उस बार पूजा के बाद बरसात के अंत में इछामती के दोनों किनारों पर कांस के फूल खिले हुए थे, गंगा का पानी मैदान छूने लगा था, प्रातः सूर्य के प्रकाश में सारी प्रकृति नहा उठी थी।

काली पूजा के पहले दिन बच्चे नदी किनारे चौदह साग तोड़ने गये थे। एक छोटी लड़की भवानी के लड़के टुलु के पास आकर बोली — तुझसे साग तोड़ा नहीं जा रहा, ला मैं तोड़ दूं...

टुलु बोला — नहीं, मैं तोड़ूंगा। दिखाओ कहां है...

—वह देख कितने साग हैं, गेंदे का, मटर का, लाल आलू का, चैने का पालक का, पुनर्नवा। तू तो लड़का है, साग कैसे पहचानेगा?

मुझे भी पहचान करा दो न। ओ सये दीदी...

एक अपेक्षाकृत बड़ी लड़की उसके पास आकर बोली — क्यों तंग कर रही है उसे वीणा? वह तो अभी बच्चा है, साग कैसे पहचानेगा? आ टुलु, मेरे साथ आ...

फणी चकत्ति की नातनी अन्नदा बोली — इस पार इतने लोग क्यों जमा हैं री? और वह भी सुबह-सुबह?

सबने नजरें उठायीं तो सचमुच नदी पार बड़ी भीड़ दिखायी दी, किसी-किसी के हाथ में कपड़े का झंडा था। देखते-देखते भीड़ बढ़ने लगी। सारे बच्चों में अन्नदा ही बड़ी थी, उसने आगे बढ़कर पूछा — ओ कापली काका, आज क्या है यहां?

सारी भीड़ विभिन्न गांवों के किसानों की थी। एक बोला — आज छोटे लाट कल की नाव से आ रहे हैं। नील कोठी वाले अत्याचार कर रहे हैं, सारी प्रजा पागल हो गयी है, यशोर नदीया का कोई किसान नील नहीं बोयेगा, इसलिये हम लोग छोटे लाट से अपनी बात कहने आये हैं...

टुलु सुनकर अवाक नदी की तरफ देखने लगा। फिर कुछ सोचकर अन्नदा से पूछा उसने — नील क्या होता है दीदी?

—नील एक तरह का पौधा होता है। नील कोठी के साहब को टमटम हांकते हुए जाते नहीं देखा?

—चौदह साग नहीं तोड़ेगा?

पर टुलु का ही नहीं, सारे बच्चों का साग तोड़ना धरा का धरा रह गया। नदी के दोनों किनारों पर कुछ ही देर में बस सिर ही सिर दिखायी देने लगे। भवानी भी आ पहुंचे। इधर-उधर नजर दौड़ाकर उन्होंने आवाज लगायी — मुन्ना... ओ... मुन्ना...

टुलु लपक कर पिता के पास आ पहुंचा और बोला — मैं यह रहा बाबा...

—साग तोड़ लिये?

—ऊं हूं। कौन आ रहा है बाबा?

—छोटे लाट सर विलियम ग्रे?

—क्या नाम है? सर विलियम ग्रे?

—अरे वाह। बिल्कुल ठीक।

—मैं अभी घर नहीं जाऊंगा। छोटे लाट को देखूंगा।

—अच्छी बात है। पर घर से मूड़ी खिला लाऊं।

—नहीं। पहले देखूंगा।

—सूरज धीरे-धीरे सिर पर आ गया। टुलु को भूख लगी थी, पर भीड़ देख कर वह भूख गर्मी सब भूल गया। बोला — बाबा, कल की नाव कैसी होती है?

—उसे स्टीमर कहते हैं। उसमें से धुआं निकलता है। अभी देखना।

—धुआं क्यों निकलता है बाबा?

—आग जलाते हैं न इसलिये।

तभी दूर जनता का शोर सुनायी दिया। टुलु बोला — मुझे गोद में ले लो।

भवानी ने उसे कंधे पर बिठाकर पूछा — दिखायी दे रहा है?

नजरों को दूर टिकाये हुए, गर्दन को जरा सा हिलाकर मुन्ने ने हूं कहा।

—क्या दीख रहा है?

—बाबा धुआं दिखायी दे रहा है।

—नाव दिखी?

—नहीं बाबा, बस धुआं है बहुत सारा।

कुछ ही पल बाद टुलु को स्तंभित करता, ढेर सा धुआं उगलता स्टीमर उसके एकदम सामने आ पहुंचा। जनता ने चिल्लाना शुरू किया — हम नील नहीं बोयेंगे लाट साहब, दुहाई है महारानी की। स्टीमर पर लकड़ी की कुर्सियों पर बहुत से साहब बैठे थे। सब वैसे ही थे जैसा साहब एक दिन उसने दिन किनारे पक्षी मारते देखा था। पर उनमें से वह एक साहब क्या कर रहा है?

—बाबा...

—चुप कर।

—बाबा...

—उफ! क्या है?

—सबको नमस्कार कर रहा है।

—वह कौन है बाबा?

—वही छोटे लाट हैं। क्या नाम बताया था?

—याद नहीं है बाबा।

—याद क्यों नहीं रहता गलत बात है, याद रहना चाहिए। सर... जरा सोचकर टुलु ने कहा — विलियम ग्रे...

—हां... चलो अब चल चलें...

—थोड़ी देर और देखने दो बाबा...

—अब क्या देखेगा? सब तो चले गये।

—कहां गये बाबा?

—इछामती पार करके चूणा और वहां से गंगा जाकर कलकत्ता चले जायेंगे।

टुलु पिता के कंधे से उतरकर पैदल चलने लगा। आगे पीछे लोगों की भीड़ बोलते बतियाते जा रही थी। टुलु स्टीमर देखकर हक्का-बक्का हो जाने से एकदम चुप हो गया था। घर पहुंचने पर तिलु ने पूछा — क्या देखा मुन्ना?

दोनों हाथ हिला-हिलाकर उस आश्चर्यजनक स्टीमर का आकार, धुएं का बादल, लोगों की भीड़ मां को समझाने की कोशिश की उसने।

निलु बोली — चल, हो गया बहुत, पहले खा ले।

बिलु नहीं रही थी। मात्र तीन दिन के ज्वर के पश्चात् विगत आषाढ़ की मेघाच्छादित, वृष्टि-धारा मुखर रात को पति की गोद में सिर रखे परलोक सिधार गयी थी।

मृत्यु से पहले गंभीर रात्रि में होश आने पर पति के चेहरे पर नजरें टिकाकर बोली थी — तुम कौन हो जी?

सिर पर पंखा झलते हुए भवानी ने कहा था — मैं हूं। बात मत करो। चुपचाप लेटी रहो, बिलु।

आंखों से आंसू बहने लगे थे उसकी। जरा रुककर फिर बोली थी— मुझसे नाराज तो नहीं हो? जाने क्या-क्या उल्टी सीधी कह देती हूं तुमसे नागर...

—अच्छा, अब पागलपन मत करो। चुप होकर सो जाओ।

—मुन्ने को मेरे पास लिटा दो। लिटा दो ना जी?

—लाता हूं। अभी तक उसे लिये तिलु यहीं तो बैठी थी। खाना खिलाने गयी है।

जरा देर बाद भवानी को लगा कि बिलु के सिर में पसीना बहुत आ रहा था। तो क्या बुखार उतर रहा था? सोचा, तिलु खाकर आ जाये तो रामकनाई के पास जायेंगे। पर कुछ क्षण बाद ही एकदम से आंखें खोलकर बिलु बोली — अजी पास आओ न — आपको तुम कह रही हूं, पाप लगेगा? पर लगने दो, फिर तो कहने का मौका नहीं मिलेगा? तुम फिर मेरे होंगे, अगले जनम में? होना, जरूर होना... दीदी ने मुन्ने को दूध नहीं पिलाया, बुलाओ।

—क्या अंट-संट बक रही हो? चुपचाप लेटे रहने को कहा ना?

—मुन्ना कहां है? मुन्ना?

और बस इसके बाद फिर नहीं बोली थी वह। तिलु ने मुन्ने को लाकर बगल में लिटाया पर उसने देखा तक नहीं। भवानी रामकनाई को बुलाकर लाये। उन्होने देखते ही कहा— यह तो कब की चली गयी, मुन्ने को उठा लो बेटी।

नील विद्रोह तीनों जिलों में समान रूप से चल रहा था। सर विलियन ग्रे ने सारा निरीक्षण करने के उपरांत जो रिपोर्ट भेजी, वह नीलकरों के पूरे इतिहास में एक विख्यात दलील थी। इस रिपोर्ट के दो सालों के अंदर ही तीनों जिलों की अनेको नील कोठियां समाप्त हो गयीं। अधिकतर साहब कोठियां बेचकर या इजारे पर देशी लोगों को देकर समुंदर पार चले गये। मात्र दो चार कोठियों का कार्य पूर्ववत चलता रहा, पर वह प्रताप, वह दबदबा नहीं रहा था।

उन्हीं दो-चार में शिप्टन साहब भी एक थे। डेविड साहब बीबी बच्चों को लेकर चले

गये थे, पर शिप्टन साहब हार मानने वाले आदमी नहीं थे, हरकाली सुर की सहायता से पहले की तरह ही कोठी चला रहे थे।

यद्यपि विष के दांत टूट गये थे, पर अभी भी बहुत से लोग उनसे पूर्ववत ही डरते थे। नील विद्रोह खत्म हो जाने से साहबों के लिये लोगों के मन में भयभक्ति पुनः लौट आयी थी। हरकाली सुर भी मूछों पर ताव दिये घूमता था। एक दिन शिप्टन ने उसे बुला कर पूछा — डीवान इस बार दुर्गा पूजा कब होगा?

—अगहन के महीने में, हुजूर।

—इस बार कोठी में पूजा करो...

—यह तो बहुत अच्छी बात है, हुजूर। मैं सारा इंतजाम कर दूंगा।

—जो भी खर्च होगा, मैं करूंगा। कवि का गाना भी करना।

—जी, अगर हुकुम करें तो गोविन्द अधिकारी की यात्रा के दल को बयाना दे आऊं?

—वह क्या है?

—यात्रा हुजूर। सजकर, जैसे राम, सीता, रावण...

—कहां होगी?

—हॉल में हो सकती है?

—नहीं हुजूर, बड़े मैदान में शामियाना लगाना पड़ेगा। गोविंद अधिकारी के दल में बहुत सारे लोग हैं।

—तुम ले आओगे?

—जरूर ले आऊंगा, हुजूर।

बड़ा भारी आयोजन हुआ इस बार पूजा पर। नील कोठी में दुर्गा की विशाल प्रतिमा की स्थापना हुई। मनसा पोता के विश्वम्भर ढोलि ने आकर तीन दिन तक ढोल बजाया। गोविंद अधिकारी की यात्रा देखने आस-पास के गांवों के लोग उमड़ पड़े।

तिलु ने पति से कहा — सुनिये, निलु यात्रा देखने के लिये कोठी जाने को कह रही है।

—वह क्या अच्छा लगेगा? क्या पता औरतों के बैठने का इंतजाम है कि नहीं? गांव की कोई औरत भी जायेगी क्या?

—निस्तारिणी जाने को कह रही थी। नालू की बहू तुलसी भी बच्चों को लेकर जायेगी।

—वह लोग बड़े आदमी हैं, उनकी बात छोड़ो। कैसे जायेंगे वह लोग?

—पालकी में। उसकी पालकी बहुत बड़ी है, निलु उसमें जा सकती है।

—बैलगाड़ी ठीक कर दूंगा। तुम भी चली जाना।

—मैं नहीं जाऊंगी।

—नहीं क्यों? जब सब जायेंगी तो तुम भी जाना।

—परंतु अंत में तत्कालीन समाजपति चंद्र चादुज्जे के पुत्र कैलाश चादुज्जे ने गांव की किसी औरत को जाने की अनुमति नहीं दी। मुन्ना पिता के साथ गया और इतनी बड़ी प्रतिमा एवं यात्रा देखकर बहुत खुश हुआ।

हेमंत के प्रारम्भ में एक दिन शाम को शिप्टन साहब ने हरकाली सुर को बुलाकर कहा — डीवान, बड़ी गड़बड़ हो गयी।

—क्या हुआ साहब?

—अब नीलकोठी ठप्प हो जायेगी।

—क्यों हुजूर? फिर कोई दंगा-फसाद?

—नहीं, वैसी कोई बात नहीं है। यह दूसरी ही बात है। एक देश है जर्मनी, तुम जानते हो? वहां से नीला रंग आया है इंडिया में और दूसरे देशों में भी बिक्री हुआ है।

—उस देश में क्या नील की ख़ेती होती है हुजूर?

—नहीं, तुम समझे नहीं। केमिकल नील बन रहा है.... असली नहीं, नकली नील। पेड़ पर नहीं होता... दूसरी तरह होता है.... बाइ सिंथेटिक प्रोसेस... तुम्हारी समझ में नहीं आयेगा।

—अच्छा नील है?

—बहुत बढ़िया। मैंने वही दिखाने के लिये तुम्हें बुलाया है। यह देखो....

कहकर शिप्टन ने हरकाली सुर के सामने एक नीले रंग की टिकिया रख दी। अभिज्ञ हरकाली ने घुमा-फिराकर उसे परखा और अवाक से रह गये।

—देखा?

—हां साहब।

—इसके रंग से काम चल गया तो हमारा नील क्यों खरीदेंगे?

—इसके क्या दाम हैं?

हंसकर शिप्टन ने कहा — यह बात पहले क्यों नहीं पूछी? मैं सोच रहा था कि डीवान का क्या डिमाग खराब हो गया? कितना हो सकता है?

—चार रुपये पाउंड।

—एक रुपया पाउंड, ज्यादा से ज्यादा डेढ़ रुपया पाउंड। होलसेल हंड्रेड-वेट नाइन्टी रुपीज — नब्बे रुपये। हमारा व्यापार तो मिट्टी हो गया, गॉन वेस्ट।

हरकाली सुर की सारी जिंदगी इसी काम में निकली थी। समझ-बूझकर चुप हो गया। क्या कहता? भविष्य का चित्र आंखों के सामने स्पष्ट हो गया था।

खेती का नील अब बाजार में नहीं चलेगा और पूरा न पड़ने के कारण नील की खेती बंद हो जायेगी और साहब को बोरिया-बिस्तर समेटना पड़ेगा।

उस दिन शाम को शिप्टन ने जो भविष्यवाणी की थी, अक्षरशः सत्य हुई।

रामगोपाल घोष की धुआंधार वक्तृता, हरीश मुखुज्जे का हिंदू पैट्रियट अखबार, पादरी लांग का आंदोलन (दीन-बंधु का "नीलदर्पण" इसके बाद की बात है), नदीया यशोर की प्रजा का विद्रोह, सर विलियन ग्रे की गुप्त रिपोर्ट जो काम नहीं कर पायी, वह जर्मनी से आयी नील की टिकिया ने बहुत थोड़े समय में कर दिखाया। देखते-देखते बंगाल में नील की खेती का नामोनिशान खतम हो गया।

शिप्टन साहब की मेम विलायत जाने के बाद मर गयी थी। केवल एक लड़की थी, वह वहीं अपने नाना-नानी के पास रहती थी। शिप्टन साहब यह देश छोड़कर जाने को तैयार नहीं हुए।

एक दिन कोठी के बड़े बरांडे के बगल वाले छोटे कमरे में लेटे-लेटे बाहर इंडियन कार्क के श्वेत पुष्पों की ओर देखते हुए वह पुराने दिनों की बातें सोच रहे थे। अपने बचपन की बातें।

बहुत दूर वेस्ट सोर-लैण्ड का छोटा सा गांव। आज वहां कोई नहीं था। वृद्धा माता थी जो कुछ साल पहले मर गयी थी। एक भाई आस्ट्रेलिया में सपरिवार रहता था।

उनके गांव का वह छोटा सा होटल, पहले एक सराय था। विलियम रिट्सन लैंड लार्ड थे उन दिनों। लैंगड्डेल पाइक्स और ग्रेट गेबन पंद्रह सौ फुट ऊंचे पहाड़ा उसके एकदम सामने थे। उन पहाड़ों पर चढ़ने के लिये आने वाले लोगों की भीड़ लगी रहती थी हमेशा उस सराय में।

बोरोडेल गांव की बगल से जाता हुआ रास्ता जाकर एक विस्तृत मैदान में खत्म होता था। बचपन में कितनी बार एक बड़े कुत्ते को साथ लेकर वह अकेले घूमने गये थे उस रास्ते पर। एक बड़े जलाशय में मछलियां पकड़ने भी कितनी ही बार गये थे। एल्टर वाटर नाम था उसका। अब तो लगता है जैसे युगों पुराना नाम हो। कितना मजा आता था बड़ी-बड़ी मछलियां पकड़ने में। राइनोज पास जब अंधकाराच्छन्न हो जाता था तो मछलियां हाथों में झुलाते हुए लौटते थे, पीछे-पीछे अच्छी ब्रीड का ग्रेट डेन कुत्ता पूंछ हिलाता हुआ आता था। याद आता है — द ईगल्स इज स्क्रीमिंग अराउंड अस, द रिवर्स अ-मोनिंग बिलो..

ग्राम्य छंद था। बचपन में गाया करता था ऐंडी। एल्टर वाटर के किनारे बंसी पानी में डाले बैठे वह भी गाते थे कई मर्तबा।

पुराने दिनों की यादें....

—गया, गया?

गया ने आकर पूछा— क्या है साहब?

—पास बैठी रहो डियर...व्हाट हैव यू बीन अप टु आल डे? कहां थी? क्या कर रही थी?

—बैठी थी। करने को है ही क्या?

—इफ आइ डाई हियर... अगर मर जाऊं तो टुम क्या करोगी?

—ऐसी बातें क्यों कह रहे हो साहब? ऐसा नहीं कहते, छिः।

—मैं तुमको कुछ रुपये देना चाहता हूं, पर टुम रखोगी कहां? चोरी चले जायेंगे या डाकू ले जायेंगे।

फिर जोर से ही-ही करके हंस पड़े और बोले — एक गाना सुनो गया... लिसेन केयरफुलि टु द बर्ड। माडर्न, यू नो?

गया बोली — उफ, क्या गाते हो? यह कटरमटर अच्छी नहीं लगती मुझे।

—वेल, सुनो....

"येस, येस द आर्मी
हाउ वी लव द आर्मी
व्हेन द स्वैलोज कम अगेन
सी देम फ्लाइ-द आर्मी"

दोनों कानों में उंगली डालकर गया बोली — ओह! बाप रे, कान फूट गये, इतना चिल्ला रहे हो। यह भी कोई सुर है।

—क्यों, अच्छा नहीं लगा? अच्छा तुम गाओ... वही....टोमार बडन चांदे...

—नहीं साहब। अभी नहीं।

—गया।

—क्या है?

—मेरे मरने के बाद तुम क्या करोगी?

—ऐसी बातें नहीं करते साहब।

—नो, आइ ऐम नो मिल्कसॉप, आइ टेल यू... मैं काम समझता हूं। नील का काम खतम हो गया, पर मैं जाऊंगा नहीं, यहीं रहूंगा। टुम मेरे पास रहोगी?

—रहूंगी साहब।

—छोड़कर चली तो नहीं जाओगी?

—नहीं, साहब।

—सच? मे आइ टेक दिस ऐज ए प्लेज? मन से कह रही हो?

—सच कह रही हूं साहब। सदा से तुम्हारे पास हूं, बहुत खाया पहना है, अब बुरे वक्त में तुम्हें छोड़कर कहां जाऊंगी साहब? गयी तो धर्म भ्रष्ट होगा साहब।

गया को आलिंगन में आबद्ध करके शिप्टन ने कहा-- ओह, माइ डियर, डियर... यू आर नॉट अफ्रेड आफ दा बिग बैड बुल्फ... आइ कॉल इट ए ब्रेव गर्ल!

निस्तारिणी इछामती में नहाने उतरी थी। दोनों किनारों से उफनती भरे भादों की नदी, झाड़ियों में तित्पल्ला के बड़े-बड़े फूल खिले हुए थे। दूसरे किनारे की उच्चभूमि पर सुनहरी धूप में कांस के फूल हवा से डोल रहे थे। लहरें छपात्छपात् करती जल में आधे डूबे वृक्षों से टकराकर लौट रही थीं।

कहीं किसी को न देखकर निस्तारिणी की घड़ा वक्ष से लगाकर तैरने की बड़ी तीव्र इच्छा होने लगी। भाद्र की तेज बहाव वाली नदी थी, कछुओं व मगरमच्छों के भय से कोई गहरे पानी में नहीं उतरता था। परंतु निस्तारिणी ने इन सब बातों की जरा भी परवाह नहीं की। घड़ा वक्ष के नीचे रखकर तैरने में क्या मजा है, यह वह क्या जाने जो कभी तैरे ही नहीं, वह भला उन्हें इसका सुख समझा भी कैसे सकती थी। नदी के स्रोत के साथ बहने में कितना अपूर्व आनंद मिलता है! मुक्ति का आनंद। ले जायेगा घड़ियाल, तो ले जाये। उसमें तो और विस्तृत मुक्ति का आनंद मिलेगा।

बहुत दूर पहुंच गयी निस्तारिणी, गांव के घाट बहुत पीछे छूट गये थे। सामने ही पांचपोता गांव के बाद भासानपोता गांव के ग्वालपाड़ा का घाट दिखायी दे रहा था। दाहिनी तरफ जंगल का और बांयी तरफ आरामडांगा के किसानों के तोरई परवल के खेत थे। भूल हो गयी उससे, अकेले इतनी दूर आकर ठीक नहीं किया उसने। सब लोग क्या कहेंगे। अब उल्टे स्रोत को ठेलकर तैरना न तो संगत था और न उचित। दक्षिणी किनारे के जंगल में उतरना युक्तिसंगत होगा क्या? किनारे-किनारे पैदल चलकर घर जाना पड़ेगा। रास्ता भी नहीं पहचानती थी।

तैर कर किनारे की उच्चभूमि की ओर आ गयी वह। पुराने वृक्षों की डालियां उस स्थान पर नदी में झुकी हुई थीं, ऊपर बैठे विहंग किच-किच कर रहे थे। जंगल में सूखे पत्तों के चरमराने की आवाज आयी, लगता था जैसे कोई सियार तेजी से भागा हो।

ऊपर आने से पहले हाथों के कंगन कोहनी की तरफ फंसा लिये उसने। ऊपर आकर कपड़े अच्छी तरह बदन से लपेटकर, माथे के बाल हटाकर जैसे ही दाहिना पैर रेत पर रखा तो एक सीप पर पड़ा। पैर के नीचे से सीप उठाकर मुट्ठी कस ली और फिर डरते-डरते, जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाती जंगल की पगडंडी से निकलकर गांव के छोर के कहारपाड़ा की ओर चल पड़ी। घरों के निकट पहुंची तो मुहल्ले की औरतें विस्मित दृष्टि से उसकी ओर देखकर सोचने लगीं— ब्राह्मणपाड़ा की बहू अकेली इतनी दूर कहां आयी थी? कपड़े, बाल पानी में भीगे हुए हैं।

घर पहुंची तो देखा घर और मुहल्ले में हाय-तौबा मची हुई थी। दूर से उसकी सास और फुफिया सास के जोर-जोर से रोने की आवाज सुनाई दे रही थी। सबकी धारणा थी कि वह या तो डूब गयी थी अथवा मगर पकड़ ले गया था। लौटने में बहुत देर हो गयी देखकर कुछ लोग घाट की ओर दौड़ गये थे और आकर उसका कहीं नामोनिशान न होने की बात बतायी थी। उसे देखकर सब बड़े खुश हुए, पर साथ ही साथ प्रश्नों की बौछार भी सहनी पड़ी।

खाना खाने के बाद निस्तारिणी ने ननद सुमुखि के साथ रसोई के पिछवाड़े जाकर वह सीप पल्ले की खूंट से खोली। दोनों ननद-भावज बार-बार उलट-पलट कर देखने लगीं। अचानक निस्तारिणी के हाथ में कुई के बीज जैसी कोई चीज टकरायी। बोली — देखो तो बीबी जी, यह क्या है?

—अरे, यह तो मोती है।

—चल परे।

—सच भाभी। मोती है।

—तुम्हें कैसे पता चला मोती है?

—चल मां को दिखा ले।

—ना बीबीजी, किसी को मत दिखाना।

—चल ना, इसमें शर्म की क्या बात है?

सारे मुहल्ले को खबर हो गयी कि निस्तारिणी को नदी में नहाते हुए कीमती मोती मिला था। कुछ दिनों तक हर चंडीमंडप में बातचीत का विषय वही बात बनी रही। एक दिन विधु सुनार ने आकर मोती देखा-परखा और सात रुपये दाम लगा दिये। निस्तारिणी के पति ने जीवन में कभी एक साथ इतने रुपये नहीं देखे थे। पर निस्तारिणी के मन में जाने क्या आया, उसने मोती बेचने से मना कर दिया।

उसी दिन उनके यहां एक मुसलमान ने आकर मोती देखना चाहा। उलट-पलट कर अच्छी तरह देखकर उसने दाम लगाये सौ रुपये। निस्तारिणी तब भी वह मोती बेचने को तैयार नहीं हुई।

इधर गांव में शोर मच गया कि फलाने की बहू को नदी मे सौ रुपये का मोती मिला है। उस गांव में सौ रुपये एक साथ देखे ही किसने थे? बड़ी तकदीर वाली बहू है। सारी बहुएं इकट्ठी होकर उसकी मांग भरने आयीं। उसकी सास ने नरहरिपुर के श्यामराय के मंदिर जाकर प्रसाद चढ़ाया।

एक दिन निस्तारिणी तिलु से मिलने गयी तो मोती साथ लेती गयी। मुन्ने ने देखा तो मां से पूछा — यह क्या है मां?

—मोती।

—मोती क्या मां?

—यह सीप में रहता है।

—निस्तारिणी ने मुन्ने को गोद में उठाकर कहा — यह मैं इसे दे देती हूं, दीदी।

—अरे, वह इसका क्या करेगा भला?

—खेलेगा और क्या करेगा?

बड़ी मुश्किल से तिलु ने निस्तारिणी को रोका। निस्तारिणी सुंदरी नहीं थी, पर चेहरे पर ऐसा लावण्य था कि नजरें नहीं हटती थीं। उसके स्वभाव में ग्राम्यवधू की लज्जा और संकोच न होकर पौरुष भाव-सा था। और सबसे बड़ी बात थी कि वह न सास से डरती थी और न पति से।

तिलु को अच्छी लगती थी वह। उस गांव के कुसंस्कार, मूर्खता और भीरुता उस अल्पवयसी बहू को जैसे छू नहीं गये थे। वह मानों किसी और लोक की आत्मा थी जो शापवश अथवा गलती से इस धरा पर आ गयी थी।

तिलु ने पूछा — कुछ खायेगी?

—नहीं।

—खील और खीरे?

—अच्छा दो थोड़े से।

उसी निस्तारिणी को तिलु ने अचानक एक दिन नदी किनारे झाड़ियों की आड़ में रायपाड़ा के कृष्णकिशोर राय के लड़के गोविंद के साथ छुपकर प्रेमालाप करते पकड़ा।

तिलु मुन्ना को नहलाने नदी पर गयी थी। भवानी भी साथ थे। हेमंत का प्रारंभ था, नदी का पानी सूखना शुरू हो गया था। सूखी काली घास की सुरभि से वायु सुवासित थी। शाम के वक्त हवा में थोड़ी ठंडक महसूस होने लगी थी। ऐसे वातावरण में भगवान की चर्चा बहुत जमती थी। भवानी का कहना था कि ऐसे ही स्थान पर मुन्ने को भगवान के संबंध में बताना उत्तम था। तिलु ने कहा— प्रश्नोपनिषद का वह श्लोक समझा दीजिये।

—कौन-सा?

—वही — स एनं यजमानमहरर्ब्रह्म गमयति?

—वह यजमान को प्रतिदिन ब्रह्मभाव का आस्वादन कराते हैं।

—वह कौन?

—भगवान।

—और यजमान कौन?

—जो उनकी भक्तिपूर्वक उपासना करता है।

—यहां मन ही यजमान है, ऐसा भाव भी तो है?

—हां है तो — वहां झाड़ियों में कौन लोग बातें कर रहे हैं? ठहरो... देखता हूं...

—एकदम से सामने मत चले जाइयेगा। पहले देख लीजिये... मैं भी चलूं?

वहां पहुंचे तो देखा निस्तारिणी और गोविंद दोनों उनकी ओर पीठ किये बैठे दुनिया से बेखबर बातों में मस्त थे। गोविंद के दाहिने हाथ की मुट्ठी में निस्तारिणी के बाल थे और बायां हाथ हिला-हिला कर जाने क्या कह रहा था। निस्तारिणी गर्दन उसके मुंह की ओर झुकाये मंद-मंद मुस्कुराती नशीली नजरों से उसकी ओर देख रही थी।

अपने पीछे कदमों की आहट सुनकर निस्तारिणी ने मुंह फिराकर जैसे ही उन लोगों को देखा तो भय से पीली पड़ गयी। गोविंद एक छलांग में सामने की झाड़ियों में विलीन हो गया। भवानी वहां से चले आये। तिलु ने सामने झाड़ियों की तरफ उंगली से इशारा करके पूछा — वह कौन था री? और तू यहां क्या कर रही है?

निस्तारिणी को तो जैसे काटो तो खून नहीं था, माथे पर पसीने की बूंदें चमक रही थीं। कोई जवाब नहीं दिया उसने।

--बोलती क्यों नहीं, कौन था?

—गोविंद?

—यहां तेरे साथ क्या कर रहा था?

निस्तारिणी चुप।

—और घर से बाहर यहां जंगल में अकेले-अकेले.... वाह री लड़की!

—मुझे अच्छा लगता है। निस्तारिणी ने अत्यंत मृदु स्वर में कहा।

तिलु गुस्से से बोली — मार-मार कर हड्डी-पसली तोड़ दूंगी। अभी अच्छा लगना दिखाती हूं तुझे। शरम नहीं आती कहते। चल घर जा।

तिलु को गुस्से से निस्तारिणी को डांटते देख भवानी ने दूर खड़े-खड़े कहा — आ जाओ ना तिलु...

तिलु ने उन्हें भी झिड़क दिया — आप ठहरिये वहीं।

फिर निस्तारिणी से बोली— तुझे क्या किसी की परवाह नहीं है? हया शरम उठाकर ताक पर रख दी है? अभी गांव में ढिंढोरा पिट जायेगा तो मुंह कैसे दिखायेगी निगोड़ी?

निस्तारिणी पल्ला मुंह में दबाकर चुपचाप रोने लगी।

चल आ मेरे साथ मुंहजली! गुण तो देखो? और वह मोती है या दे दिया वह भी उसे।

—वह तो सास के पास है।

—चल मेरे साथ। तेरे जैसी मूरख नहीं देखी मैंने। अगर तेरी सास को पता चल गया तो गांव में रहने देगी तुझे?

—नहीं देगी तो इछामती का पानी तो नहीं छीन लेगा कोई।

—फिर सिरफिरी बातें। जबान चला रही है। हड्डी-पसली तोड़ दूंगी। चल, जल्दी से नदी में डुबकी लगा ले।

अपने घर लाकर तिलु ने उसके कपड़े बदलवाये और कुछ खाने को दिया। फिर आराम से पूछा — कितने दिनों से मिल जुल रही है उससे?

—पांच-छह महीनों से।

—किसी को पता नहीं चला?

—उसी जंगल में दोनों छिपते हुए आ जाते हैं।

—बहुत अच्छा काम करते हो। कहते में शर्म भी तो नहीं आती? अब तो नहीं मिलेगी, बोल?

—बिना मिले वह रह ही नहीं सकेगा।

--फिर। पर तू नहीं जायेगी, समझी?

—हूं।

—हूं क्या? जायेगी, या नहीं जायेगी? साफ-साफ बोल।

निस्तारिणी ने दूसरी तरफ मुंह घुमाकर कहा — गोविंद ने मुझे एक चीज दी है।

—कौन-सी चीज।

—लाकर दिखाऊंगी? कान में पहनते हैं, मकड़ी कहते हैं।

—कहां है?

भयमिश्रित स्वर में उसने कहा — यहीं, मेरे पास हैं। भीगी साड़ी के पल्ले में बंधे हैं। आज ही दिये हैं। वैसा गहना गांव में किसी के पास नहीं है। कलकत्ते में अभी बनने शुरू हुए हैं। यह कहकर उसने पल्ले से खोलकर मकड़ी तिलु को पकड़ा दी।

तिलु ने उलट-पलटकर देखकर कहा — चीज तो अच्छी है, पर तू रखेगी नहीं यह। लौटानी पड़ेगी उसे ही। वापस देकर कहना कि फिर कभी नहीं मिले। अभी तो केवल हमने ही देखा है और हम किसी से नहीं कहेंगे, पर तुम्हें ऐसा महापाप नहीं करने देंगे। पति अच्छा नहीं लगता तुझे? उसकी आंखों में धूल झोंककर...

नजरें झुकाकर निस्तारिणी ने कहा — वह मुझे प्यार नहीं करता....

—प्यार करेगा कैसे जब तू इधर-उधर।

—ऐसी बात नहीं है। पहले से ही नहीं करता।

—ऐसा करते हुए, पति को धोखा देते हुए तेरा मन जरा भी नहीं हिचकता?

—दीदी तुम्हें तो शिव जैसा पति मिला है। अगर हमें ऐसा पति मिले तो हम भी यह सब नहीं करें। तुम्हें क्या पता कि हमें कितना मन मारना पड़ता है। एक नयी साड़ी मांगी थी तो मां-बेटे ने आसमान सिर पर उठा लिया था। पीहर से एक जोड़ी गुजरी पंचम (घुंघरू वाली पायजेब) मिली थीं, वह भी नालू के पास गिरवी रखकर रुपये लिये थे, छुड़ाने का नाम ही नहीं लेता। छुड़ायेगा कहां से? वह गृहस्थी ही ऐसी है। इस बार धान हुआ ही नहीं, जो हुआ किसी तरह खींच-तान कर तीन महीने चला-बस। ढेंकी चलाते-चलाते कमर दुहरी हो गयी है। इतना करके भी तो किसी का मन नहीं मिलता, फिर क्यों ऐसी ससुराल में रहूं, तुम्हीं बताओ दीदी?

कहते-कहते विद्रोहिणी निस्तारिणी का मुंह लाल हो गया। बड़ी ममता आयी तिलु को उस पर। सोचने लगी, कितनी नादान है, होश ही नहीं है कि अगर किसी को पता चल गया तो सारे गांव में ढिंढोरा पिट जायेगा।

बहुत समझाया-बुझाया उसने निस्तारिणी को, फिर अंधेरा होने से पहले स्वयं जाकर घर छोड़ आयी। कह दिया उसके साथ नहाने गयी थी, वहीं से वह उसे अपने घर ले गयी थी। सास ने संदिग्ध स्वर में कहा — हाय राम, हम तो दो-दो बार घाट पर जाकर देख आये — मुहल्ले भर में ढूंढ़ आये... खूब बहू मिली है, बलिहारी है। तीसरे पहर निकली थी घर से और अब अंधेरा होने पर घुसी है। क्या बताऊं बेटी, मेरे तो हाड़ जल गये इस बहू के कारण। जरा सी बात कह दो तो महारानी का थोबड़ा चढ़ जाता है।

निस्तारिणी ने जहां तक बन पड़ा स्वर को नीचा रखते हुए कहा — हां-हां, सारे गुणों के भंडार तो तुम्हीं लोग हो ना? तुम लोगों में तो कोई दोष है नहीं.... हो ही नहीं सकता...

—सुन लिया बेटी अपने कानों से? बात मुंह से निकलती नहीं कि छुरी चलने लगती है।

—बहू बोली — तो और क्या करूं?

तिलु ने धमकाया — यह क्या? सास से ऐसे बोला जाता है?

अंधेरा होने लगा था, तिलु घर चली गयी। पहुंचकर भवानी से बोली — जमाना बड़ी तेजी से बदल रहा है, समझे? कभी सुनी थी ऐसी बात। अपने पति तक से दिन के उजाले में बात करने का नियम नहीं था और वह तो दिन-दहाड़े पर पुरुष के साथ बैठी हंस हंसकर बातें कर रही थी।

भवानी बोले — मैंने तुमसे कहा नहीं था कि एक दिन इसी गांव की सड़क पर मुन्ना अपनी बहू को साथ लिये चलेगा। वह दिन दूर नहीं है।

इधर काफी दिनों से प्रसन्न चकत्ति का गया मेम से साक्षात होना एक तरह से बंद सा हो गया था। मेम साहब के चले जाने के बाद गया प्रायः स्थायी रूप से बड़े साहब के बंगले में रहने लगी थी। कभी भूले-बिसरे मिल भी जाती तो पहले की तरह बात नहीं करती थी। मनमौजी गया के मन की उन्हें कभी थाह ही नहीं मिली।

नील कोठी का काम ठप्प सा हो गया था। नील की खेती तो एक प्रकार से ठीक ही हो रही थी। प्रजा भी बड़े साहब और दीवान को पहले जितना ही मानती थी, परंतु नील के व्यवसाय में मंदी आ गयी थी। मौजूदा नील की बाहर के बाजार में उतनी खपत नहीं थी। दाम इतने कम मिलते थे कि खर्च नहीं पुराता था। खपत कम होने के कारण गोदाम में नील भरा पड़ा था। नील कोठी की नौकरी में पहले जैसी सुविधा नहीं रह गयी थी, पर नयी नौकरी मिलनी भी तो आसान नहीं थी। हालांकि बड़े साहब ने एक भी आदमी को नौकरी से नहीं निकाला था और वेतन भी बराबर उसी तरह देते आ रहे थे, परंतु ऊपर की आमदनी, दबदबा नहीं रहा था।

एक दिन श्रीराम मोची ने प्रसन्न चकत्ति से कहा — अमीन बाबू, साहब से कहकर मेरी जमीन मुझे दिलवा दीजिये।

—कह दूंगा। सब नौकरों को जमीन दे रहे हैं?

—भजा को, नफर को और मुझे देने को कहा है। आप कोठी की जमीन में से नापकर एक-एक बीघा जमीन हमें दे दीजिये।

—जब साहब का हुकुम मिलेगा, तब दूंगा।

—हम लोगों को नहीं मिलेगी?

—आप पूछ लीजिये साहब से पर उन्होंने केवल नौकर चाकरों को देने को कहा था। आप लोगों को नहीं देंगे, गया मेम को पंद्रह बीघे देंगे।

—ऐं... क्या कह रहा है?

—उसे नहीं मिलेगी तो क्या आपको मिलेगी? वह ठहरी उनकी प्रेमिका।

इसके दो दिन बाद दीवान हरकाली सुर को गया मेम के लिये पंद्रह बीघे जमीन अमीन ने नपवा देने का परवाना मिला। दीवान ने अमीन को बुलाकर कहा कि गया मेम अपने आप पसंद करेगी जमीन।

—कौन-सी जमीन में से दी जायेगी?

—बेलडांगा का अट्ठारह नंबर वाला नक्शा देखकर बताइये कि वहां धान की कितनी जमीन है?

—वहा धान की कुल पांच बीघा जमीन है दीवान जी। मेरा तो ख्याल है कि छुतोरघाट के किनारे से नतिडांगा के लकड़ी के पुल तक जो टुकड़ा है, शशी मोची की जब्त की हुई जमीन वाला हिस्सा उसमें धान बहुत अच्छा होता है। वह अगर चाहे तो...

आंख मारकर हरकाली सुर ने कहा — चुप रहिये।

—क्यों बाबू?

—खासी के सिल जैसी जमीन है। वह दे देंगे तो साहब खायेंगे कहां से? नीलकोठी का काम तो रहा नहीं। इस जमीन में सत्रह-अट्ठारह मन धान होता है। और अगर लेनी भी हुई तो हम आप लेंगे वह जमीन, गया को देने की क्या जरूरत है?

बेचारा मूर्ख वैषयिक हरकाली। प्रेम की गति को कैसे समझोगे तुम?

उसके अगले मारकर दिन ही प्रसन्न चकत्ति गया मेम से मिलने के लिये दोपहर को बड़ी देर तक नीम के पेड़ के नीचे खड़े रहे। गया साहब के बंगले में कभी खाना नहीं खाती थी। खाना घर जाकर मां के साथ ही खाती थी और दूसरी बात थी कि कभी रात को वह बंगले में नहीं रहती थी। वरदा स्वयं आकर लड़की को घर ले जाती थी।

उन्हें देखते ही गया बोली — क्यों काका मोशाय, क्या खबर है?

—तुम तो दूज का चांद हो गयी हो।

एकदम निकट आकर खड़ी हो गयी गया और बोली — इस जलती धूप में ऐसे क्यों खड़े हैं?

—तुम्हारे लिये।

—जाइये, आप तो बेकार की बातें करते हैं।

—पांच दिन हो गये तुम्हें देखे।

—यह काला मुंह नहीं भी देखा तो क्या?

—इसका मतलब?

—मैं भला आप लोगों के किस काम आ सकती हूं?

—अच्छा गया...

—क्या?

कहकर पल्ला मुंह में दबाकर खिलखिलाकर हंसते हुए चलने को उद्यत हुई गया।

प्रसन्न परेशान होकर बोले — चल दीं, सुनो तो? एक बात कहनी है।

जाते-जाते रुक गयी गया और पीछे मुड़कर उनकी ओर देखती हुई बोली — आप तो बस तोते की तरह रटी-रटाई वही दो बातें कहते हैं — तुम्हें देखे बिना चैन नहीं पड़ता, तुम्हारे बारे में सोच रहा था, तुम्हारा इंतजार कर रहा था। जितना कहती हूं कि आपको काका मोशाय कहती हूं, आपको मुझसे ऐसी बातें नहीं करनी चाहिए, उतनी ही जुबान की लगाम ढीली होती जा रही है।

प्रसन्न चकत्ति हंसकर बोले — किधर से लगाम ढीली देख ली तुमने? क्या कहा है मैंने? झूठी बात तो एक भी नहीं कही।

—जाइये, घर जाइये। इस दुपहरी में धूप में मत खड़े रहिये। बहुत दुख होगा मुझे।

—सच गया, सचमुच तुम्हें दुख होगा? सच कह रही हो?

—होगा, होगा, होगा। अब घर जाइये, यहां सड़क पर खड़े-खड़े और पालगपन मत करिये।

—एक बात कहनी थी।

—फिर वही बात!

—नहीं, वह बात नहीं है।

—तो फिर कौन-सी नयी बात है?

—सच कह रहा हूं गया। बहुत जरूरी बात है। तुम्हारे ही काम की है। पर किसी को कानों-कान खबर न हो...

इसके तीन चार दिन बाद प्रसन्न चकत्ति ने शशी मोची की दखल की गयी जमीन में से सबसे अच्छी पंद्रह बीघा धान की जमीन गया के लिए नपवा कर खूंटे गड़वाकर हदबंदी तक बबूल के पेड़ लगवा दिये। जब जमीन नापी जा रही थी, गया वहां मौजूद थी। एक उडंबर का पेड़ देखकर गया बोली — काका मोशाय, यह पेड़ मेरी जमीन में ले लीजिए ना? उडंबर खाया करूंगी।

—अगर ले लूं तो मेरी बात याद रहेगी गया?

—ही ही...ही ही... फिर हो गये शुरू।

—सीधी बात करने में कौन-सा गुनाह हो जाता है? जवाब देने में क्या जाता है तुम्हारा? ए गया...

—ही ही ही....

—जाओ मरो। मैं अब कुछ नहीं कहूंगा। घुमाये देता हूं चेन, हो गया पेड़ तुम्हारा।

—पैर छू लूं या नहीं? बाम्हन देवता और ऊपर से काका मोशाय। जाने कितना पाप लगेगा।

आगे बढ़कर गया ने घुटनों के बल बैठकर दूर से ही जमीन से मस्तक लगाकर प्रणाम किया। खुशी छलकी पड़ रही थी उसकी आंखों से! उडंबर का ये पेड़ अभी बहुत साल खड़ा फल देता रहेगा और प्रसन्न चकत्ति के आज के सुख का साक्षी रहेगा। वह मर

जायेंगे लेकिन आज दोपहर को उस पेड़ की शीतल छाया में जिनके अपूर्व सुख का वार्तालाप हुआ, पचास साल बाद भी वह वृक्ष उसका साक्षी रहेगा।

कुछ माह पश्चात्।

भवानी लड़के को लिए इछामती के किनारे वनसिमतला के घाट के मोड़ पर बैठे थे। दिन का तीसरा पहर था। छायाछन्न नदीतीर मुर्गाबियां और हंसों की चहक से मुखर था।

भवानी बोले — मुन्ना, अगर मैं मर जाऊं तो तू अपनी दोनों मां की देखभाल करेगा?

—नहीं बाबा, तुम मर जाओगे तो मैं रोऊंगा।

—रोयेगा क्यों, मैं अब बुड्ढ़ा हो गया हूं और कितने दिन जियूंगा।

—बहुत दिन।

—ऐसा भी कहीं होता है? निरा पागल है तू।

—मुन्ना खी-खी करके हंस पड़ा और फिर दोनों हाथ गले में डालकर पिता से लिपटकर बोला — मेरे बाबा।

—अच्छा मेरी बात सुन। मैं मर जाऊं तो तू अपनी मां की देखभाल करना।

—नहीं, मैं तो रोऊंगा।

—अच्छा बता भगवान कौन हैं?

—पता नहीं।

—कहां रहते हैं वे।

आकाश की ओर उंगली उठाकर ऊपर देखते हुए मुन्ने ने कहा — वहां।

—उन्हें प्यार करता है तू?

—नहीं।

—क्यों?

—मैं तो तुमको प्यार करता हूं।

—और किसे प्यार करता है?

—मां को।

—भगवान को क्यों नहीं?

—भगवान को कभी देखा ही नहीं।

—तूने गलत नहीं कहा मुन्ना, ठीक कहा है। बिना देखे बिना जाने किसी को प्यार नहीं किया जा सकता। पहचानने व जानने के बाद प्यार करने से वह प्यार पक्का होता है। इसीलिए साधारण लोग भगवान से प्यार नहीं कर पाते। वे उनसे डरते हैं, प्यार नहीं करते, और पहचानने, समझने का प्रयत्न तो कभी करते ही नहीं। अच्छा, मैं उनको जानने समझने में तेरी मदद करूंगा।

मुन्ने ने जवाब में छोटा-सा हूं कह दिया।

—अच्छा बता, वह पक्षी देखने में कैसा है?

—अच्छा है।

—पक्षी को किसने बनाया, जानता है? भगवान ने । समझा? गर्दन हिलाकर मुन्ने ने हूं कहा।

—जो कुछ भी तू देख रहा है, सब भगवान ने बनाया है।

—समझ गया बाबा। मां ने बताया है, तारे भगवान ने बनाये हैं।

—और क्या बनाया है?

—चांद।

—और

—सूरज।

—हूं.... यह सब तुझे मां ने बताया है। ठीक है। अच्छा बता, चांद अच्छा लगता है?

—हूं....

—तो बता, जिसने ऐसी चीज बनायी, उसे प्यार नहीं करना चाहिए?

—मैं प्यार करूंगा। तुम करोगे?

—हूं...

—मां करेगी?

—हूं...।

—छोटी मां भी करेगी?

—हूं....।

—तो मैं भी करूंगा।

—जरूर करना। आज तुझे चांद अच्छी तरह दिखाऊंगा।

—चांद में कौन बैठा है?

—चांद में कोई नहीं बैठा है रे। वह तो उसका कलंक है।

—कलंक क्या बाबा?

—जैसे पीतल में धब्बा पड़ा जाता है, वैसे ही।

लड़के ने विस्मय से पिता के मुख की ओर देखा।

भवानी लड़के का भोला चेहरा देखकर मुग्ध हो गये।

कहां था यह शिशु इतने दिन? सुदूर अतीत का जाने कैसा मोह उनके हृदय को स्पर्श कर गया। प्रतिदिन की परिचित पृथ्वी को छोड़कर वह मानों किसी अन्य लोक में पहुंच गये, जो नितांत अपरिचित व रहस्यमय था।

पीछे से आती हवा मदार के फूलों की गंध से सुरभित थी। स्तब्ध नील शून्य जैसे अनंत के ध्यान में मग्न था।

आज का यह संगीत, जीव जगत की पवित्र अनाहत ध्वनि जो हर कंठ से उच्चरित हो रही थी पांच सौ या हजार वर्ष बाद ने सब कंठ कहां विलीन हो जायेंगे? इछामती के

स्रोत में नया इतिहास लिखा जायेगा काल के वक्ष पर। अपरान्ह में नदी किनारे वृक्ष की छाया में बैठे उन पिता-पुत्र के स्नेह-ममता-प्यार के बारे में कोई नहीं जान पायेगा।

केवल समस्त परिवर्तनों में अपरिवर्तनीय, प्रत्येक गति में स्थिति शील वह विराट शक्ति रहेगी, जो मनुष्य की कल्पना का ईश्वर है, ब्रह्म है, ज्योतिस्वरूप है। उनकी वह संतान केवल उसके द्वारा निर्मित एक खिलौना ही नहीं, वरन् उसी का एक रूप है।

यह लड़का जब बड़ा होगा घर बसायेगा, बहू लायेगा तब वह नहीं होंगे। दस वर्ष पूर्व किसी विस्मृत घटना के समान वह भी इस संसार में पुराने हो जायेंगे। परंतु यह प्रकृति, यह सचराचर तब भी इसी प्रकार विद्यमान रहेगा। जगत के रहस्य से मन भर उठा भवानी का, संध्या के सूर्य की वह रक्त छटा. निस्तारिणी की कौतूहली दृष्टि तिलु का प्रेम, इस नन्हें से बच्चे का भोलापन — सब उसी रहस्य का अंश ही तो है। किसका रहस्य है यह? उसी गंभीर रहस्यमय का गहन शिल्प रहस्य।

तिलु की पीछे से आवाज सुनकर भवानी का ध्यान टूटा। देखा, कंधे पर गमछा और कांख में कलसी दबाये नदी ने नहाने आयी थी वह।

हंसकर बोली — मुझे पता था कि मुन्ने को लेकर आप यहीं बैठे होंगे।

मुस्करा दिये भवानी। पूछा — नहाने आयी हो?

—आप लोगों को देखने भी आयी थी।

—निलु कहां है?

—घर पर। खाना चढ़ायेगी अब।

—बैठो।

—कोई आयेगा तो नहीं?

—कौन आयेगा इस वक्त?

—तिलु भवानी से सटकर बैठ गयी।

—भवानी बोले — देखो, मुन्ना कैसे देख रहा है! जरा सरक कर बैठो। वह बड़ा हो गया है अब।

तिलु ने खिसककर मुन्ने से पूछा — मुन्ना, भगवान के बारे में क्या सुना?

उस सवाल की जरा भी परवाह न करके मां से लिपटते हुए मुन्ना बोला — मां, मैं नहाऊंगा।

—पहले मेरी बात का जवाब दे।

—मैं नहाऊंगा।

इधर-उधर नजर घुमाकर तिलु ने भवानी से कहा — चलिये हम लोग भी पानी में उतरें। मुन्ने को नहलाकर तैरेंगे दोनों।

भवानी खोये-खोये से बोले — बैठो तिलु। आज मेरा मन जाने कैसा तो हो रहा था। मुन्ना को भगवान के संबंध में बता रहा था, तो ऐसा प्रतीत हो रहा था कि इस आकाश,

वातास, जंगल, पहाड़, नदी समुद्र सब में वही विद्यमान है, इस मुन्ने में भी। इसे खुश करके लगता है, जैसे उन्हीं को खुश कर रहा हूं।

तिलु बड़े ध्यान से पति की बातें सुन रही थी। गर्दन हिलाकर बोली — आपको ब्रह्म की अनुभूति हुई थी?

—हंसा दिया तुमने तो।

—तो बताइये, वह अनुभूति क्या थी?

कभी-कभी उनकी छाया मन को छू जाती है। एकदम निकट लगते हैं वे। जैसा आज लग रहा था कि हम उनके अपने हैं, पराये नहीं। वे चाहे जितने बड़े हों, विराट हों, हमारे पिता है। "दिव्योहममूर्त पुरुषः" — याद है न?

—यही तो ब्रह्मानुभूति है। यही हुई थी आपको।

—अबसे रोज यहां बैठकर मुन्ना को भगवान के बारे में बताया करूंगा। इसी उमर से उसके मन में भगवान का विश्वास दिलाना चाहिए। नहीं तो मनुष्य नहीं बन पायेगा।

—आप जैसा उचित समझें। चलिये, अब नहाकर थोड़ा तैर आवें। मुन्ना, तुम किनारे पर ही बैठे रहना।

मुन्ना बड़ा ही आज्ञाकारी बालक था। सिर हिलाकर बोला — हूं।

—पानी में मत उतरना।

—अच्छा।

पति-पत्नी जब बच्चे के साथ घर की ओर चले, आकाश में चांद निकल आया था। चैत का महीना खतम हो रहा था। जंगल मैदान फूलों से भर गये थे। दक्षिण से आते बयार में वह डोलते फूल ऐसे लग रहे थे, जैसे खुशी से झूम रहे हों। अचानक चलते-चलते भवानी का मन बिलु की याद आ जाने से क्षुब्ध हो गया। पर अगले क्षण ही सोचा, दुख को छोड़कर केवल सुख तो दुनिया में संभव नहीं होता। प्रकृत सुख की अनुभूति तो दुख के बाद ही होती है। दुख से पहले का सुख तो बड़ा उथला होता है। जीवन को जो लोग दुखमय कहते हैं, वह जीवन को शतांश भी नहीं जानते, संसार को दुखमय मानना नास्तिकता है। संसार तो उसी आनंदमय की विभूति है। परंतु उसे देखने-समझने के लिये मन की आंखों की आवश्यकता होती है। आजकल उनकी समझ में थोड़ा-थोड़ा आने लगा है।

तभी मुन्ने ने दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा — बाबा, डर लग रहा है।

—क्यों रे?

—सियार। गोदी आना है...

—नहीं, पांव-पांव चलो।

—तो फिर मैं रोऊंगा।

तिलु बोली — नहीं बेटा, हम दोनों के कपड़े गीले हैं, तुम भीग जाओगे।

घर पहुंचकर भवानी ने संध्या की। संध्या से उठते ही निलु आकर बोली — जलपान ले आऊं?

भवानी के हां करने पर कांसे की एक कटोरी में मुड़कि और नारियल के दो टुकड़े ले आयी और पास बैठते हुए बोली — अब मेरे साथ बात करनी पड़ेगी...

—बैठो। बोलो, आज क्या बना रही हो?

—नहीं, उस तरह की बात नहीं। चालाकी कर रहे हैं? जैसी दीदी के साथ करते हैं, वैसी ही।

—तुम्हें दीदी की बड़ी जलन होती है। कैसी बात करना चाहती हो?

—यही संस्कृति वंस्कृति की। भगवान की। ब्रह्म की...

हो-हो करके हंस पड़े भवानी। फिर स्नेह से उसकी ओर देखकर बोले — तुमने कभी सुनना नहीं चाहा इसलिये नहीं बताया। अब से ऐसी ही बातें किया करूंगा। पता है आज तुमने किसके जैसा किया? प्राचीन काल में एक ऋषि थे, उनकी दो पत्नियां थीं — कात्यायनी और मैत्रेयी। कात्यायनी के मन में भी मैत्रेयी के प्रति तुम्हारे जैसी ही डाह थी।

तभी मुन्ना वहां आकर बोला — बाबा क्या खा रहे हो? मैं भी खाऊंगा।

भवानी ने थोड़ी सी मुड़कि उसके मुंह में डाल दी। मुन्ना ने कटोरी की तरफ देखकर कहा — नारियल!

—नारियल नहीं। पेट दुखेगा।

—पेट दुखेगा?

—हां, बेटा।

—पेट दुखेगा?

—हां, कहा न बेटा।

निलु ने धमकाया — चुप हो जा मुन्ना। एक बात पकड़कर रट लगा लेता है।

भवानी ने एक छोटा-सा टुकड़ा नारियल का मुन्ने को पकड़ा दिया। मुन्ना पिता की गोद में लेटकर नारियल खाने लगा।

तभी बाहर से प्रवीण श्यामचांद गांगुली ने आवाज लगायी — बाबीजी, घर में है।

हड़बड़ा कर उठ खड़े हुए भवानी। बोले — आइये मामा, आइये।

—इस समय अंदर नहीं आऊंगा, बत्ती मेरे पास है। जरा चन्दर भैया के चंडीमंडप में चलना है। भानो ग्वालन की उसी विधवा लड़की के मामले का फैसला होगा आज।

—मैं वहां न ही जाऊंगा मामा।

—क्यों? जाना तो पड़ेगा ही। सब तुम्हारा इंतजार कर रहे हैं। समाज का मामला है और तुम समाज के एक प्रमुख आदमी हो। बुरा मत मानना बाबा जी, तुम लोग आजकल अपना कर्त्तव्य भूलते जा रहे हो बाबाजी।

श्यामचांद गांगुली की बात काटी नहीं जा सकती थी, बड़े क्रोधी आदमी थे। कुछ पता नहीं क्या बकना शुरू कर दें।

रसोई में जाकर तिलु निलु को सारी बात बताकर कहा कि उन्हें रात को लौटने में देर हो जायेगी। चलने को मुड़े ही थे कि मुन्ना ने आकर हाथ पकड़ लिया और बोला — बाबा चलो खाने....

—क्या खाने?

—आओ बाबा, बैठो — मजा आयेगा।

—नहीं मुन्ना, मुझे जाना है। तुम खाओ।

—तो फिर मैं रोऊंगा। तुम मत जाओ, यहां बैठो। मजा आयेगा।

मुन्ना बहुत ही उल्लसित था। पिता को खींचकर पटड़े पर बिठा दिया उसने। परंतु असल में वह चकला था, पटड़ा नहीं। बिठाकर बोला — बैठो यहां। तुम खाओगे?

—हूं?

—मैं भी खाऊंगा।

तभी श्याम गांगुली का तीखा स्वर सुनायी दिया — मैंने कहा, बाबाजी को देर लगेगी क्या?

दुर्वासा ऋषि को अब और प्रतीक्षारत नहीं खड़ा किया जा सकता था, उठना पड़ा भवानी को। उनके उठकर खड़े होते ही मुन्ने ने झट से धोती कसकर पकड़ते हुए कहा — मत जाओ बाबा, बैठ जाओ। नहीं तो मैं रोऊंगा।

मुन्ने के हाथ से धोती छुड़ाकर जल्दी से बाहर निकल आये भवानी। रास्ते भर श्याम गांगुली बक-बक करते रहे। चंद्र चाटुज्जे के चंडीमंडप में बड़ी देर तक विचार होता रहा, पर उनका मन जैसे वहां था ही नहीं। बड़े ही अन्यमनस्क से बैठे हां हूं करते रहे। आंखों के सामने बार-बार बस मुन्ने का रूआंसा चेहरा घूम जाता था। एक ही बात मन में घूम रही थी कि जब वह लौटेंगे मुन्ना रोते-रोते सो चुका होगा। सुबह भी मुंह फुलाये रहेगा, बात नहीं करेगा उनसे। श्याम गांगुली का मान रखने की खातिर आज मुन्ने का मन दुखाना पड़ा था उन्हें।

पर रात को जब घर लौटे तो मुन्ना बैठा उनका इंतजार कर रहा था। उन्हें देखते ही प्रसन्न हो गया। उनके मन पर से भी जैसे बोझ उतर गया। बड़ी देर तक दोनों जने खेलते रहे, फिर पड़कर सो गये।

गांव में एक अप्रत्याशित घटना घट गयी। नालूपाल बहुत धनवान हो गया था। पंसारी की छोटी दुकान आढ़त की बहुत बड़ी दुकान में परिणत हो गयी थी। धान, सरसों, मूंग और मसूर की दालों की खरीद-फरोख्त होती थी।

एक दिन फणी चकत्ति के चंडीमंडप में दीनू भट्चाज आये और आंखें विस्फारित करके बोले— अरे तुम लोगों ने नालूपाल के कांड के बारे में सुना?

सबके कान खड़े हो गये। आग्रह भरे स्वर में एक साथ बोले — अरे... क्या हुआ? कुछ बोलो भी तो?

—सतीश कलु और नालूपाल ने तमाखू में मोटी रकम कमायी है... दस-बीस नही, सौ-दो सौ भी नहीं.... दस बीस हजार का मुनाफा हुआ है।

—क्या....? सबकी आंखें फटी की फटी रह गयीं।

दीनू भट्चाज बोले — दोनों काफी दिनों से अंदर ही अंदर क्रय-विक्रय का धंधा कर रहे थे। इस बार भाजनघाट मुकाम से एक किश्ती माल कलकत्ता भेजा। सतीश कलु का साला भाजनघाट में ही बहुत बड़ा आढ़ती है, उसकी सलाह से हुआ है सब। नहीं तो ये दोनों क्या जानते समझते हैं? सब मालामाल हो गये।

फणी चकत्ति बोले — हां, मैंने भी सुना है। यह सब कुछ नहीं है। सतीश का साला-वाला नहीं असल में तो इसकी जड़ में नालू का सुसरा है। वह बाहर से ही ऐसा दिखता है पर बड़ा माल दबा हुआ है इसके नीचे। उसी ने रुपया उधार दिया है।

हरि नाऊ सबकी हजामत बनाने आया था, गांव का नाई था, सुबह आने पर सब एक ही जगह मिल जाते थे, इसलिये वह यहीं आ जाता था। आकर पहले तमाखू पीता था। गुड़गुड़ी पीते हुए बोला — नहीं, काका मोशाय, विनोद प्रामाणिक की अवस्था अच्छी नहीं है, मैं जानता हूं। छोटी-मोटी आढ़तदारी करता है, इतना पैसा कहां से पायेगा?

—अरे रुपया दबा हुआ है। एक ही तो लड़की है उसकी। कैसे भी जुगाड़ करके रुपया दिया होगा जमाई को। बिना रुपये के कहीं धंधा चलता है?

उस समय इस बात की मीमांसा हुई हो या न हुई हो, लेकिन छह महीनों में ही जब उसने पटपटितला के घाट पर धान का बहुत बड़ा भंडार बनाया तो सबको मानना ही पड़ा कि वह वास्तव में बड़ा आदमी बन गया था। उसने जमींदार से घाट इजारे पर ले लिया था और धान व सरसों के मौसम में रोज पंद्रह-बीस किश्ती माल आता जाता। दो आदमी माल तोलते-तोलते हांफ जाते। उस साल एक ही फसल पर पटपटितला के वाणिज्य स्थान से पच्चीस हजार का मुनाफा हुआ उसे। अपनी आढ़त की दुकान की बगल में कपड़े की दुकान भी खोल ली उसने।

पहले नालू एक संपन्न गृहस्थ था, अब धनी महाजन बन गया।

परंतु नालू में जरा भी अंतर नहीं आया था। वहीं नौ हाथ की धोती पहनता, हर वक्त नंगे बदन, नंगे पैर रहता। ब्राह्मण को देखते ही दुहरा हो जाता। दोनों हाथ जोड़कर माथे से लगाकर प्रणाम करता। गले में तुलसी की माला और हाथ में हरीनाम वाली झोली रहती। नालूपाल ने एक ही जीवन में जो कर दिखाया था, वह बहुतों के लिये मात्र स्वप्न था।

अगर कोई पूछता — पाल मोशाय, सब ठीक-ठाक है न? तो झट से हाथ जोड़कर कहता — प्रोतोपेन्नाम महाराज। आइये बैठिये। नहीं महाराज, धंधा बहुत ही मंदा है। यह सब ठाठ बाट समेटना पड़ेगा अब। यही हाल रहा तो चलेगा ही नहीं। उसके चेहरे पर दैन्यभाव देखकर कोई अनजान व्यक्ति तो उसे सत्य मानकर दुखी हो जाता, पर गांव का

हर आदमी जानता था कि वह उसकी वैष्णव सुलभ नम्रता मात्र थी, उसकी वास्तविक अवस्था से उसका कोई मेल नहीं था। कपड़े वाली दुकान का मूलधन ही तीस हजार था।

नालू का भागीदार था सतीश कलु। दोनों जने कभी सिर पर बोझा उठाये हाट-हाट सामान बेचते फिरा करते थे। नालू सुपारी और सतीश तेल बेचता था। धीरे-धीरे पूंजी इकट्ठी करके नालू ने पंसारी की दुकान खोल ली। सतीश की सलाह पर उसने तेघरा — शेखहाटि और बांधमूड़ा मंड़ियों से सरसों, आलू और तमाखू मंगाकर बेचना शुरू कर दिया। सतीश उसका बिना पूंजी का भागीदार था, उसका काम था सस्ता माल ढूंढ़ना। माल खरीदने में अत्यंत पटु था सतीश। दोनों के सम्मिलित प्रयास व परिश्रम का ही फल था कि आज वे इतने बड़े महाजन और व्यवसायी बन गये थे।

पति के घर लौटने पर तुलसी ने कहा — हां जी, इस बार काली पूजा पर कुछ नहीं करना क्या? एकदम बेखबर बैठे हो।

—काम का बड़ा दबाव है बड़ी बहू। मंडी में पांच सौ मन माल खरीदा हुआ पड़ा है, लाने का कोई इंतजाम नहीं कर पाया हूं अभी तक।

—मैं यह सब कुछ नहीं सुनना चाहती। मेरी इच्छा है, इस बार गांव के सारे ब्राह्मणों को पूरी और चीनी का आहार कराऊं, तुम इंतजाम कर दो। और हां मुझे सोने का बाजूबंद चाहिए।

—तुमने तो मोटे खर्चे का हिसाब बता दिया।

—जो भी हो। लड़कों के मंगल के लिये यह तुम्हें करना ही पड़ेगा। और छोटे लड़के का बोर, पट्टा वगैरह भी इसी के साथ देना पड़ेगा।

—ठहरो, बड़ी बहू ठहरो। एक साथ इतनी लंबी फेहरिस्त मत सुनाओ। सोच-समझकर...

—नहीं, कुछ सोचा-समझा नहीं जायेगा। मैना बीबीजी को भी ससुराल से बुलाना होगा... मैं आज ही सये की मां को भेज देती हूं।

—अरे काली पूजा पर तो उसे बुलाना ही है, जब चाहो बुलाने भेज दो। पर यह तो सोचो कि ब्राह्मण जीमेंगें कहां? चंद्र चाटुज्जे मर गये।

—मैं तो कहती हूं कि अगर भवानी बाडुंज्जे को मना लो तो मेरे मन की मुराद पूरी हो जाये। इसके अलावा एक और मुराद है मेरी।

—वह क्या?

—रामकनाई कविराज को तंत्रधारक बनाकर पूजा-अनुष्ठान कराना। इस इलाके में उन जैसा दूसरा आदमी नहीं है।

—समझ गया... पर यह बड़ा कठिन काम हे बड़ी बहू। पैसे देकर उन्हें लाया जा सके, ऐसे आदमी नहीं है वे। और भवानी ठाकुर भी वैसे ही आदमी हैं। पर वहां तिलु दीदी का थोड़ा भरोसा है। तुम जाकर उन्हें मना लो। उनके घर तो सारे ब्राह्मण खाने आ जायेंगे।

पति पत्नी के इस परामर्श के फलस्वरूप काली पूजा की रात गांव के समस्त ब्राह्मण भोज में सम्मिलित हुए। मुन्ना उस दिन इतने लोगों को देखकर बड़ा ही खुश था। इधर से उधर दौड़-दौड़कर कभी नमक तो कभी पूरा परोसने लगता।

दूर खड़ा नाल मोहन पाल भोजनरत ब्राह्मणों की ओर देख रहा था। आज उसके परम सौभाग्य का दिन था, एक साथ इतने कुलीन ब्राह्मणों को वह आहार कराने में सक्षम हो सका था। आधा मन मैदा, दस सेर गाय का घी और दस सेर चीनी मंगायी थी। दीयतां भुज्यतां वाली बात थी। देखकर बड़ा सुख मिल रहा था।

तभी उसने दूर कटहल के पेड़ के नीचे खड़ी तुलसी को आवाज देकर पास बुलाया और बोला — देखो, जनम सार्थक कर लो। तुलसी भी वहीं पति की बगल में खड़ी होकर तृप्त नयनों से पंगत की ओर देखने लगी। नालू का मन खुशी से उमड़ रहा था। वर्णनातीत था वह आनंद। किशोरावस्था और यौवन के प्रारंभ में मामा के घर कम कष्ट नहीं उठाये थे उसने। शौक से लंबे बाल रखे थे, पर तेल के अभाव में रूखे रहते थे। मामी रोज तेल के लिये ताना मारती थी। कभी दुबारा थोड़ा भात मांग लेता तो कहती — हाथी को बैठे-बैठे कब तक खिलायेंगे? वह क्या बैठे-बैठे खाता था? दो कोस दूर भातछाला के हाट से चावल ढोकर लाया करता था। धान उबालना सुखाना भी उसी को करना पड़ता था। रोज बीस बाइस सेर धान उबालता था वह। एक दिन हाट से लौटते समय चादर की खूंट से चांदी की दुअन्नी गिरकर खो गयी थी तो मामी लगातार तीन दिन तक सुबह शाम दोनों वक्त खाना देते समय धान खत्म हो जाने की बात सुनाती रही थी। कहा था — मामा के घर टुकड़े कब तक तोड़ते रहोगे? अब अपना रस्ता देखो। आंसू आ गये थे उस दिन उसकी आंखों में।

वही नालू आज इतने ब्राह्मणों को पक्का भोजन कराने लायक हो सका था। जी चाहा चिल्लाकर कहे — खूब खिलाओ, जिसे जो पसंद हो, जी भर कर खिलाओ... एक दिन दो निवालों के लिये मन बहुत तरसता था मेरा।

जब पंगत उठी तो तुलसी फिर से कटहल के पेड़ के नीचे जाकर खड़ी हो गयी। नालू हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और हरेक से पूछने लगा — महाराज पेट भरकर खाया? सब उसे आशीर्वाद देकर चले गये।

गांव के सभी लोग नालू से स्नेह करते थे। अपने कठोर परिश्रम से उसके इतनी उन्नति करने के लिये उसकी बड़ाई करते थे। एक दिन राजाराम का भतीजा शंभूराय गांव आया तो उससे बोला — नालू, चलो, सोमवार को मेरे साथ कलकत्ता चलो, अगले हफ्ते वहां उत्सव है। खुश हो जाओगे देखकर। यहां के लोग तो कुएं के मेंढकों की तरह हैं, कोई कभी कहीं जाना ही नहीं चाहता। हावड़ा से वर्धमान तक रेल चलती है, देख आ।

—हां, रेलगाड़ी के बारे में तो सुना है। मेरी मुंशी बता रहा था कि मेरा माल इधर कहीं से रेलगाड़ी से आया था।

—देखी थी?

—देखता कहां से? कलकत्ता गया ही नहीं।

—चल इस बार देख आ।

—डर लगता है। सुना है चोरों ठगों का देश है।

—मेरे साथ चलना।तुम लोग पैसे वाले हो, फिर कैसी चिंता। अच्छी बंगाली सराय में कमरा दिलवा दूंगा। ऐसा मौका फिर नहीं मिलेगा। काबुल की लड़ाई में जीतने की खुशी में सरकार की तरफ से उत्सव हो रहा है।

नालू अपनी पत्नी के साथ कलकत्ता रवाना हो गया। तुलसी को ले जाने के लिये परिवार वालों ने बहुत आपत्ति की थी। कहा था, साहब लोग गोमांस खिलाकर ईसाई बना देते हैं वहां। और भी बहुत कुछ कहा था। पर शंभू राय ने समझा-बुझाकर सबको चुप कर दिया था।

कलकत्ता पहुंचकर एक आने रोज किराये पर कालीघाट की एक सराय में छोटा-सा कमरा लिया उन्होंने । तुलसी ने आदि गंगा में स्नान करके दो बकरे और सोने का बेलपत्र चढ़ाकर पूजा की। सात दिन रहे दोनों और प्रतिदिन गंगास्नान करते रहे।

शंभूराय ने खूब अच्छी तरह सारा कलकत्ता दिखाया उन्हें। एक ओर दोनों जहां देख-देख कर दांतों तले उंगली दबाते, वहीं भय से सिकुड़ सिमट जाते। ऐसी भीड़ — जिसकी कभी कल्पना भी नहीं कर सकते थे। चौड़ी-चौड़ी सड़कों पर आती-जाती चार-चार, दो-दो, घोड़ो वाली बग्घियां, बड़ी-बड़ी दुकानों में सजाया सामान, उत्सव के दिन की आतिशबाजी — सब कुछ अद्भुत लग रहा था, विचित्र अनुभूति थी। नालू सामान खरीदने गया तो देखा हर चीज गांव से बहुत मंहगी थी। उसने पहली बार साग-भाजी सेर के हिसाब से बिकती देखी। बैंगन दो पैसे सेर? देखता ही रह गया वह। सोचने लगा यहां के लोग क्या खाकर जिंदा रहते हैं। दूध भी एक आने से छह पैसे सेर था और वह भी असली नहीं, पानी मिला हुआ। शंभू राय ने बताया कि उन दिनों उत्सव में बहुत लोगों के बाहर से आने के कारण चीजें मंहगी हो गयी थीं, वास्तव में इतना मंहगा नहीं था। पर तब भी। हां गोल आलू बाजार में बहुत था और सस्ता भी था। गांव में यह चीज नहीं मिलती थी। कभी-कभी छोटे दुकानदार शहर से ले जाकर बेचते थे, पर बहुत मंहगे। नालू ने तुलसी से कहा — थोड़े गोल आलू ले जायेंगे और अगर पड़ता खाया तो मंगाना शुरू कर दूंगा।

तुलसी बोली — यह साहब लोगों का खाना हमें नहीं पुसायेगा।

—किसने कहा, साहब लोगों का खाना है? हमारे देश में मंडियों का आलू हो रहा है। मुझे मंडी की पूरी जानकारी रहती है। कालना, काटोया की मंडियों का आलू सस्ता होता है, वहां बहुत पैदा होता है। हमारे गांव में उतनी बिक्री नहीं है, नहीं तो क्या मैं कालना से मंगा नहीं सकता?

तुलसी बोली — तुम्हारे दिमाग में तो हर वक्त खरीदना बेचना चलता रहता है बस। यहां आकर भी उससे छुट्टी नहीं मिली।

नालू पाल के कलकत्ता के विचित्र अनुभव काफी दिनों तक गांव वालों की बातचीत के विषय बने रहे। लेकिन इससे भी अधिक आश्चर्यजनक घटना घट गयी एक दिन। सर्दियों में एक दिन दीवान हरकाली सुर और पेशकार नरहरि नालू की दुकान पर आये तो हड़बड़ी सी मच गयी। अविलंब पान-तमाखू एवं जलपान की व्यवस्था की गयी। नीलकोठी के दीवान थे, जल्दी किसी के पास नहीं जाते थे। कुछ देर बाद दीवान जी ने अपने आने का कारण बताया — बड़े साहब को कुछ रुपया उधार चाहिए था। बेंगाल इंडिगो कन्सर्न मुल्लाहाटि की नीलकोठी छोड़ रही थी। नील के व्यापार में मंदी आ जाने के कारण फर्म के व्यवस्थापक यह कोठी नहीं रखना चाहते थे। शिप्टन साहब यह कोठी खरीदना चाहते थे और इसके लिये बेंगाल इंडिगो कन्सर्न को पंद्रह हजार रुपये देने थे। इसी कोठी को वह नालू पाल के पास गिरवी रखकर रुपया चाहते थे।

नरहरि पेशकार बोला — कोठी रखने का यही एकमात्र उपाय है। नहीं तो चैत के महीने से कोठी उठ जायेगी। हमारी नौकरी तो जायेगी ही, साहब भी चले जायेंगे।

दीवान जी ने कहा — स्वयं कोठी चलाकर देखने की बड़े साहब की बड़ी इच्छा है। इतने साल यहां रहे हैं, अब यहां से जाना नहीं चाहते। और वहां अपने देश में उनका है ही कौन। मेम साहब तो मर गयी। एक लड़की है, वह यहां कभी आयी नहीं और ना ही बाप से कोई सम्पर्क रहा।

नालू हाथ जोड़कर बोला — अभी तुरंत तो कुछ नहीं कह सकता दीवान बाबू। सोचना पड़ेगा। इसके अलावा मैं अकेला तो हूं नहीं, पार्टनर की सम्मति भी तो होनी चाहिये। तीन-चार दिन बाद बताऊंगा आपको।

उठते हुए दीवान जी ने कहा — तीन दिन क्यों, आप पंद्रह दिन का समय लीजिये पाल मोशाय। रुपये की तो मार्च के महीने में जरूरत पड़ेगी।

तुलसी ने सुना तो विश्वास नहीं हुआ उसे। नालू बोला, देखो, कैसे दिन बदल जाते हैं। कल क्या होगा, कौन कह सकता है?

—रुपया दोगे?

—मेरी बहुत अनिच्छा नहीं है। इतनी बड़ी कोठी, डेढ़ सौ बीघा जमीन, कलमी आमों का बगीचा, घोड़े, गाड़ी, मेज, कुर्सी, झाड़-फानूस सब बंधक रहेंगे। मरा हाथी भी सवा लाख का होता है। कुछ नहीं होते हुए भी कोठी में बहुत कुछ है। पर लगता है सतीश का बहुत मन नहीं है। उसका कहना है, हम आढ़ती हैं, अपने धंधे को छोड़कर इन सब मामलों में जाने की क्या जरूरत है? क्या पता बाद में इसे लेकर मामले मुकदमें के पचड़े में पड़ना पड़े।

रात भर नींद नहीं आयी नालू को। आंखों के सामने पुराने दिनों के चित्र घूमते रहे —

बड़े साहब शिप्टन टमटम में बैठे जा रहे हैं... कोठी के कारिंदे लठैत... मारो श्यामचांद.... जला दो घर... चीख-पुकार... वह सिर पर पान सुपारी की गठरी रखे मुल्लाहाटि की हाट जा रहा है।

रुपये देने की इच्छा प्रबल होती जाती है।

उसी साल एक और उल्लेख योग्य घटना घटी।

मार्च के अंत में मात्र कुछ दिनों के ज्वर में बड़े साहब मर गये। उनके इस तरह चले जाने की किसी को कल्पना नहीं थी।

बीमारी में गया मेम ने रात दिन एक कर दिये थे। बुखार की बेहोशी में जाने क्या-क्या बकते रहे थे। कभी गाने लगते तो कभी मेम साहब का नाम लेकर पुकारने लगते। एक बार गया से शराब पिलाने की जिद करने लगे।

गया ने जरा धमकाते हुए कहा — नहीं, डाक्टर ने मना किया है।

शिप्टन ने बच्चे की तरह मचलकर कहा — डियर, आइ अडोर यू, समझीं? आई अडोर यू, ब्रांडी दे दो ना, जस्ट ए लिटिल, वोंट यू? बस जरा सी...

—नहीं। मिश्री का पानी दूं?

—ओह, टू हेल विथ योर कैंडी वाटर। व्हेन आइ ऐम गैटिंग माई पेग? ब्रांडी दो...

—चुप रहो। खांसी बढ़ जायेगी और सिर में दर्द हो जायेगा।

—चुप हो गये शिप्टन।

दो दिन बाद हालत बिगड़ गयी। दीवान हरकाली सुर ने कलकत्ता भेजने की बहुत कोशिश की पर साहब किसी तरह तैयार नहीं हुए। शहर से डाक्टर बुलाया गया, उसने भी रोगी को हिलाने-डुलाने को मना कर दिया।

फिर एक दिन गया मेम ने रामकनाई कविराज को बुला भेजा।

रामकनाई अपनी जड़ी बूटियों की पोटली गोद में रखे रोगी के पलंग के पास एक कुर्सी पर बैठे थे। साहब की आंखें खुलीं तो उनकी ओर कुछ पल एकटक देखने के बाद बोले — आह। द ओल्ड मेडिसिन मैन। व्हेन डिड आइ मीट यू लास्ट माइ ओल्ड मोडिसिन मैन? जल्दी जबाब दो....

फिर जरा देर चुप रहकर बोले — यू विल नॉट बी लुकिंग एट द मून, विल यू? योर नेम एंड प्रोफेशन?

गया बोली — समझे बाबा, कल से ऐसे ही वे सिर-पैर की बक रहा है।

रामकनाई आंखें बंद करके बड़ी देर तक रोगी की नब्ज देखते रहे। फिर बोले — क्षीणे बलवती नाड़ी, सा नाड़ी प्राणघातिका — थोड़ी-थोड़ी देर में मिश्री का पानी पिलाती रहो। मैं जो दवा दूंगा, उसके सहपान का जुगाड़ करना होगा बेटी, अनुपान से सहपान ज्यादा जरूरी है — थोड़ा-बहुत मैं भी जुटा दूंगा। पर एक आदमी साथ भेजना पड़ेगा।

शिप्टन ने पलंग से उठने की कोशिश करते हुए कहा — यू सी, ओल्ड मेडिसिन मैन, आइ हैव टू मेनी थिंग्स टु डू दिस समर टू हैव एनी टाइम फॉर योर रिग्मैरोल — यू जस्ट...

श्रीराम और गया ने पकड़ कर जबरदस्ती साहब को पलंग पर लिटा दिया।

गया ने प्यार से कहा — अच्छा अब चुपचाप लेटे रहो।

साहब रामकनाई की ओर पूर्ववत देखते रहे, फिर बोले — शैल आइ गेट यू ए ग्लास आफ वरमूथ, माइ गुड मैन.... एक ग्लास शराब पियोगे? बहुत अच्छी शराब है... ओह, दैट रिमाइंडस मी, व्हेन आइ ऐम गोइंग टु हैव माई डिनर? मुझे खाना कब मिलेगा? खाना लाओ।

इसके पश्चात् दो दिन, दो रात लगातार प्रलाप करते रहे शिप्टन और तीसरे दिन दोपहर से गहरी बेहोशी में चले गये। बस गंभीर रात्रि में एक बार आंखें खोलकर पूछा था — व्हेअर आइ एम?

गया ने मुंह के पास मुंह ले जाकर पूछा था — क्या कह रहे हो साहब? मुझे पहचान रहे हो?

कुछ क्षण उसकी ओर देखते रहकर शिप्टन ने कहा — व्हाट वेजेज डू यू गेट हियर?

बस यही उनके अंतिम शब्द थे। उसके बाद सांस लेने में बड़ा कष्ट होने लगा था। गया ने रोना शुरू कर दिया। साहब के पलंग के चारों ओर लोग बाग खड़े थे। दीवान जी बोले — इनका कष्ट देखा नहीं जाता अब!

लेकिन शिप्टन साहब कष्ट की अनुभूति से बहुत दूर चले गये थे। किसी को नहीं मालूम था कि वह उस समय स्वदेश के वेस्ट मोरलैंड के ऐल्डरि गांव के ऊपर वाले राइनोज पास के ओक और एल्म वृक्षों के छायाछत्र पथ पर अपने दस वर्षीय छोटे भाई के साथ खरगोश का शिकार करने पहुंच गये थे। कभी पर्वतीय सरोवर एल्टर वाटर के विशाल वक्ष पर नौका में विचरण कर रहे थे, तो कभी पानी में बंसी डाले किनारे पर बैठे मछली के फंसने का इंतजार कर रहे थे।... हर पल उनके कानों में गांव के छोटे-से गिर्जा के घंटे की आवाज गूंज रही थी...।

उडंबर की सारी तरकारी पति की थाली में डालकर तिलु बोली — खाइये।

भीगा गमछा बदन पर लपेटे, खाना खाते-खाते भवानी बोले — ऊंहू, ऊंहू, क्या कर रही हो?

—खाइये ना, आपको अच्छी लगती है।

—मुन्ना ने खा लिया?

—हां, खाकर खेलने चला गया है। ओ निलु, मछली ले आ। पहले हिलसा लोगे या झींगा।

—हिलसा कौन लाया?

—लाता कौन? राजा को कहां से मिलता है? निमाई धीवर और भीम दे गये। दो पैसे की मछलियां लीं। आजकल कौड़ी तो चलती नहीं बाजार में। कहते हैं, तांबे का पैसा दो।

—जमाना बड़ी तेजी से बदल रहा है। अभी तो जाने क्या-क्या देखना पड़ेगा? एक बात सुनी तमने?

—क्या?

तभी निलु ने आकर मछली परोसी और वहीं खड़ी हो गयी। भवानी ने उसे भी बात सुनाने को बिठा लिया। उन्होंने बताया कि वहां चूयाडांगा तक रेल की पटरी बिछा दी गयी थी। और उसी वर्ष अथवा अगले वर्ष तक रेलगाड़ी चलने लगेगी। तिलु दोनों हाथों में मुंह रखे ध्यान से भवानी की बात सुन रही थी। अचानक रसोई में झन्न-ठन्न कोई बर्तन गिरने की आवाज आयी। तिलु लदफद रसोई की तरफ भागी। वहां से उसकी आवाज आयी — निकल यहां से मर जानी....

तिलु ने वहीं बैठे-बैठे गर्दन फिराकर पूछा — क्यों, ले गयी?

—हां। मुन्ना को शाम को खिलाने के लिये मछली तलकर रखी थी, ले गयी उठाकर।

—अब आये तो झाड़ू मारना।

भवानी बोले — वह भी तो भगवान का जीव है। हम लोगों का नहीं खायेगी तो किसका खायेगी? खा ली तो खा ली ए... निलु, आ जाओ। कुछ दिन और जीवित रही तो रेलगाड़ी केवल देखोगी ही नहीं, उसमें बैठकर शान्तिपुर का रास भी देखकर आ सकोगी। रेल की लाइन बिछाने को बहुत से कुली आये हैं, जंगल काट रहे है। रेल की पटरी लोहे की बहुत लंबी-लंबी ईटों जैसी होती है उन्हीं को जोड़ते जाते हैं।

तिलु बोली — हम भी देखने जायेंगे।

—चली जाना, पर खाली लाइन देखने से क्या होगा? अगले साल से जब चलनी शुरू हो जायेगी, तब चढ़कर कहीं हो आना। बोलो कहां जाओगी?

निलु बोली — ज्येष्ठ युगल। दीदी भी चलेगी। सुना नहीं...

जोड़े से देखे ज्येष्ठ मास में।

पतिसह रहे स्वर्गधाम में...

—ओह, बड़ी पतिभक्ति जाग रही है!

—इसमें मजाक की क्या बात है? कंगन पहुंची और लोहा बना रहे बस। मंझली दीदी बड़ी भागवान थी जो सुहागन चली गयी। देखते-देखते कितने दिन हो गये।

तिलु बोली— इनके खाने के वक्त तुझे और कोई बात करने को नहीं मिली? जैसे-जैसे उमर बढ़ती जा रही है दिमाग और भी ठस होता जा रहा है।

बिलु की मृत्यु को यद्यपि चार-पांच साल हो गये थे पर तिलु जानती थी कि आज

भी उसकी बात उठने पर भवानी अनमने हो जाते थे। इसलिए कभी भूले से भी उसका जिक्र नहीं करती थी और खाने के समय तो खास तौर पर नहीं।

तभी घूंघट डाले निस्तारिणी आंगन में आकर व्यस्त स्वर में बोली — ओ दीदी, नन्दोईजी ने खाना खा लिया?

—क्यों, क्या लायी है?

—आमड़े की चटनी, और कचू शाक? कह रहे थे, उन्हें अच्छा लगता है। आज बनाया था, सोचा ले चलूं। खाना खा लिया?

—नहीं, खा रहे हैं, दे जा...

लज्जित स्वर में निस्तारिणी बोली — तुम परस दो दीदी। मुझे शर्म आती है।

—हिश्! उनकी लड़की की उम्र की है, कह रही है शर्म आती है — जा दे आ...

—नहीं दीदी।

—कहा न दे आ।

निस्तारिणी ने आगे बढ़कर बड़े संकोच से तरकारी और चटनी की कटोरियां भवानी की थाली के पास रख दीं। मुंह से तो कुछ नहीं कहा पर आंखों में आग्रह स्पष्ट था। भवानी ने तरकारी चखकर कहा — बहुत अच्छी बनी है। किसने बनायी बहू।

निस्तारिणी गांव की सबसे निराली बहू थी। वह अकेली सड़कों पर घूमती थी, बहुतों के साथ बात करती थी। दुस्साहसी भी कम नहीं थी, जैसे आज भरी दुपहरी में इतनी दूर केवल तरकारी देने चली आयी। लोग बाग कानाफूसी करते थे, उंगली भी उठाते थे, पर वह किसी की, यहां तक कि सास-ससुर की भी परवाह नहीं करती थी। अब तो उम्र भी हो गयी थी। कभी अच्छी खासी सुंदरी रही थी। अब यौवन ढलने लगा था।

भवानी को बड़ा तरस आता था उस पर। बंगाल का वह इलाका तो जैसे नपुंसकों का संसार था — खूबसूरत, बुद्धिमान; शक्तिशाली औरत सृष्टि की कितनी अपूर्व वस्तु है, यह यहां के मूर्ख नपुंसक क्या जानें? बस समाज समाज की रटना रटते हुए सारा जीवन गंवा देते है।

जीवट वाली दो बस दो ही औरतें देखने को मिलीं यहां, एक निस्तारिणी और दूसरी गया मेम।

गया के बारे में रामकनाई कविराज से सुना था उन्होंने। बड़े साहब की मृत्यु के बाद वह प्रतिदिन रामकनाई के पास आकर चैतन्य चरितामृत सुनती थी। किसी को भी दुखी देखती तो कभी चवन्नी, कभी कोई कपड़ा तो कभी एक कटोरा चावल दे देती। कितने ही लोगों ने प्रलोभन दिये, पर किसी के बहकावे में नहीं आयी। अपने मन की शक्ति से हर प्रलोभन को ठुकरा दिया। इस कारण उसकी हालत दिन पर दिन बिगड़ती चली गयी थी। बड़े साहब के मर जाने पर उसकी बिरादरी वालों ने उसका हुक्का-पानी बंद कर दिया था। जबकि एक दिन था वही लोग उसके आगे-पीछे घूमते

थे, खुशामद करते थे, पर उस समय तो उन्हें उसकी जरूरत थी, उसके कहने मात्र से नयी जमीन पर लगाया नील का निशान हटा लिया जाता था अथवा कोठी में घास काटने की नौकरी मिल जाती थी। कापुरुष थे सब।

दिन ढले भवानी खेपी के आश्रम जा पहुंचे। बड़ी खातिर की खेपी ने। भवानी ने पूछा — कैसा चल रहा है?

पास खिसक कर खेपी बोली — सब ठीक है। आज सत्कथा सुनानी पड़ेगी।

भवानी ने हंसकर कहा — असत् कभी कहा है?

—घर पर सब कुशल हैं?

—हूं।

—मुन्ना ठीक है?

—हां, पाठशाला गया है। यहां आना चाहता है।

—अबकी बार ले आइयेगा।

—जरूर लाऊंगा।

—अच्छा आपको क्या लगता है, रूप है या अरूप?

—ये सब बड़ी-बड़ी बातें रहने दो खेपी। मैं एक सामान्य गृहस्थ आदमी हूं। अगर यह सब जानना सुनना चाहती हो तो मेरे गुरु भाई चैतन्य भारती से सुनना।

—अपने पश्चिम-प्रवास की बातें बताइये। बरसात की उस शाम बता रहे थे, बड़ी अच्छी लग रही थीं।

भवानी प्रायः यहां आया करते थे! कुछ ही दिन पहले द्वारिक लुहार ने भक्तों के गांजा सेवन की सुविधा के लिए एक कमरा बनवा दिया था। वहीं के एक और भक्त हाफिज मंडल ने स्वयं दीवालें खड़ी करके छप्पर छाया था, बांस, रस्सी और फूस का सारा खर्च द्वारिक ने उठाया था। रोज शाम को वे लोग वहां इकट्ठा होते थे. गांजे के धुएं से कमरा भर जाता। भवानी के सामने कोई नहीं पीता था।

भवानी बोले — साल के जंगल के बीच से नदी बहती है। ऊपर पहाड़ है जो आंवले और बेल के वृक्षों से भरा हुआ है। मेरे गुरुदेव केवल आंवले, बेल और शरीफे खाते थे। कितने साल बीत गये देखते-देखते, यहीं आये चौदह-पंद्रह साल हो गये। कितना कुछ घट गया मेरे आने के बाद। पर मेरा मन कहता है कि गुरुदेव अभी भी जीवित हैं।

खेपी ने पूछा — क्यों, क्या जीवित नहीं हैं?

—कुछ साल पहले जब मेरे गुरु भाई चैतन्य भारती आये थे तब तो जीवित थे। उसके बाद कोई खबर नहीं मिली।

—मंत्रदाता गुरु हैं?

—ऐसे ही समझ लो। वह मंत्र नहीं देते थे किसी को। उपदेष्टा गुरु थे।

—मेरी उनको देखने जाने की बड़ी इच्छा थी। पर उमर ज्यादा हो गयी है, इतनी दूर पैदल कहां जा सकती हूं?

—पता है, यहां रेल चलने वाली है?

—सुना तो है। पर उसमें हम लोगों को भी चढ़ने देंगे या केवल साहब लोग चढ़ेंगे?

—मेरा तो ख्याल है सभी चढ़ेंगे। पर पैसे देने पड़ेंगे।

—मेरे देवता तो इसी पीपल के पेड़ के नीचे दर्शन दे देते हैं, ठाकुर मोशाय। हम लोग ठहरे गरीब आदमी, पैसे खर्च करके अगर काशी, वृंदावन न जा सकें तो क्या गरीब होने के कारण वह हम लोगों को अपने चरणों में स्थान नहीं देंगे? जरूर देंगे। रूप में भी वह हर जगह विद्यमान हैं और अरूप में भी। इस पेड़ की छाया में मेरे जैसी गरीब की झोपड़ी में बैठकर हमारे साथ गांजा पीते हैं।

—ऐं!

—माफ करियेगा ठाकुर मोशाय। कहना नहीं चाहिये था। ये सब गुह्य बातें हैं। पर केवल आपके सामने मुंह खोला है, और किसी से नहीं कहती।

भवानी मुस्कुरा कर चुप रह गये। किसी के मन का विश्वास कभी नहीं तोड़ना चाहिये। अगर इन लोगों को भगवान का इनके साथ बैठकर गांजा पीने का विश्वास है तो उस विश्वास को तोड़ने वाले वह कौन होते हैं? अल्प बुद्धि मनुष्य विराट को समझने की चेष्टा करने से पहले ही उस अनंत के साथ एक संबंध जोड़ लेता है। असीम की धारणा भले न हो, वह कल्पना भी तो एक रस है। रस उपलब्धि करना नहीं जानता, एकदम व्यग्र होकर उस असीम को क्षुद्र बनाने के लिए सीमा की परिधि में बांध लेता है।

खेपी बोली — नाराज हो गये? आपको जानती हूं ना, इसलिए डर लगता है।

—डर की क्या बात है? जो जैसा चाहे सोचे। इसमें गलत क्या है? मेरे से अगर किसी का मन न मिले तो लडूंगा थोड़े ही? अच्छा अब चलता हूं।

—कुछ फल खा जाइये।

—नहीं, अभी कुछ नहीं खाऊंगा।

तभी द्वारिक लुहार हाथ में एक लौकी लटकाये आ पहुंचा। बोला — लौकी की खट्टी सब्जी बनानी पड़ेगी।

भवानी ने उससे पूछा — क्यों, तुम खाओगे द्वारिक?

विनम्र स्वर में द्वारिक ने उतर दिया — जी, कभी खाता हूं क्या? इनके हाथ का क्या, मैं तो अपनी लड़की के हाथ तक का बना नहीं खाता। भाजनघाट लड़की की ससुराल गया था तो समधिन ने कहा था — लौकी डालकर मूंग की दाल बनायी है, खाओगे? तो भी मैंने माफी मांग ली और अपने हाथ से बनाकर खाया था।

द्वारिक उस इलाके का बड़ा प्रसिद्ध मच्छीमार था। भवानी बोले — तुम तो मछली मारने में बड़े उस्ताद हो, उसकी बात बताओ ना।

द्वारिक ने उसी प्रकार विनीत भाव से कहा — जमाई ठाकुर, क्यों नहीं होऊंगा।

चालीस साल से यही काम कर रहा हूं। इतने साल कोई अगर मन लगाकर एक काम करता रहे तो उसमें उस्ताद तो हो ही जायेगा।

खेपी बोली — इतने दिन अगर भगवान के पीछे लगा रहता तो उन्हें पा जाता। मछली पकड़ने में यह अमूल्य जन्म क्यों वृथा गंवा दिया?

यह सुनकर द्वारिक अत्यंत लज्जित एवं अप्रतिभ हो गया। यह सब बातें उसने कभी सोची ही नहीं। पैंसठ साल की उम्र में यह नयी-नयी बातें सुन रहा था वह। लौकी उसने निरुत्साह भाव से आंगन में आक की झाड़ी के पास रख दी। भवानी को तरस आ गया उस पर। बोले — उसकी क्या कह रही हो खेपी! जो जो कुछ करता है, करने दो। पर उसे अपना काम मन लगाकर सद्भाव से करना चाहिये — किसी को बिना ठगे, किसी के मन को दुखाये बिना। सभी पत्थर अगर शालिग्राम बन जायेंगे तो पीसने वाला पत्थर कहां से आयेगा?

खेपी बोली — मुझसे मूर्खता जरा भी नहीं सही जाती। द्वारिक नाराज मत होना। लौकी कहां है? थोड़ा साग दे दूंगी, मां काली का प्रसाद चखने से तुम्हारी जात नहीं चली जीयेगी।

भवनी के रहने से गांजा न पी पाने के कारण सभी थोड़ा बेचैन रहते थे। हाफिज मंडल आये और तिरछी नजर भवानी पर डाल कर एक ओर चले गये। भाव था, यह आफत कहां से आ गयी, दो चार कश लगाने से भी गये।

खेपी बोली — लीजिये, आ गये आफत के परकाले गांजा पीने को....

—तुम ही तो मार्ग-प्रदर्शन करती हो, नहीं तो उनकी इतनी हिम्मत होती?

—हां, पीती तो मैं भी हूं, उससे मन को एकाग्र करने में आसानी होती है।

इतने में टपाटप बूंदें पड़ने लगीं। भवानी चलने को खड़े हुए, पर सबने मिलकर रोक लिया। सब जाकर बड़े कमरे में बैठ गये और भवानी से महाभारत का शंख-लिखित उपाख्यान सुनाने की जिद करने लगे। भवानी ने सुनाना शुरू किया...

शंख और लिखित दो भाई थे। दोनों ही बड़े तपस्वी थे और अलग-अलग आश्रम स्थापित करके रहते थे। एक दिन छोटा भाई लिखित बड़े भाई के आश्रम में गया। शंख कहीं गये हुए थे। लिखित वहीं बैठकर बड़े भाई की प्रतीक्षा करने लगे। तभी उनकी नजर एक फलों से लदे वृक्ष पर पड़ी। लिखित ने पेड़ से एक पका फल तोड़ा और खाने लगे। कुछ ही देर में शंख आ गये। लिखित ने बातों-बातों में फल तोड़कर खाने की बात कह दी। सुनते ही शंख का चेहरा कठोर हो गया। यह क्या? तपस्वी होकर परस्व का अपहरण? भले ही भाई की चीज थी, पर थी तो पराई, अपनी तो नहीं थी। बिना पूछे किसी की चीज लेने का अर्थ ही चोरी होता है। वह भले ही कितनी भी छोटी वस्तु हो। और किसी तपस्वी के लिये तो महापाप है। ऐसी दुर्बुद्धि कैसे हुई लिखित की?

सशंकित स्वर में लिखित ने कहा — अब क्या होगा भैया?

शंख ने उन्हें राजा के पास जाकर चोरी के अपराध की सजा मांगने का परामर्श दिया। उनका आदेश मानकर लिखित राजा के पास चल दिये और वहां पहुंचकर उनसे अपने अपराध के लिये सजा देने की प्रार्थना की। महाराज आवाक् रह गये। महर्षि लिखित का चोरी का अपराध? सारा वृतांत सुनकर राजा ने हंसकर घटना को मजाक कहकर टालना चाहा। परंतु लिखित अचल, अटल! बोले — महाराज, आप नहीं जानते, मेरे भैया परम ज्ञानी और द्रष्टा हैं। जब उन्होंने मुझे दंड लेने का आदेश दिया है तो आप दया करके मुझे अपराध का उपयुक्त दंड दीजिये। लिखित के अपनी जिद पर अड़े रहने पर राजा ने तत्काल प्रचलित विधान के अनुसार उनके दोनों हाथ काटने का आदेश दिया। दोनों हाथ कटवा कर लिखित भाई के आश्रम लौट गये। भाई की हालत देखकर शंख रो पड़े और उनसे लिपटकर बोले — किस बुरी घड़ी में तू मेरे यहां आया था और एक तुच्छ फल के लिये तेरे मन में लोभ जाग्रत हुआ था।

कुछ ही देर बाद सूर्य को अस्त होते देख शंख ने कहा — चल भाई, संध्या वंदन का समय हो गया।

लिखित ने असहाय भाव से कहा — भैया, मेरे तो हाथ नहीं हैं।

शंख बोले — तुम सत्याश्रयी हो, गलती से एक काम कर बैठे और उसकी सजा भी ले ली। अगर आज सूर्य देवता को तुम अपने हाथों से अंजलि नहीं दे पाये तो दुनिया में सत्य और धर्म नाम की कोई चीज नहीं रहेगी। तुम चलो तो सही।

नर्मदा के जल में अंजलि देते समय लिखित के हाथ ज्यों के त्यों आ गये। दोनों भाई एक दूसरे के गले में हाथ डालकर घर लौटे। शंख ने हंसकर कहा — लिखित, देखूंगा कल तू कितने फल तोड़कर खा सकता है।

द्वारिक ने अभिभूत होकर कहा — वाह-वाह...

हाफिज मंडल भी आहा हा कर उठे।

खेपी तो फफक-फफक कर रो पड़ी।

ऐसा लगा जैसे प्राचीन भारतवर्ष के होमधूमाछन्न आश्रम मूर्तिमान हो उठे हों। महातपस्वी थे वे लोग, जो धर्म और सत्य के लिये अपना सर्वस्व विसर्जित कर देते थे। जैसे रक्तप्लुत शरीर लिखित साक्षात् आंखों के सामने खड़े हों।

द्वारिक को याद आया कि उसने उसी दिन हंसिया बनवाने आये एक ग्राहक से एक आना ठगा था।

हाफिज मंडल को याद आया कि पिछले बुधवार की शाम को उसने कूड़नराम निकारी के बांसों के झुंड से दो पतले लचीले बांस बिना पूछे काटे थे। वह ऐसा प्रायः किया करता था। अब कभी ऐसा नहीं करेगा। आहा-हा कैसे आदमी थे उस जमाने में। और जमाई ठाकुर सुनाते भी कितने अच्छे ढंग से हैं।

खेपी ने एक तश्तरी में दो केले और खीरे का एक टुकड़ा लाकर भवानी के सामने

रखते हुए कहा — थोड़ा-सा प्रसाद ग्रहण कीजिये। भवानी खाते-खाते कहने लगे — भगवान का नियंत्रण मां के नियंत्रण जैसा होता है। दूसरे की गलती तो बर्दाश्त कर ली जाती है, पर अपने बच्चे की हर जिद मां को बर्दाश्त नहीं होती। ऐसे ही भगवान भी हैं। भक्त संतानवत् होने के कारण, उस पर ज्यादा नियंत्रण रखते हैं। यह नियंत्रण प्रेम का होता है, भक्त को पूर्ण जो देखना चाहते है वे। जो इस बात को समझता है उसकी दृष्टि में भगवान के रूद्र रूप में सर्वदा उनका स्नेहमय प्रसन्न वदन ही उपस्थित रहता है।

लौटते समय भवानी ने रास्ते में निस्तारिणी को अकेले अपने घर की तरफ लौटते देखा। उनको देखकर एक पेड़ की आड़ में हो गयी वह। रात हो गयी थी। सोचने लगे, इतनी रात को कहां से आ रही है? तिलु के पास गयी थी क्या? और कहीं तो खास जाती नहीं।

ये भविष्य की नारियां हैं। इनके अलक्तरंजित चरणों की आहट में भविष्य का आगमन सुनायी देता है, जो बहुत कम लोग सुन पाते है। आज ग्राम्य समाज के पूंजीभूत अंधकार में ऐसी तरुणियां अपांक्तेय हैं। प्रत्येक चंडीमंडप में ग्रामीण वृद्ध इनके विरुद्ध फतवे देते हैं, परंतु यही उस अनागत भविष्य की सुवर्ण रेखा है।

सुदूर पश्चिमांचल याद आ गया। वहां व्रजधाम, बिठूर, बाल्मीकि तपोवन में ऐसी साहसी कितनी ही नारियां देखी थीं। बंगाल की नारी का उत्थान कब होगा? घर-घर में कब निस्तारिणी जैसी कन्या और वधू जन्म लेंगी?

रात को तिलु ने बताया — हां जी, निस्तारिणी ने फिर गोलमाल शुरू कर दिया।

—क्या?

—फिर किसी से मिलने-जुलने लगी है।

—गोविंद से?

—ऊं हूं। उसके पीहर का है कोई।

—डरो मत कुछ नहीं होगा। बताया किसने?

—वही कह रही थी। बहुत देर तक मेरे और निलु के साथ बैठी बातें करती रही। मन में नहीं रखती कुछ भी, सब कुछ बता देती है। मुझे उसकी यह बात अच्छी लगती है। पर पहले जो किया सो किया अब तो उमर हो गयी है। मैंने डांटा है आज।

—ज्यादा मत डांटना-फटकारना। जो जैसा ठीक समझे करे।

—एक बात और, जानते हैं आपको बहुत ज्यादा चाहती है।

—मुझे?

—क्यों, ताज्जुब में पड़ गये ना? पुरुष जाति का कोई भरोसा नहीं, कब किस ओर चल दें। सुनिये, सचमुच आप पर बहुत श्रद्धा है उसे। कहती है — दीदी, आपके जैसा पति मिलना कितने भाग की बात है। अगर आपको बूढ़ा कह देती हूं तो नाराज हो जाती है। कहती है — किधर से बूढ़े हैं? नन्दोई जी जैसे आदमी जवानों में भी कितने

हैं, जरा दिखाओ तो?.... और फिर ही ही करके हंसने लगती है। आपको देखने ही आती है यहां। कहीं आप पर दिल तो नहीं आ गया उसका?

—छिः शर्म नहीं आती ऐसी बात कहते? मेरी लड़की की उम्र की तो है।

—वह तो हम भी आपकी लड़कियों की उम्र की हैं। उससे क्या फर्क पड़ता है? जरूर उसका दिल आप पर...

—छोड़ो यह सब फालतू बातें। मुन्ना कहां है?

—जरा देर पहले ही खेलकर आया था। सो गया है किताब पढ़ते-पढ़ते। कह रहा था बाबा के साथ खाऊंगा। पर मैंने कहा कि आपको लौटने में देर हो जायेगी। थाली लगा दूं?

—लगा दो.... पर सोच रहा था संध्या कर लेता। निलु को बुला दो...

नीलमणि समाद्दार मुसीबत में फंस गये थे। संसार अचल हो गया था। चावल का भाव आसमान छू रहा था। एक दीवान राजाराम का बहुत बड़ा सहारा था, सो वह भी चले गये थे। बहुत अच्छे आदमी नहीं थे राजाराम, कूटबुद्धि और साहब के ताबेदार थे और ताबेदारी में ही मारे गये थे। यह बात सभी लोग जानते थे कि वह श्याम बागदी की लड़की कुसुम को बहला-फुसला कर रात को चोरी-छिपे बड़े साहब की भेंट चढ़ाने गये थे। पर बड़े साहब ने उसे वापस भिजवा दिया था, कमरे में घुसने तक नहीं दिया था। राजाराम से कहा था — अब दिन बदल गये हैं, प्रजा में असंतोष फैल रहा है, इस वक्त कोई भी बहाना मिलते ही बिदक जायेंगे, सरकार भी नाराज हो जायेगी, नया मजिस्ट्रेट नीलकर साहबों की अच्छी दृष्टि से नहीं देखता। इसे वापस ले जाओ। किसने लाने को कहा था तुमसे?

अपना-सा मुंह लेकर चले आये थे राजाराम। लेकिन कुसुम ने यह बात अपने घरवालों को बता दी थी। यह बात पता लगते ही बागदी और कहार आगबबूला हो गये थे और यह जग जाहिर था कि उन्हीं लोगों ने उन्हें मारा था। बड़े साहब साफ बच ही नहीं गये थे, वरन् जनसाधारण की श्रद्धा के पात्र भी बन गये थे।

ये बातें तो भूत की थीं। अब जो प्रश्न नीलमणि के सामने था, वह यह कि घर कैसे चलायें। पत्नी अन्नाकाली सुबह शाम घर में अनाज का दाना न होने का रोना रोती थी। वह तो बस कह कर छुट्टी पा लेती थी, पर नीलमणि को कोई कुल-किनारा नहीं दिखायी देता था।

दोपहर के बाद नीलमणि कनसोना गांव कोठी के दंगे में निहत रामू बागदी के घर पहुंचे। रामू बागदी का लड़का हारू कटहल के पेड़ के नीचे बैठा सन की रस्सी बट रहा था। आजकल हारू की माली हालत अच्छी थी। घर में धान के दो कोठे और धान के भूसे का ढेर था।

हारू ने झट से उठकर नीलमणि का स्वागत किया। हारू को देखकर नीलमणि की

जान में जान आयी, डूबते को किनारा मिल गया जैसे। बोले — बेटा हारू, जरा चिलम तो पिला।

हारू ने चिलम भरकर केले के पत्ते में लपेटी और दोनों हाथों से आदरपूर्वक नीलमणि की ओर बढ़ा दी। फिर पूछा — इधर कहां आये थे?

इतनी देर में नीलमणि ने मन ही मन योजना बना ली थी। बोले — तुम्हारे पास ही आया था।

—क्यों?

—कल रात तुम्हारे लड़के के बारे में एक बड़ा बुरा सपना देखा था, नारायण है घर पर? बुला उसे।

जरा देर बाद नारियल के खोल वाले हुक्के का कश लगाते हुए नारायण आया। दीवान राजाराम का खून करने के आयोजन में यह नारायण ही प्रधान पंडा था।

लंबा-चौड़ा जवान था नारायण। चार-छह तो उसके अकेले के सामने ठहरने की हिम्मत नहीं करते थे। अपने गांव का मुखिया था।

नीलमणि बोले — आओ नारायण। एक खराब स्वप्न देखने के कारण तुम लोगों के पास आना पड़ा। तुम लोगों को हमेशा अपना समझा है, सपने में भी पराया नहीं सोचा। सपना हारू के लड़के बादल के संबंध में था। देखा....

इतना कहकर नीलमणि जैसे चुप्पी साध गये।

हारू और नारायण ने एक साथ चिंतित स्वर में पूछा — क्या देखा?

—वह सुनने की जरूरत नहीं है। उस पर आज अमावस्या का शुक्रवार है। अरे बेटा! कहा है, तदधं कृषि कर्मणि! सर्वनाश। मेरे रहते ऐसा नहीं हो सकता।

नारायण बुद्धिमान था, हुक्का जमीन पर रखकर, नीलमणि के एकदम निकट खिसककर बोला — तो इसका उपाय क्या है, काका मोशाय?

सिर हिलाकर नीलमणि बोले — अरे, इसीलिये तो आया हूं। तुम लोग पराये तो हो नहीं। हमेशा से अपना समझा है तुम लोगों को। अब आज उसमें व्यतिक्रम तो हो नहीं सकता! ऐसे बाप का बेटा नहीं हूं मैं।

इतना कहकर नीलमणि फिर चुप हो गये। नारायण कह सकता था कि इसमें बाप की बात कहां से आ गयी, पर वह सब कुछ न समझकर उत्कंठा से उसने कहा — तो फिर इसका कोई उपाय करना होगा आपको। हम लोगों की बात छोड़िये, हमने तो न आंख से देखा न कान से सुना। जो करना हो करिये।

नीलमणि बोले — पर बड़ा गंभीर मामला है। षड़ंग मातृसाधन करना पड़ेगा। आज कौन सा वार है? ठहरो। शुक्कर, शनि, रविवार को दोज पड़ेगी। शुक्ल पक्ष की दोज। ठीक हो गया वह तो, अच्छा सोचकर देखता हूं...

नीलमणि जैसे किसी जटिल समस्या के समाधान की चिंता में डूब गये। उन्हें निश्चिंत सोचने का अवकाश देने के ख्याल से दोनों मामा भानजे चुप बैठे रहे।

जरा देर बाद ही नीलमणि का चेहरा चमक उठा। बोले — हो गया। जायेगा कहां?

—क्या काका मोशाय?

—वह कुछ नहीं बताऊंगा। तुम तो बच्चे के सिर से थोड़े उड़द छुआकर मुझे दे दो बस।

हारू अंदर गया और जल्दी से मुट्ठी में उड़द ले आया। नीलमणि ने दोनों हाथों में उड़द लिये और चलने लगे। हारू व नारायण ने एक साथ कहा — यह क्या? चल दिये?

—चलता हूं बस। बुधवार अष्टोत्तरी दशा है। उड़द के इन दानों से षड़ंग होम करना होगा। सांस लेने की फुर्सत नहीं है इस वक्त।

—ठहरिये, काका मोशाय। घर के लिए थोड़ी मूंग की दाल तो लेते जाइये।

—अभी वक्त नहीं है। कल सुबह ताबीज ले आऊं पहले, यह सब उसके बाद। इसी तरह गृहस्थी की गाड़ी खींच रहे थे वह — आज इस गांव में तो कल दूसरे गांव में। पर हमेशा दांव नहीं लगता था। गांव के पास की सड़क पर देखा उन्हीं के गांव का क्षेत्र घोष सिर पर बैंगन का टोकरा रखे खेत से आ रहा था। उनको देखकर टोकरा सिर से उतारकर सड़क किनारे बैठ गया और गमछे से हवा करते हुए बोला — खरगोशों का उपद्रव बहुत बढ़ गया है। दो बीघे जमीन में बस ये बैंगन निकले हैं। समझ में नहीं आता ऐसे कैसे चलेगा। मैं तो आपके पास आने की सोच ही रहा था। अच्छा हुआ आप यहीं मिल गये। कुछ करिये आप ही।

नीलमणि बोले — इसका इंतजाम हो जायेगा। आज दो पहर रात बीतने पर थोड़ी हल्दी लेकर मेरे घर आ जाना। अच्छा हुआ, आज ही अमावस्या है।

—आ जाऊंगा। दो बैंगन ले जाइये?

—जब आओगे, तभी लेते आना, मैं कहां ढोकर ले जाऊंगा।

घर पहुंचे तो बाहर ही अंदर से कुछ लोगों के बोलने की आवाज कानों में पड़ी। कौन होगा? घर के अंदर कौन जा सकता है?

जैसे ही दरवाजा खोला, पुत्रवधू भागी आयी और बोली — बाबूजी...

—क्यों क्या हुआ? कौन बातें कर रहा है अंदर?

—भंडारकोला से अपनी लड़की और जमाई के साथ सरोजिनी बुआ आयी है। दो छोटी नातिने भी हैं। मैंने कहा है — घर में चावल का दाना नहीं है। जो करना हो करिये।

—अच्छा। जाकर कह दो सब ठीक हो जायेगा। नाश्ता पानी दिया उन्हें?

—क्या देते? कुछ है घर में?

—हां.... यह तो भूल ही गया था। अच्छा देखता हूं।

कहकर उल्टे पैरों लौट गये नीलमणि और घर के बाहर आम के पेड़ के नीचे जाकर अधीरता से चहलकदमी करने लगे। सोचने लगे, क्या किया जाये अब? इस सरोजिनी

को भी आज ही आना था। और आने की पड़ी ही क्या थी? आज तक तो कभी खबर तक नहीं ली और अब ऐसा प्यार उमड़ा कि सीधे आ धमकी।

जरा देर बाद ही क्षेत्र घोष आ गया। हाथों में रस्सी से बंधे पांच बैंगन, पक्के केले का गुच्छा और हंडिया में खजूर का गुड़ था। सारी चीजें उन्हें देकर बोला — मेरे अपने पेड़ का गुड़ है। बड़े लड़के ने बनाया है। और यह रही हल्दी।

—यह तो हुआ क्षेत्तर। पर इस वक्त तो दो कठौते चावल की बड़ी सख्त जरूरत थी। घर में रिश्तेदार आ गये हैं और लड़का घर पर नहीं है। कल तो वह अपने साथ दो मन चावल खरीदकर लायेगा। पर अब क्या करूं?

—यह कौन-सी बड़ी बात है? मैं अभी लाये देता हूं।

चावल का इंतजाम हो गया। क्षेत्र जाकर जल्दी से चावल ले आया। नीलमणि उसे वहीं बैठने को कहकर सारा सामान लेकर घर से अंदर गये और आधा घंटे बाद बाहर आकर हल्दी की गांठें क्षेत्र को देते हुए बोले — जाओ, हल्दी की यह गांठें सूत से बाधकर खेत के पूरब की बाड़ में लटका देना। खरगोश खेत में पैर भी नहीं रख सकेंगे। मंत्र पढ़कर लाया हूं।

अगले दिन सुबह बहू ने कहीं से ढूंढ़ ढांढ़कर एक पुराना ताबीज निकाला। उसमें उन्होंने जिउलि वृक्ष के पत्तों के रस में मिट्टी मिला कर भरी और अच्छी तरह सिंदूर पोतकर बेल के पत्ते में लपेटकर कनसोना चल दिये।

हारू और नारायण बड़ी उद्विग्नता से उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। हारू को तो रात को ठीक से नींद भी नहीं आयी थी।

नारायण बोला — मैंने तो घर में किसी से भी कहने के लिये मना कर दिया था। बेकार में रोना-पीटना मच जाता।

नीलमणि ने बेलपत्र में लिपटा ताबीज उसके हाथ में देकर कहा — तुम लड़के के बाबा हो, जाकर उसके गले में बांध दो और इस बेल के पत्ते का रस निकालकर पिला दो। कल रात भर जागकर षड़ंग होम किया है। अरे सोने को तो सारी जिंदगी पड़ी है। अगर अपनों के ही काम नहीं आये तो इस जीवन का क्या लाभ। बड़ा कठिन काम था। पर अब यमराज भी उसे छू नहीं सकते। चलो, बड़ी भारी चिंता दूर हो गयी।

इसके बाद क्या हुआ होगा, उसका अनुमान लगाना मुश्किल नहीं है। हारू का मजदूर गुपे बागदी एक कट्टा चावल और एक टोकरी मूंग की दाल नीलमणि के घर दे आया।

गया मेम सुबह सामने का दालान लीप रही थी। दूर से आते प्रसन्न अमीन पर नजर पड़ी तो गोबर की टोकरी एक ओर खिसकाकर झट से उठ खड़ी हुई और हाथ धोकर पल्ला ठीक कर लिया। पास आकर प्रसन्न बोले — यह क्या हो रहा है? कितनी बार कहा तुम

यह सब मत किया करो गया। देखकर बड़ा कष्ट होता है मुझे। राजरानी होकर गोबर लीप रही हो आज।

गया ने हंसकर कहा — जो हमेशा करना पड़ेगा, वह जितनी जल्दी शुरू कर दिया जाये, अच्छा है।

—अगर तुम्हारी मां आज जिंदा होती तो... ! आनन-फानन चली गयी बिचारी। तभी मरने की उमर थोड़े ही थी उसकी।

—सब तकदीर की बातें हैं काका मोशाय। नहीं तो — यह कहकर गया धरती की ओर देखने लगी।

प्रसन्न ने नजर उठाकर देखा, दो कमरे थे। एक रसोई और दूसरा सोने का कमरा। वरदा बड़ी होशियार औरत थी। कोठी में लड़की के अच्छे प्रभाव के दिनों में रसोई वाले कमरे के कटहल की लकड़ी के दरवाजे खिड़की लगवाकर बड़ा कर लिया था उसने। लगता था गया अब इसी में रहती थी, क्योंकि खिड़की से तख्त पर बिछा बिस्तरा दिखायी दे रहा था। दूसरे कमरे की हालत खराब थी। छप्पर का फूस उड़ गया था। चूहों ने फर्श में बिल बना लिये थे, दीवाल फटने लगी थी।

प्रसन्न ने पूछा — कमरे का यह हाल कैसे हो गया?

—कैसा हाल?

—गिरने वाला हो रहा है।

—गिरेगा, गिर जायेगा। अकेली जान हूं, कितने कमरों में रहूंगी?

प्रसन्न चकत्ति बड़े अपनेपन से बोले — कुछ भी हो ये साहब-वाहब आखिर होते तो परदेसी ही हैं — हमारे सुख-दुख के बारे में क्या जानें? तुम्हारी भी गलती है, उस समय मुंह से मांग क्यों नहीं लिया कुछ? तुम तो चौबीसो घंटों सिरहाने बैठी रहती थी, कुछ तो हथिया लेती।

गया चुप रही, ऐसा लगा जैसे उसकी आंखें छलछला आयी थीं और कंठ अवरुद्ध हो गया था।

प्रसन्न क्षुब्ध स्वर में बोले — तुम्हारे जैसी अबोध लड़की आज के जमाने में मिल सकती है भला कहीं — झाड़ू मारो। नितांत आंतरिक प्रेम होने के कारण ही वह इस तरह आक्रोश प्रकट कर रहे थे, इस बात को गया से अधिक कोई नहीं जानता था, परंतु वह चुप रहने के सिवाय कर भी क्या सकती थी?

तभी जाने कहां से भगीरथ बागदी की मां आ धमकी और अंदर पैर रखते ही बोली — कौन, अमीन बाबू है न? आओ बैठो। आपकी सारी बात सुन ली मैंने। बिल्कुल ठीक कह रहे हो। मैं तो हमेशा गया से यही कहती हूं कि साहब तुझे मेम तो बना गया, और सब कहते भी गया मेम है, पर मेम के लायक दे क्या गया तुझे? मां मर गयी, घर में और कोई है नहीं और न ही हाथ में एक फूटी कौड़ी है, बस कोठी की वह जमीन ही है, जो कुछ है। थोड़ा-बहुत धान हो जाता है तो खाने को नसीब भी हो जाता है, नहीं तो उपवास करना

पड़ता। इधर बाग्दियों ने बिरादरी से निकाल दिया है, तेरे हाथ का कोई खायेगा नहीं। अब कहां जायेगी तू? बचपन में गोद खिलाया है, इसलिये मन को कष्ट होता है। मां भी इसी गम में चली गयी। मुझसे कहा करती थी — दीदी, लड़की में अगर थोड़ी बहुत अकल होती तो आज राजरानी की तरह रहती। पर वह तो नील कोठी से रीते हाथ झुलाती चली आयी।

दोनों के ताने सुनकर गया हताश हो गयी। बोली — मुझे खाने को मिले या न मिले, किसी को क्या मतलब? जो मैंने ठीक समझा, किया।

भगीरथ की मां भन्नाकर उठ खड़ी हुई और जाते-जाते बोली — जी जलता है, इसलिये कहती हूं। तू तो हमेशा की जिद्दी है, मैं क्या जानती नहीं? अरे जब साहब के घर जात गंवायी थी, तभी अपना कुछ ठिकाना भी कर लेती। इसकी मां क्या यों ही रोती रही थी। अरे तेरे हाथ का छुआ पानी भी नहीं पियेगा कोई। बीमार पड़ी तो कोई दो घूंट पानी भी नहीं डालेगा हलक में। आप ही सोचकर देखिये अमीन बाबू, नील कोठी तो दूसरे की हो गयी और साहब परलोक सिधार गये, अब तेरा क्या होगा?

प्रसन्न बोले — वह तो मैंने अच्छी जमीन दे दी थी तो थोड़ा-बहुत चल भी जायेगा, नहीं तो आज खड़े होने की जगह भी नहीं होती। बटाई पर देकर भी पांच बीघे का धान तो मिल ही जायेगा।

भगीरथ की मां बोली — बटाई का नाज लेना भी क्या आसान है बाबू? यह इसका काम है? वह मेमसाहब जो है? अरे कोई धोखा-धड़ी करेगा तो क्या कर लेगी?

भगीरथ की मां बड़बड़ाती हुई चली गयी। गया प्रसन्न की ओर देखकर बोली — काका मोशाय क्या बस झगड़ने आये थे? बैठेंगे या जायेंगे?

—नहीं झगड़ा क्यों करूंगा? तुम्हें देखकर मन में जाने क्या होने लगता है, इसलिये आता हूं।

गया पुराने दिनों की तरह पल्ला मुंह में डालकर हंसने लगी। प्रसन्न ने लक्ष्य किया उसका पहले वाला रूप नहीं रहा गया था, दुख व कष्टों के कारण बड़ी जल्दी ढल गया था। गया ने खजूर के पत्तों की चटाई लाकर बिछा दी बैठने के लिये और पूछा — क्या खायेंगे?

—अब यह क्या?

—क्यों काका मोशाय, छोटी जात हूं इसलिये खाने को दे नहीं सकती क्या? केले हैं, पपीता है — मैं नहीं काटूंगी, आप खुद काट लीजियेगा। सुबह-सुबह घर आकर बिना कुछ खाये जायेंगे क्या?

और फिर सचमुच उसने बड़े-बड़े पक्के केले, साबुत पपीता और आधा नारियल उनके सामने लाकर रख दिया और हंसकर बोली — पानी नहीं दे सकती काका मोशाय।

इसके बाद कमरे की ओर जाती हुई बोली — ठहरिये, एक चीज दिखाती हूं।

—क्या?

—लाती हूं अभी। कहकर अंदर गयी और एक छपी हुई किताब लाकर उनके सामने रखकर बोली — देखिये।

—अरे यह कहां से मिली तुम्हें? तुम्हारे घर किताब? कौन-सी किताब है?

—आप ही देखिये। मैं क्या पढ़ना लिखना जानती हूं?

—लगता है उसी बुड्ढे कविराज ने दी है? पढ़ना तो जानती नहीं, फिर क्यों दी?

—दी तो ले आयी। कृष्ण का शतनाम है।

प्रसन्न किताब देखकर सचमुच विस्मित रह गये। गया के घर छपी हुई किताब! और वह भी कृष्ण का शतमान!

आधा पपीता गया के लिये अलग रख दिया। फिर खाते-खाते बोले — यहां आना बहुत अच्छा लगता है। तुम्हारे पास आकर सारे दुख भूल जाता हूं गया।

—फिर ऊलजलूल बकना शुरू कर दिया। जब जी चाहे आइये, मैंने क्या रोका है?

—सुनकर दिल ठंडा हुआ। इस किताब का क्या करोगी?

—सिरहाने रखकर सोती हूं। अकेली रहती हूं ना। मां थी तो बात और थी। भूत-प्रेत का डर नहीं लगता।

—हां, यह तो ठीक है।

—इधर सारा मुहल्ला दुश्मन बन गया है। साहब जिंदा थे तब सब खुशामद करते थे और अब रात-बिरात बुलाने पर कोई नहीं आता। इसीलिये बाबा ने दी है। कह रहे थे कि सिरहाने रखकर सोने से डर नहीं लगेगा। बड़े भले इंसान है...। आज धान कूटने नहीं गयी तो भूखा रहना पड़ेगा। चावल नहीं है। कोई ढेंकी भी नहीं देता इस मुहल्ले में। उस मुहल्ले में केनाराम सरदार के घर जाऊंगी। अच्छे लोग हैं। आदिवासी हैं, पर इंसानियत है उनमें।

बड़ी देर बाद उठे प्रसन्न। गया को देखकर बड़ा दुख हुआ उन्हें। वहां से चलकर गणेशपुर के मैदान में मदार के पेड़ के नीचे जाकर बैठ गये। धूप तेज हो गयी थी, पर पेड़ के नीचे बड़ी शीतल छाया थी। बैठे-बैठे सोचने लगे — गया बड़ी मुश्किल में पड़ गयी है। आज अगर मेरे पास पैसे होते तो उसे क्या ऐसे रहने देता? दोनों जने कहीं दूर चले जाते। पर अब हिम्मत नहीं होती, उमर भी हो गयी है।

पेड़ के फल पक गये हैं क्या?...

सिर उठाकर ऊपर देखा प्रसन्न ने। नहीं, अभी नहीं पके थे।

शाम के वक्त भवानी भागवत पाठ कर रहे थे। वह जानते थे कि भागवत अत्यंत दुरूह ग्रंथ था, परंतु जैसा अद्भूत उसका कवित्व था, वैसा ही अपूर्व उसका तत्व था। पाठ समाप्त करके जब पोथी बांध रहे थे तो देखा निस्तारिणी अंदर आ रही थी। वह आजकल भवानी से बोलने लगी थी, पर केवल इसी घर में, और कहीं नहीं।

निस्तारिणी पास आकर बोली — क्या हो रहा है नन्दोईजी?

—आओ बहू। अच्छी हो?

—आपका आशीर्वाद है। एक बात कहने आयी थी।

—बोलो, क्या कहना है?

—कविराज मोशाय के घर धर्मकथा होती है, संगीत-कीर्तन होता है, मैं चल सकती हूं? बड़ा मन करता है।

—नहीं बहू। उनका घर गांव के बाहर मैदान में है। वहां कोई नहीं जाता।

—अच्छा अगर दीदी जाये तो?

—तुम्हारी दीदी भी नहीं जाती।

—अगर उसका इंतजाम मैं कर दूं तो?

—वहां जाकर क्या करोगी तुम?

—अच्छा लगता है। इस गांव में तो कोई भी मुंह से दो बात अच्छी नहीं निकालता। वहां कम से कम शास्त्र पढ़ा जाता है, गाना होता है।

—अपनी सास और पति से पूछ लिया?

—वे तो तैयार हो जायेंगे। सास का पता नहीं माने या न माने। बुढ़िया बड़ी घाघ है। पर वह नहीं भी मानेगी, तो भी मैं जाऊंगी।

—यही तो तुम में खराबी है बहू! ऐसा नहीं करते।

—आपके मुंह से शास्त्र पाठ सुनने की बड़ी इच्छा है मेरी।

फिर जरा अभिमान भरे स्वर में बोली — पर आप नहीं चाहते, यह जानती हूं मैं।

—क्या जानती हो?

—यही कि मेरा वहां जाना आपको पसंद नहीं।

—यह कैसे जाना तुमने?

—बस, मुझे पता है।

—अच्छा अगर कभी तुम्हारी दीदी जाये तो तुम भी चलना।

—जो करने को मन चाहे, वह करना क्या खराब है ?

—प्रश्न बड़ा अजीब लगा भवानी को। बोले — तुम्हारी उमर हो गयी है बहू, अब बच्ची नहीं रही तुम। तुम ही सोचो, हर बात मन चाही करनी क्या उचित है? बुरा काम भी तो कर सकती हो।

—पाप होता है?

—होता है।

—तो नहीं करूंगी, जब आप कह रहे हैं तो वही ठीक होगा।

—तुम बुद्धिमती हो, मैं क्या कहूं।

—आप जो भी कहेंगे, मेरे लिये वही मान्य है नन्दोई जी। दूसरे रास्ते पर जाते-जाते

मैं आपके और दीदी के कहने पर लौट आयी। आप जो भी कहेंगे, मन को कष्ट मिले या सुख वही करना होगा। मेरे गुरु हैं आप।

—मैं किसी का गुरु-वुरु नहीं हूं बहू। यह सब बेकार की बातें हैं।

—आप नारियल के साथ भुना चिवड़ा खायेंगे? कल ला दूंगी। नया चिवड़ा कूटा है।

—ले आना।

तभी मुन्ना बाहर से खेलकर आया और मां से बोला — मां नदी में नहाने नहीं चलोगी?

तिलु ने पूछा — तू कहां था अब तक?

—हाबू के घर कबड्डी खेल रहा था। चलो ना, मैं तो इसलिये खेल छोड़ कर आया। आकर अंग्रेजी पढूंगा। पढ़ना आ गया है।

भवानी अपनी दोनों पत्नियों और लड़के के साथ प्रायः शाम को नदी पर जाते थे। सभी नहाते और तैरते थे, फिर भगवान की उपासना करते थे। मुन्ना को नदी में नहाना और उपासना करना इतना अच्छा लगता था कि वह उन लोगों की कभी इच्छा नहीं भी होती तो भी जिद करके ले जाता था। आज चूंकि निस्तारिणी वहां थी इसलिये वह भी साथ गयी।

भवानी किसी तीसरे व्यक्ति को ले जाना पसंद नहीं करते थे, बेचैनी होती थी उन्हें। भगवान की उपासना एक तो एकांत में होती है अथवा सहधर्मी के साथ होती है। पर तिलु के अनुरोध करने पर उन्हें मानना पड़ा।

सब स्नान करके नदी से निकले। अस्त होते सूर्य की लाल आभा परली पार के कांसवन पर पड़ रही था। पक्षी झुंड बनाकर चहचहाते हुए अपने घोंसलों को लौट रहे थे। बड़ा ही मनोहर रमणीय वातावरण था।

भवानी बोले — बहू, इनकी तरह हाथ जोड़कर मन में अथवा प्रकट में जो कहूं बोलो, नहीं तो केवल सुनती जाओ।

"ओं यो देवा अग्नौ यो अप्सु, यो विश्वं भुवनं आविवेश।
यः औषधिषु यो वनस्पतिषु देवाय तस्मै नमोनमः
"जो अग्नि में हैं, जल में है
सुशोभित क्षितितल पर हैं
तृण, तरू, फूल, फल में हैं
उनको नमन है।
जो अंदर में हैं, बाहर है
जो हर कण में हैं
उन्हें नमन है।

फिर भवानी ने मुन्ना की ओर देखकर पूछा — मुन्ना, इस विश्व की किसने सृष्टि की?

—भगवान ने। रटे रटाये स्वर में मुन्ना ने कहा...

—वह कहां रहते हैं?

—हर जगह, बाबा।

—आकाश में भी।

—हर जगह।

—बात करते हैं?

—हां बाबा।

—तुम्हारे साथ भी करेंगे?

—हां। मेरे बिना वे कुछ भी नहीं हैं।

ये सब बातें उसे भवानी ने ही सिखायी थीं।

वह जानते थे कि लड़के को और कोई सम्पत्ति नहीं दे पायेंगे वह। बुढ़ापा आ गया था, इस लड़के को नाबालिग छोड़कर ही उन्हें महाप्रस्थान करना पड़ेगा। जो चीज उसे दे जायेंगे, उसी को आज का यह अबोध बालक अपने उत्तर जीवन के आलोक में एक दिन पितृदत्त अमूल्य सम्पदा समझेगा।

ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास व उसके प्रति गंभीर अनुराग से अधिक मूल्यवान सम्पत्ति के बारे में उन्हें कोई ज्ञान नहीं था।

इसके लिये विशेष बुद्धि लड़ाने की जरूरत नहीं पड़ती। सहज पथ पर सहजता से चलकर ही इस सहज के पास पहुंचा जा सकता है। दिन पर दिन इस इछामती के तीर पर बैठकर उन्होंने इस सत्य की उपलब्धि की थी। सांझ के समय जब आलोक की अंतिम किरण भी विलीन हो जाती, सर पर आकाश में तारे चमक उठते, दूर बांसवन में उल्लू बोलने लगता, तब कितनी ही बार आनंद व अनुभूति के पथ से आकर मन की गहन गंभीरता में इस सत्य को प्रवेश करते देखा था उन्होंने चिर पुरातन, चिर नवीन सत्य। वह समझ पाये थे कि भगवान का वास्तविक तत्व केवल स्वरूप में सीमित नहीं है, स्वरूप और लीला-विलास दोनों मिलकर ही भगवद तत्व है। एक के बिना दूसरा पूर्ण नहीं है। यह शिशु, यह नदी तीर उसी का अंश है, उससे पृथक नहीं है।

निस्तारिणी मुग्ध हो गयी। बुद्धि तो थी उसमें पर गृहस्थी में पकाने-खाने के अलावा ज्ञान की कोई बात कभी सुनी नहीं थी। तिलु से बोली — दीदी, मैं रोज आ सकती हूं?

—क्यों नहीं आ सकती?

—नन्दोईजी आने देंगे?

—नहीं, अभी मारेंगे तुझे?

—मुझे बड़ा अच्छा लगा आज। यहां कौन ये सब बातें सुनायेगा? मेरे लिये तो खाली झाड़ू और लात हैं बस। सुबह से शाम तक सास की जली कटी। उस पर भरपेट खाने को नहीं मिलता। मानती हूं पाप किया है। तब अकल नहीं थी। लेकिन जो किया

है उसके लिये भगवान के सामने अपने को दोषी मानती हूं। आप लोग जो चाहे सजा दीजिये।

—वह सब बातें छोड़। तेरा जब जी चाहे, आ जाया कर।

—नन्दोईजी देवता तुल्य इंसान है। इस तरफ ऐसा आदमी नहीं मिलता। मेरा बड़ा सौभाग्य है जो तुम लोगों का संग मिला। एक दिन नन्दोईजी को घर बुलाकर खिलाने की बड़ी इच्छा होती है।

—तो खिला देना, इसमें क्या है?

—मेरा घर कैसा है, तुम तो जानती ही हो सब। लुका-छिपा कर कभी-कभी थोड़ी सब्जी ले आती हूं। घर वालों को पता चल जाये तो जीना दूभर कर दें।

—साथ में मुझे या निलु को बुला लेना, फिर कोई बात नहीं बनायेगा।

वह लोग घर की तरफ चलने को मुड़े तभी रामकनाई कविराज उस ओर आते दिखायी दिये। किसी गांव से मरीज देखकर लौट रहे थे। नंगे पैर, घुटनों तक धूल चढ़ी हुई और बगल में जड़ी-बूटियों की पोटली। तिलु के चरणस्पर्श करते ही निस्तारिणी ने भी उनके पैर छूकर प्रणाम किया। रामकनाई संकुचित होकर बोले — यह क्या कर रही हो दीदी? यह सब मत किया करो। बड़ी शर्म आती है मुझे। चलो सब लोग मेरी झोंपड़ी में चलो।

रामकनाई चरपाड़ा में रहते थे, इस गांव का उत्तर का बड़ा मैदान पार करके चरपाड़ा का मैदान था। तिलु ने निस्तारिणी को कहा — हम लोग चरपाड़ा के मैदान जा रहे हैं, तू घर लौट जा।

—मैं भी चलूंगी।

—घर पर कोई नाराज तो नहीं होगा?

—होगा तो हो लेगा। मैं तो जरूर चलूंगी।

—चलो, पर पहले ही बताये दे रही हूं कि लौटने में बहुत रात हो जायेगी।

—तुम लोगों के साथ जाने से कोई कुछ नहीं कहेगा। और कहेगा तो कहता रहे, मेरे ठेंगे से।

रामकनाई के घर पहुंचकर सब चटाई पर बैठ गये। रामकनाई ने दीप जलाकर हाथ-पैर धोये और संध्या वंदना की। फिर बोले — कुछ तो खाना होगा — बस भुने चावल! और कुछ तो है नहीं।

सामान्य जलपान के पश्चात् रामकनाई ने चैतन्य चरितामृत का एक अध्याय पढ़ा। भवानी ने गीता पाठ किया। चौकी पर एक हाथ की लिखी पोथी रखी देखकर भवानी ने पूछा — वह क्या है? भागवत्?

—नहीं माधवनिदान है। मेरे गुरुदेव की स्वयं अपने हाथ से नकल की हुई पोथी। जो आयुर्वेद पढ़ना चाहता है उसे सबसे पहले माधवनिदान पढ़ना पड़ता है। विजयरक्षित कृत टीका समेत है यह। आजकल विजयरक्षित की टीका दुष्प्राप्य हो

गयी है।अपने शिष्य निमाई को पढ़ाता हूं। इधर कई दिनों से आ नहीं रहा, बुखार में पड़ा है।

यह कहकर रामकनाई ने भवानी के सामने पोथी खोलकर रख दी। मोती जैसे अक्षर पचास-साठ साल पहले के पुराने कागज पर अभी भी चमचमा रहे थे। अंत में पुराने जमाने का श्यामा संगीत था। ये भजन शायद गुरुदेव महानंद कविराज ने स्वयं लिखे थे। भवानी के अनुरोध पर रामकनाई ने उसमें से एक भजन अपने भारी बेसुरे कंठ से सुनाया।

तत्पश्चात् भवानी ने भी कवि दाशरथि का एक भजन गाया। रामकनाई को बड़ा अच्छा लगा। उत्साहित होकर भवानी ने तिलु से भी कवि दाशरथि का एक और भजन गवाया।

तिलु का कंठ बुरा नहीं था। रामकनाई बोले — बड़ा अच्छा लिखते हैं दाशरथि राय। कहां है इनका घर? ऐसा अनुप्रास, ऐसे भाव पहले कभी नहीं सुने... वाह-वाह... मुझे लिख दीजियेगा गाना? ईश्वर प्रदत्त क्षमता के बिना ऐसा गीत नहीं लिखा जा सकता। आहा-हा!

भवानी बोले — वर्धमान के पास कहीं रहते हैं। पिछले साल उलो के बाबुओं के घर पांचाली गाने आये थे, वहीं यह भजन सुना था। बहुत अच्छा लगा, इसलिये मुन्ने की मां को सिखा दिया।

और दो तीन भजन गाने के बाद सब उज्ज्वल चंद्रालोक में पांच पोता गांव की ओर चल दिये। चरपाड़ा का मैदान चांदनी से भरा हुआ था, खाड़ी का पानी झिलमिल कर रहा था। खाड़ी की ओर उंगली उठाकर भवानी बोले — वह देखो, तिलु, जब तुम्हारे भैया नीलकोठी के दीवान थे, उस समय इसी खाड़ी के बंद के दंगे में उन्होंने कोठी के लठैतों से रामू का खून कराया था।

सहसा मैदान के बीच से एक आदमी को जल्दी-जल्दी अपनी ओर आते देखकर निस्तारिणी बोली — दीदी, देखो तो कौन आ रहा है?

भवानी बोले — बड़ा निर्जन स्थान है। सब यहीं रुक जाओ।

आदमी के हाथ में लाठी थी। उसके रंग-ढंग देखकर सब के सब सहम गये। जब वह एकदम निकट आ गया तो निस्तारिणी एकदम से बोली — दीदी, मुन्ने का हाथ पकड़ लो.... नन्दोईजी आगे मत बढ़ना।

जब एकदम सामने आकर खड़ा हुआ वह तो उन सबकी शकलें देखकर विस्मय एवं आनंद मिश्रित स्वर में बोला — अरे दीदीमणि? ठाकुर मोशाय? और मुन्ना भी है?

उसे पहचानते ही तिलु के मुंह से निकला — हला भैया? तुम कहां से आ रहे हो?

एकदम कोई जवाब नहीं सूझा हला को। बगलें झांकता हुआ बोला — यहीं चरपाड़ा जा रहा था.... मेला....। अरे, जरा चरणों की धूलि तो लेने दीजिये।

पहले की तुलना में हला की उमर ढल गयी थी, बुड्ढा सा लग रहा था। तिलु ने पूछा — इतने दिन कहां थे हला भैया? कबसे नहीं देखा।

हला ने जवाब दिया — सरकार की जेल में।

—फिर जेल में क्यों?

—हरिपुर के विश्वासों के यहां डाका पड़ा था, थाने का दरोगा मुझे और अघोर को पकड़ ले गया। कहने लगा तुम लोगों ने डाला है।

—तुमने नहीं डाला था? सचमुच नहीं डाला था?

कोई उत्तर नहीं दिया हला ने। पर तिलु कहां छोड़ने वाली थी, बोली — बिल्कुल निर्दोष हो तुम?

—नहीं, डाला था।

—अघोर भैया कहां है?

—जेल में मर गया।

—एक बात कहूं?

—क्या?

—आज इस मैदान में लाठी लिये किस इरादे से हमारी तरफ आ रहे थे? सच-सच कहना? अगर हमारी जगह कोई और लोग होते तो?

हला चुप।

तिलु ने नम्र स्वर में पुकारा — हला भैया।

—हां दीदी?

—चलो हमारे साथ।

यह सुनकर हला परेशान हो उठा जैसे, बोला — नहीं, अब इस वक्त नही चलूंगा दीदी। मैं तुम्हारे चरणों की धूल लेने लायक नहीं हूं, मर जाने पर याद तो करोगी मुझे?

फिर मुन्ना के पास आकर बोला — अरे, मेरा राजा मुन्ना तो इतना बड़ा हो गया? पहचाना भी नहीं जाता। जीते रहो, बड़ी उमर हो, बाप की तरह खूब पढ़ो — यह कहते हुए उसे वक्ष से लगाकर प्यार किया और फिर बिना एक शब्द मुंह से निकाले व किसी की ओर देखे लंबे-लंबे डग भरता मैदान में अदृश्य हो गया। मुन्ना ने अचरज से पूछा — वो कौन था बाबा? मैंने तो कभी नहीं देखा उसे, फिर मुझे प्यार क्यों कर रहा था?

निस्तारिणी का दिल उस समय भी जोर-जोर से धड़क रहा था। वह सब कुछ समझ गयी थी। सभी समझ गये थे।

सब पुनः घर की ओर चल दिये। दूर आम्रवृक्ष पर कठफोड़वा की ठक-ठक सुनायी दे रही थी। झाड़ियों में रह-रह कर जुगनू चमक उठते थे। बड़े सेमल के पेड़ पर चमगादड़ पंख फड़फड़ा रहे थे। भवानी चुपचाप चलते हुए कुछ और ही सोच रहे थे — यह हला, बुरा आदमी है, खून लूटमार, राहजनी करता फिरता है, पर इसमें भी तो वही है। कौन है हला? यह बुरा है? निस्तारिणी बुरी है? इसका फैसला कौन करेगा? यह फैसला करने का अधिकार किसे है? एक महा रहस्यमय, महा चैतन्यमय शक्ति

सबसे अलक्ष्य, सबसे अज्ञात, सबको चलाती ले जा रही है। किसी को जबरदस्ती किसी रस्ते नहीं घसीटेंगे, अपने-अपने स्वाभाविक पथ पर ही अपनी असीम दया से चलाकर लक्ष्य की ओर ले जायेंगे। चाहे हला हो अथवा निस्तारिणी, किसी की अवहेलना नहीं करेंगे।

दीवान हरकाली सुर नाल मोहन पाल की गद्दी पर बैठे हुए नीलकोठी की फसल का हिसाब दे रहे थे। दोपहर बीत गयी थी। नाल मोहन पाल बोले — खेत खलिहान का हिसाब शाम को नहीं देखा जा सकता दीवान मोशाय? बहुत देर हो गयी है। आप कहां खायेंगे?

—कोठी पर।

—पकायेगा कौन?

—नरहरि पेशकार। खाना अच्छा पकाता है।

बातों-बातों में नाल मोहन ने कहा — हां, मेरी पत्नी और बहन एक दिन कोठी देखना चाहती हैं, उन्होंने अंदर से कभी देखी नहीं है।

—ठीक है, कल ही भेज दीजिये। मैं सारा इंतजाम कर दूंगा। कैसे जायेंगी?

—बैलगाड़ी से।

—क्यों कोठी की पालकी है, अभी जाकर भेज दूंगा।

दो साल पहले बेंगाल इंडिगो कम्पनी ने मुल्लाहाटि की नील कोठी अपने कार्यवाहक मैनेजर इनिस साहब की मध्यस्थता से नालू मोहन पाल को साढ़े ग्यारह हजार रुपये में बेच दी थी। शिप्टन की मृत्यु के बाद इनिस साहब ने कोठी चलायी थी, फिर रिपोर्ट भेज दी कि यह कोठी रखना लाभदायक नहीं था। नील कोठी की डेढ़ सौ बीघा जमीन पर आजकल खेती होती थी और कोठी के अहाते की प्रायः तेरह बीघे जमीन पर आम, कटहल, अमरूद आदि के पेड़ लगा दिये गये थे। कहने का मतलब है कि आजकल नील कोठी का मुख्य कार्य खेती बाड़ी था। पुराने कर्मचारियों में दीवान हरकाली सुर और नरहरि पेशकार रह गये थे। वही सारा काम देखते थे। नील कोठी के बंगले सारे साज सामान के साथ उसी तरह रखे हुए थे। रखने के सिवाय चारा भी क्या था? क्योंकि इंडिगो कंपनी ने इनके साथ ही सौदा किया था और पैसे भी रखवा लिये थे। हालांकि इसमें संदेह नहीं कि सौदा पानी के भाव हुआ था। इस गांव गंवई में ऐसे बंगले और शौकीनी सामान खरीदने वाला कहां मिलता? और कहीं और बेचने के लिये ले जाने में अनाप-शनाप खर्चा तो था ही, झंझट भी कम नहीं था। इनिस साहब जाते समय केवल दो बड़ी अलमारियां अवश्य ले गये थे।

दीवान हरकाली सुर ने घर आकर समझाया था — डेढ़ सौ बीघे जमीन है। इसके अलावा मैकनल साहब के जमाने में नाटो के राजा से नवादा का जलाशय इजारे पर ले लिया गया था, भारी जलकर मिलता है। आंख बंद करके कोठी खरीद लीजिये पाल

मोशाय। नीलकोठी सोचकर नहीं जमींदारी समझकर ले लीजिये। देखभाल तो हम कर लेंगे, आप तो बस मुनाफे के रुपये गिनवा लिया करियेगा हमसे।

—ठीक है, ले लूंगा।

इस प्रकार कोठी खरीदी गयी थी। खरीदते समय इनिस साहब ने थोड़ा गोलमाल किया था, दो घोड़ा गाड़ी और उसके दो जोड़ी घोड़े नहीं देना चाहते थे। इस पर नाल मोहन ने आपत्ति उठायी थी, अंत में थोड़ा रुपया और देना पड़ा था। कोठी खरीदने के बाद रायगंज के गोसांई बाबुओं को घोड़े और गाड़ियां हजार रुपये में बेच दी थीं।

कोठी लेने के बाद एक दिन तुलसी ने कहा था — दीवानजी से कहो न कि साहब की टमटम गाड़ी यहां भेज दें, एक दिन बैठकर घूमेंगे।

इस पर नाल मोहन ने गंभीर स्वर में कहा था — नहीं बड़ी बहू। बड़े साहब उस टमटम में बैठकर जब घूमने निकलते थे तो हम लोग सिर पर गठरी उठाये भागकर धान के खेतों में छुप जाते थे। उसी टमटम में तुम बैठोगी तो जानती हो लोग क्या कहेंगे? कहेंगे, पैसा हो गया है, इसलिये अहंकार आ गया है। दीवान ने मुझसे भी कहा था कि टमटम भेज दूंगा, कोठी आ जाइयेगा। पर मैंने हाथ जोड़कर कहा था — माफ करिये। ऐसी नवाबी बाबू लोगों के लिये ही ठीक है। हम ठहरे व्यापारी, यह सब करने लगे तो व्यापार चूल्हे में चला जायेगा।

अंत में एक दिन छप्पर वाली बैलगाड़ी में बैठकर नाल मोहन की बड़ी लड़की सरस्वती, पत्नी तुलसी और बहन मैना बाल बच्चों के साथ कोठी देखने गयीं। दीवान हरकाली और नरहरि पेशकार ने उन लोगों को घुमा-फिराकर सब दिखाया। सब तरह-तरह के प्रश्न करने लगे—

—दीवान काका, यह कौन-सा कमरा है?

—यहां साहब बैठकर खाना खाते थे, बेटी।

—इस कमरे में इतने बड़े-बड़े झाड़फानूस क्यों लगे हैं?

—नाच के वक्त रोशनी करने के लिये।

—यह क्या है?

—कांच का मग, साहब पानी पीते थे। वह देखो, उसे डिकैंटर कहते हैं, उसमें शराब रखते थे।

तुलसी ने बच्चों से कहा — छूना मत वह सब। उधर मत जाओ, इधर आ जाओ, नहीं तो नहाना पड़ेगा शाम के वक्त।

मैना की लड़की शिवि ने पूछा — दीवान नाना, दीवान नाना, साहबों का नहाने का कमरा भी था न, मुझे दिखाओ।

दीवान जी सबको बड़ा गुसलखाना दिखाने ले गये। वहां बड़ा टब देखकर सब

रामकनाई हंसकर बोले — तो इसका अर्थ यह हुआ कि मुन्ना आपका गुरु है?

—कौन गुरु नहीं है? जिससे भी कुछ सीखने को मिले, वही गुरु है। वे तो सभी में है। एक कविता में है न—

जनक रूप में जन्माता संतान
जनक होकर करता स्तनपान
शिशु रूप में फिर करता स्तनपान...

—किसकी है?

—किसी नये कवि की है यह भी। नाम याद नहीं आ रहा अभी।

—बड़ी अच्छी कविता है। लेकिन बड़ी ऊंची है— अद्वैत वेदांत की। जनसाधारण के लिये नहीं है।

आपने भी खूब कहा। पर सत्य ऊंचा नीचा नहीं होता, सत्य सत्य होता है। मेरे गुरु कहा करते थे, अद्वैतवादी होना इतना आसान नहीं है। प्रकृत अद्वैतवादी जीव के आनंद को अपना आनंद और दुख को अपना दुख समझेगा। जीव के आनंद में विभोर हो जायेगा। सब का शरीर उसका शरीर होता है। और सबकी आत्मा उसकी आत्मा । उस अवस्था में अपना पराया कुछ नहीं रहता। उसके लिये जाग्रत अवस्था में "अतो मम जगत् सर्व" अर्थात् जगत का सब मेरा है, सब ही मैं हूं, होता है और समाधि की अवस्था में" "अथवा न च किंचन" कुछ भी मेरा नहीं है, होता है। समझे कविराज मोशाय?

—बड़ी ऊंची बात है, हजम करना मुश्किल है। पर सुनने में बड़ी अच्छी लगती है। जड़ी-बूटी पीस-पीसकर रोग दूर करता हूं मैं, भला यह वेदांत मेरे किस काम का? और न ही इतनी बुद्धि है। पर तब भी मन को बड़ा सुख मिलता है। आप गरीब की झोंपड़ी में आकर कितना आनंद देते हैं शब्दों में नहीं बता सकता। पर बातों में ऐसा खो गया कि मुन्ना को कुछ खाने को देना भी भूल गया। एक रोगी छेना दे गया था, वही दे दूं थोड़ा-सा। यह कहकर रामकनाई उठे और कटोरी में छेना लाकर मुन्ने को देते हुए बोले — यह लो मुन्ना।

मुन्ना बोला — बाबा नहीं खायेंगे तो मैं भी नहीं खाऊंगा।

ताली बजाते हुए रामकनाई ने कहा — अरे वाह! यह हुई ना बात!

उसी समय गया अंदर आयी। हाथ का केले का गुच्छा सामने रखकर प्रणाम किया उसने और बोली — बाबा के लिये है।

उसे देखकर भवानी को अचंभा हुआ। बोले — यहां आती हो?

गया ने विनम्रता से कहा — कभी-कभी आती हूं। पर आपके दर्शन होंगे, यह नहीं सोचा था।

—इतनी दूर से कैसे आती हो?

—जिस दिन आती हूं, वापस नहीं जाती। यहीं चरपाड़ा में दूर से रिश्ते की बहन के यहां रह जाती हूं।

सहसा उसकी दृष्टि मुन्ना पर पड़ी। उसके निकट जाकर बोली — यह लड़का किनका है? आपका? चांद का टुकड़ा है। अब तो बड़ा हो गया है। लंबी उमर हो।

भवानी ने पूछा — क्या करती हो आजकल?

—क्या करूंगी बाबा। मां के चले जाने से बड़ी मुश्किल हो गयी है। इसीलिये यहां भागी आती हूं। चैतन्य चरितामृत सुनकर मन को शांति मिलती है।

—क्या कह रही हो? ऐसी बात तो ब्राह्मण की लड़की के मुंह से भी नहीं सुनी कभी।

—आपकी दया है बाबा। मां के मर जाने पर संसार बड़ा सूना लगने लगा। फिर अत्यंत संकुचित भाव से अपराधिनी की तरह आहिस्ता से बोली — कच्ची उमर में जो कर बैठी, उसका तो अब कोई प्रतिकार है नहीं। लेकिन अब अपनी गलती जरूर समझ में आती है। आप जैसे लोगों की दया दृष्टि हो जाये तो...

—हम लोग भला कौन हैं? और दया की क्या बात है इसमें? वे तो किसी को भी मझधार में नहीं छोड़ते, तुम तो इंसान हो।

फिर रामकनाई की ओर देखकर बोले — कविराज मोशाय, आप तो भवरोग के कविराज बन बैठे। खुशी हुई देखकर।

रामकनाई ने बड़े सहज भाव से कहा — भवरोग क्या?

—भव रोग माने अज्ञान। अर्थ के पीछे अंधी दौड़। आप जैसों का अभाव तो बहुत थोड़े में मिट जायेगा, पर कुछ लोग हैं जिनके अभाव कभी पूरे नहीं होते। एक ही मां के पेट से जन्मे दो भाइयों में एक गरीब होता है, एक अमीर।

—मेरी बात छोड़िये। मुझमें तो रुपया कमाने की क्षमता ही नहीं है, होती तो मैं भी वही करता।

—नहीं करते। आपका स्वभाव ही भिन्न है। आपने वैषयिक कूटबुद्धि वाले आदमी नहीं देखे इसलिये ऐसा कह रहे हैं। उनकी नजरों के सामने हमेशा पैसा रहता है। वही सब कुछ होता है उनके लिये। समझे?

—यह बात छोड़िये जमाई बाबू। जिसको जो अच्छा लगे। मुझे यह कच्ची झोंपड़ी ही अच्छी लगती है। जिसे नहीं लगती, वह दूसरी चेष्टा करे।

—उन्हें क्या आपसे अधिक सुख या आनंद मिलता है? कभी नहीं। आनंद आत्मा का धर्म है। मन जितना आत्मा के पास जायेगा, उतना ही अधिक आनंद मिलेगा उसे और आत्मा से जितनी दूर विषयों की ओर जायेगा, उतना ही दुख मिलेगा। बाहर कहीं आनंद नहीं है। आनंद शांति का उत्स है, और मनुष्य के अपने अंदर होता है। इस बात को मनुष्य न जानने के कारण उसे बाहर ढूंढता फिरता है, ठीक वैसे ही जैसे कस्तूरी मृग सुगंध के लिये दौड़ता है। उन्हें सुख नहीं मिलता।

—यह वही लोग जानें। मैं क्या कह सकता हूं। मैं तो बस यही जानता हूं कि मुझे इसी में सुख मिलता है।

विस्मित रह गये। शिवि की मर्जी थी कि टब में उतर कर देखे साहब कैसे नहाते थे, पर मुंह से कहने की हिम्मत नहीं पड़ी।

बहुत देर तक लोग छूकर-दबाकर सारा सामान देखते रहे और मन ही मन अचंभा करते रहे कि साहब लोग इतने सामान का क्या करते थे?

रात को थककर चूर होकर आया नालू पश्चिम वाले बड़े कमरे में बिस्तर पर लेटा था। तुलसी ने पान का डब्बा लाकर तकिये के पास रखकर कहा — आज कोठी देख आये।

नालू जरा अनमना-सा था। भाजनघाट की मंडी में ढाई सौ बोरे तमाखू का सौदा किया था। माल अभी तक न पहुंचने के कारण जरा चिंता में पड़ गया था वह। उत्तर न पाकर तुलसी ने पूछा — क्या सोच रहे हो?

—कुछ नहीं।

—काम-काज ठीक चल रहा है?

—ऐसा ही समझ लो।

—आज कोठी देखने गये थे सब।

—क्या देखा?

—बाप रे! कितनी चीजें है! तुमने देखी हैं?

—मैंने? मरने की फुर्सत तो है नहीं मुझे, मैं कोठी देखने जाऊंगा? पागल हुई हो बड़ी बहू! हम व्यवसायी आदमी हैं, यह सब शौक हमारे लिये नहीं हैं। भाजनघाट से अभी तक तमाखू नहीं आया, लेटा-लेटा यही सोच रहा था।

—अच्छा, मेरी एक इच्छा पूरी करोगे?

—उदासीन स्वर में नालू ने पूछा — क्या?

अभिमान भरे स्वर में तुलसी ने कहा — तुम तो नाराज हो गये? जाओ, नहीं कहती।

—अब बोलो भी।

—नहीं।

—अच्छा, रानी बहन मेरी, बोलो ना....

—हाय राम! क्या होगा मेरा! तीन चौथाई बीत गयी, एक चौथाई रह गयी, और बोलने का ढंग देखो! क्या कह रहे हो, कुछ तो सोच समझकर कहो। धंधा करके रुपये कमाना ही सीखा है, बोलना नहीं सीखा? बीबी को भी कोई बहन कहता है?

बड़ा लज्जित हो गया नालू। उसका ध्यान सचमुच कहीं और था, बोला — क्या करना है बोलो बड़ी बहू।

—जुरमाना देना पड़ेगा।

—कितना?

—मेरी एक ख्वाहिश पूरी करनी पड़ेगी। बोलो करोगे?

—क्या?

—सर्दियां आ रही हैं, कातिक की संक्रात के दिन गांव के सारे गरीब-दुखियों को एक-एक रजाई और ब्राह्मणों को बनात दूंगी।

—गरीबों को रजाई दे दी जायेगी, पर ब्राह्मण तुम्हारा दान नहीं लेंगे। तुम अपने गांव के ब्राह्मणों को नहीं जानतीं? ठीक है, पहले मैं एस्टीमेट लगा लूं कि कितना खर्च होगा? फिर कलकत्ते से माल मंगाने के लिये आदमी भेजना पड़ेगा।

—एक बात और है।

—क्या?

—दीवानजी ने एक बुड्ढे ब्राह्मण को कोठी की नौकरी से निकाल दिया है। उसका नाम प्रसन्न चकत्ति है।

तुम्हारे पास आया होगा सिफारिश लेकर? यह बात अच्छी नहीं है बड़ी बहू। कोठी के काम के बारे में मुझे जरा भी जानकारी नहीं है। काम नहीं होगा, इसलिये जवाब दे दिया होगा। बिना काम के भी क्या बैठे-बैठे तनख्वाह गिननी पड़ेगी?

—हां पड़ेगी। तुम्हीं बताओ, अब इस उमर में कहां जायेंगे वे? कौन नौकरी देगा?

जरा गुस्से से नालू बोला — नासमझ हो तुम तो, इन सब बातों में पड़ती ही क्यों हो? काम के बारे में क्या समझती हो तुम? पैसे को बच्चों का खेल समझा है? कि मुंह से निकला और हो गया। आया ही क्यों वह तुम्हारे पास? धूर्त्त बामन!

जरा भी उत्तेजित नहीं हुई तुलसी। धीरे से बोली — देखो, एक बात कहती हूं। यह ऐसी-वैसी बात मुंह पर मत लाया करो। आज दो पैसे हो गये हैं तो इतना फुलफुलाओ मत।

—क्या फुलफुला रहा हूं मैं? मैंने तुमसे यहीं तो कहा कि नीलकोठी के काम के बारे में मैं कुछ नहीं जानता। दीवान जी जो करते हैं, उसके ऊपर मेरा या तुम्हारा कुछ कहना उचित है क्या? तुम औरत हो, यह सब बातें क्या समझो। काम की यही रीत है।

—ठीक है, काम दो या न दो, पर आदमी के लिये उल्टी-सीधी तो मुंह से मत निकालो। लोग सुनेंगे तो कहेंगे कि आज पैसा हो गया है तो फूलकर कुप्पा हो गये हैं। इतना घमंड! छि....

कहकर तुलसी गुस्से से उठकर चली गयी।

दो साल हो गये इस बात को। प्रसन्न चकत्ति जाने कहां चले गये, करते भी क्या? मालिक का खर्च कम करने के लिए हरकाली ने नौकरों की छंटनी कर दी थी। सब तितर-बितर हो गये। साइस भजा और बेयरा श्रीराम खेती-बाड़ी करने लगे। सावन में एक दिन मुल्लाहाटि की हाट से लौट रहे थे दोनों। अंधेरे में सांप काटने से एक मर गया।

नीलकोठी के बड़े साहब के बंगले के सामने धान का खलिहान बन गया था। धान झाड़ा जाता था, भूसा इकट्ठा किया जाता था। जिस बड़े बरांडे में बैठकर साहब लोग छोटी हाजरी खाते थे वहां धान झाड़ने वाले मजदूर बैठकर चिलम पीते, बतियाते थे।

संध्या होने पर भवानी मुन्ना को लेकर रामकनाई के घर गये। मुन्ना उन्हें पल भर को नहीं छोड़ना चाहता था, जहां जाते साथ जाता।

दोनों को देखकर खुश हो गये रामकनाई। बड़े प्यार से चटाई पर बिठाया दोनों को।

भवानी और मुन्ना को उनकी वह छोटी सी कच्ची झोंपड़ी बहुत ही अच्छी लगती थी। साफ-सुथरी, न पलंग-खाट, न कोई सामान। बस दीवाल के आले में भगवान की तस्वीर, जिस पर फूल सजे रहते थे। फर्श पर चटाई बिछी रहती थी और कागज किताबें पास ही रखे रहते थे। दो तीन बेंत के पिटारे-पिटारी थे, जिनमें उनकी कोई निजी सम्पत्ति न होकर जड़ी-बूटियां भरी हुई थीं। जब वह तन्मय होकर चैतन्य चरितामृत का पाठ करते तो भवानी की आंखों के सामने उनके संन्यासी जीवन का एक चित्र उभर आता — नर्मदा के तीर पर एक छोटी-सी पहाड़ी पर उनके एक परिचित संन्यासी का आश्रम था। संन्यासी का नाम स्वामी कैवल्यानंद था, पुरी सम्प्रदाय के श्री श्री 108 माधवानंद पुरी के शिष्य थे। ऊपर की कुटिया में वह अकेले रहते थे। नीचे एक लंबी सी छप्पर छायी झोंपड़ी में उनके दो-तीन शिष्य रहते थे। एक गाय भी पाल रखी थी उन लोगों ने।

साधु की कुटिया के चारों ओर की बाढ़ पर खुशबू वाले फूलों की बेल चढ़ी हुई थी, बड़ी अच्छी सुगंध आती थी। नीम के पेड़ पर बैठा जंगली तोता बोलता रहता था। नर्मदा के दूसरे किनारे की महादेव शैल श्रेणी की वनस्थली से झरने की कलकल ध्वनि वायुमंडल में गूंजती रहती। नीचे की कुटिया से रात को तिलक कामोद के करुण स्वर ऊपर सुनायी देते, अनूप ब्रह्मचारी भजन गाते तो कोई-कोई पंक्ति सुनायी दे जाती....

एक घड़ी पल-छिन कल ना परत मोहे।

सुबह उठकर कुटिया के बाहर बैठकर दूर तक देखते रहते थे। अपूर्व छटा और गहन शांति थी चारों ओर। पक्षियों का गुंजार निस्तब्धता को भंग करता रहता, अन्यथा कोई शांति भंग करने नहीं आता था। भगवान के ध्यान में लीन हो जाया करते थे।

कविराज की कुटिया में भी भवानी को उसी शांति का आभास मिलता था। वहां से उठने को जी ही नहीं चाहता था उनका।

वहां बैठे-बैठे मन में एक और बात आती थी, वह यह कि भगवान का मंदिर ऐसी ही पर्णकुटी में होना चाहिये। पत्थर और संगमरमर के बड़े-बड़े मंदिरों में केवल ऐश्वर्य होता है, भगवान नहीं। वहां के पुजारियों में भी लोभ और आसक्ति दिखायी देती थी।

रामकनाई ने पूछा — बांडुज्जे मोशाय, वृंदावन गये हैं आप?

—नहीं।

—इतनी जगह गये, वहां क्यों नहीं गये?

—वृंदावन की लीला मुझे अच्छी नहीं लगती।

—मुझमें इतनी अक्ल तो है नहीं कि आपको समझाऊं, पर संसार के झंझटों में भक्त

भगवान के प्रेम का उपभोग करने की आस नहीं मिटा पाता, इसीलिये एक चिन्मय धाम की बात कही गयी है, जहां केवल भक्त और भगवान के प्रेम की लीला चलती है। यही वृंदावन-लीला है।

—बहुत अच्छी बात कही आपने, पर जिस वृंदावन के बारे में कहा, वह बाहर सर्वत्र है। अगर आंखें खुली हों तो फूल में, पक्षी की चहक में, बच्चे की हंसी में वही दिखायी देंगे।

—पर वह आंखें क्या सबको मिलती हैं?

—इसीलिये तो अंधों की तरह इधर-उधर टटोलते फिरते हैं। जो वेद प्रकृति के तन पर लिखे गये हैं, वही प्राचीन हैं। मुझे लगता है फूल, नदी, आकाश, नक्षत्र, शिशु, यही सबसे बड़े धर्मग्रंथ हैं। इनमें ही उनकी लीला के अधिक दर्शन होते हैं। पत्थर के बनाये मंदिर में क्या होगा, जिसके अंदर वह स्वयं रहते हैं, वही उनका मंदिर है। बाह्य प्रकृति को प्यार करना होगा। प्रकृति की ताल के साथ चलकर उसको प्यार करके उसी की सहायता से उसकी अंतरात्मा उस महान शक्ति के पास पहुंचना होगा।

—इसी को वैष्णव शास्त्रों में कहा है — "जहां-जहां नयन पड़े, वहां-वहां कृष्ण दिखें।"

—बिल्कुल सत्य है। वह केवल एक मंदिर अथवा तीर्थस्थान में थोड़े ही हैं। ऐसा समझने वाला मूर्ख है। "वनस्पतौ भूभृति निर्झरे वा कूले समुद्रस्य सरित् तटे वा" अर्थात् सब जगह हैं वे। सामने होते हुए भी अगर हम आंख खोलकर न देखें तो वह क्या कर सकते हैं। वह शिशु के भेष में आकर हमारे गले से लिपट जाते हैं और हम "माया का बंधन" कहकर भय से दूर भागते हैं। इस दृष्टि से क्या उनके दर्शन हो सकते हैं? उनके हाथों का बंधन ही तो मुक्ति है। मुक्ति-मुक्ति चिल्लाने से क्या होगा?

—अच्छा भगवान क्या हमारा प्रेम चाहते हैं बांडुज्जे मोशाय? आपका क्या ख्याल है?

—हां, आजकल कुछ-कुछ ऐसा लगता है कि भगवान प्रेम चाहते हैं। पहले नहीं समझता था, ज्ञान के ऊपर बहुत जोर देता था। अब ऐसा प्रतीत होता है कि वह मेरे पिता हैं। उन्हीं के वंश में हमारा जन्म हुआ है। वही रक्त हमारी शिराओं में है। वे कभी हमें कुपथ पर नहीं जाने देंगे, पिता की तरह हाथ पकड़कर ले जायेंगे हमें। पिता होकर हमारा अमंगल कैसे चाह सकते हैं वे? ऐसा कभी नहीं हो सकता।

बड़े उत्साह से रामकनाई वाह-वाह कर उठे।

कुछ देर चुप रहे भवानी, जैसे आगे की बात कहने में संकोच हो रहा हो। फिर कह ही बैठे — यह मेरी अपनी अनुभूति है कविराज मोशाय। पर असली बात तो यह है कि दूसरे के मुंह की हजार बातों से अपने मन में खोजे एक कण सत्य का मूल्य बहुत अधिक होता है। स्वयं पिता बनने के बाद भगवान का पितृरूप ज्यादा अच्छी तरह समझ पाया हूं मैं।

मुन्ना बड़ी तन्मयता से यह जटिल वार्तालाप सुन रहा था। उसकी बड़ी-बड़ी आंखों में कौतूहल था, जिज्ञासा थी।

गया को बड़ा अच्छा लग रहा था वह। धीरे से उससे बोली — ए मुन्ना, तुम्हारा नाम क्या है?

—टुलु।

—मेरे साथ चलोगे?

—कहां?

—मेरे घर। पपीता दूंगी खाने को।

—बाबा कहेंगे तो जाऊंगा।

—मैं पूछूंगी तो जरूर जाने देंगे।

—तो ले चलना। तुम्हरा घर क्या बहुत दूर है?

—मेरे साथ चलना।

मुन्ने ने जरा सोचकर कहा — पपीता है?

—हां है। इतना बड़ा — कहकर गया ने दोनों हाथ फैलाकर जो आकृति दिखायी, इससे कद्दू या लौकी तो समझ में आता था, पर पपीता नहीं।

मुन्ना ने पिता से पूछा — ओ बाबा, ओ बाबा, मौसी के घर जाऊं? पपीता देगी।

और पिता की अनुमति की प्रतीक्षा करने लगा वह।

रात को गया वहीं चरपाड़ा में अपनी बहन नीरदा के घर चली गयी। गांव में सब उसे नीरी कहकर बुलाते थे। नीरदा की हालत बहुत अच्छी न होने के कारण गया को देखकर चिंता में पड़ गयी थी वह। समझ नहीं पा रही थी कि क्या खिलायेगी उसे। किसी समय गया का बड़ा नाम था इस इलाके में। उसका दिया खाया भी बहुत था। ऐसा-वैसा थोड़े ही खिलाया जा सकता था उसे। किसी तरह झींगा मछली का झोल और हिलसा के कीमा के साथ महीन चावल का इंतजाम किया नीरदा ने। फिर चटाई बिछाकर ओढ़ने का कथरी दी गया को।

लेकिन गया की आंखों में नींद का नाम नहीं था। बार-बार मुन्ना का चेहरा सामने आ जाता। काश उसके भी एक ऐसा लड़का होता।

आज सब कुछ सूना-सूना था। सब कुछ शेष हो गया था। अगर कोई सहारा होता तो मन में यह भाव नहीं आता। क्या पकड़ कर रहे वह अब?

पिछले कुछ सालों में जो कुछ भी उसके पास था, खत्म हो गया था। बड़े साहब ने बहुत से गहने दिये थे, कुछ मां की बीमारी में बिक गये और बाकी इतने दिनों तक बेच-बेच कर खाती रही।

पुराने दिन जैसे सपना हो गये। लगता है जैसे युग बीत गया। इतने दिनों में वह भलीभांति समझ गयी है इस दुनिया में कोई किसी को नहीं पूछता।

नीरी पास आकर बैठ गयी। तमाखू वाला पान खाकर आयी थी, तमाखू की तेज गंध आ रही थी मुंह से। यह सब सहन नहीं कर पाती थी गया, जी मिचलाने लगा।

—ओ गया दीदी — नीरदा ने पुकारा।

—हूं।

—सो गयी क्या?

—नहीं, गरमी के कारण नींद नहीं आ रही।

नीरी उसकी बगल में ही खजूर की चटाई बिछाकर लेट गयी। पहले तो कभी आती नहीं थी तू, आज आयी तो कुछ खिला भी नहीं पायी तुझे...

यह भी शायद ताना ही था नीरी का। मौका मिलने पर कोई नहीं चूकता।

कुछ क्षण चुप रहकर गया ने धीरे से कहा — एक बात कहनी थी नीरी। मेरा हाथ एकदम खाली हो गया है, तू ही बता कैसे चलाऊं?

नीरी ने सहानुभूति के स्वर में कहा — मैं क्या बताऊं दीदी? धान कूट पायेगी क्या? अगर वह काम कर सके तो अपने पेट को तो हो जायेगा।

—अपना तो कूटती थी, पर औरों का नहीं कूटा कभी। कैसे मिलता है काम?

—मजूरी पर।

—वह कैसे? समझी नहीं मैं।

—अरे मेमसाहब जो हो तुम।

सचमुच गया ने इस तरह के धंधे की बात कभी नहीं सुनी थी। चौदह साल की उम्र से बहुत बड़े वृक्ष के नीचे बड़ी हुई थी वह, बोली — सच नीरी, मेरी समझ में नहीं आया, बताना?

नीरी ही ही करके जोर से हंस पड़ी। उपहास से भरी हंसी गया के कानों में जोर से बजी जैसे। दुखी होकर बोली — इसमें इतना हंसने की क्या बात है? मैं भला झूठ क्यों बोलूंगी नीरी? सचमुच नहीं जानती।

नीरी समझाने बैठी — बड़े परिश्रम का काम है, सबेरे से दोपहर तक ढेंकी चलानी पड़ती है। धान उबालना पड़ता है। उसके लिये ईंधन इकट्ठा करना पड़ता है। चैत के महीने में कुम्हारों वाला बड़ा टोकरा बांस के सूखे पत्ते से भर भरकर लाना पड़ता है, जिससे साल भर चूल्हा जलाया जा सके। चिवड़ा फटकते-फटकते हाथ दर्द से टीसने लगते हैं। यह सब तुझसे नहीं होगा। बुआ ने तुझे दूसरी तरह पाला है। तेरा बुढ़ापा खराब कर गयी। ना तो मेमसाहब बन पायी तू और ना हमारी जैसी रही। तेरी हालत तो धोबी के कुत्ते जैसी हो गयी है, जो न घर का रहता है न घाट का।

कोई जवाब नही दिया गया ने। उसकी अपनी ही तकदीर का दोष था। उन लोगों को मौका मिला है तो कहेंगे ही। अब किसी के सामने अपने दुख का रोना नहीं रोयेगी वह। कोई अपना नहीं है।

नीरी ने पूछा — तमाखू खायेगी?

—नहीं।

— नींद आ रही है?

— हां, थोड़ा सो लूं अब।

—हां भाई, तुम्हारा सुख में पला शरीर है। हमारी तरह रात-रात जगने की आदत होती तो समझती। पूजा-परब के दिनों में रात-रात जगकर धान कूटती हूं, सत्तू पीसती हूं, धान उबालती हूं। नहीं तो ग्राहक यह जा वह जा। रात को थोड़ी देर तो जाग नहीं सकती तुम, मजूरी का धान क्या कूटोगी?

आम औरतों की तरह गया लड़-झगड़ नहीं पाती थी किसी से। नहीं तो अभी नीरी के साथ महायुद्ध शुरू हो जाता। एक बार तो मन में आया कि नीरी को सुना दे पर फिर इतने दिनों के भद्रताबोध ने रोक दिया। सोचने लगी — बेकार चीखने-चिल्लाने से क्या फायदा। जो कहे कहने दो। कौन से मेरे बदन पर घाव हो जायेंगे।

प्रसन्न काका मोशाय बहुत दिन से दिखायी नहीं पड़े थे। नौकरी छूटने के बाद जाने कहां चले गये थे। इस निष्ठुर संसार में एक वही थे जो हमेशा उसका ख्याल रखते थे। पर उस ने उनका भी अनादर किया था एक दिन, अवहेलना की थी। आज उनकी याद आ रही है तो मन हाहाकार कर रहा था। कविराज के यहां अवश्य मन को शांति मिलती है। मन में नई आशा का संचार होता है।

सुबह उठकर तुलसी ने बच्चों को मूड़ी और नारियल के लड्डू खाने को दिये। नौकरानी ने आकर पूछा — मां, गायों का बाड़ा साफ कर दूं, या रहने दूं?

—अभी रहने दे, दूध दुहे बिना, गायों को बाहर निकाले बिना धोने-पोंछने से कोई फायदा नहीं, फिर गंदा हो जायेगा।

मैना को पीहर आये दो महीने हो गये थे। उसका छोटा बड़का बहुत बीमार था, कविराज रामकनाई का इलाज चल रहा था। मैना का विवाह नालू अच्छे घर में नहीं कर पाया था, उन दिनों उसकी हालत बहुत अच्छी नहीं थी। इसलिये मैना को जल्दी-जल्दी बुला लेता था। तुलसी बहुत भली थी, इसलिये कोई दिक्कत नहीं होती थी। यहां तक कि उसे आये अगर कभी ज्यादा दिन हो जाते थे तो पति से तकादा करना शुरू कर देती थी वह — हां जी, घोड़े बेचकर सो रहे हो क्या! मैना बीबीजी कब की गयी हैं, लाना नहीं है उन्हें। मां बाप मर गये तो भाई-भाभी तो जिंदा हैं।

मां मरी तब नालू आढ़ती हो गया था, पर इतना बड़ा जमींदार व महाजन नहीं बना था। मां के यह सब देखे बिना चले जाने का बड़ा दुख है उसके मन में। तुलसी मैना को बुलाकर खूब प्यार से रखती थीं, मां की कमी महसूस नहीं होने देती पर मैना थोड़ी बिगड़ी हुई और झगड़ालू स्वभाव की थी। भाभी को दस ऊंच नीच सुनाने का मौका ढूंढ़ती रहती थी बस। पर तुलसी कभी उत्तेजित नहीं होती, असाधारण सहनशक्ति थी उसमें।

आज भी सुबह-सुबह बिना बात झगड़ बैठी मैना। मूड़ी खाते-खाते अचानक तुलसी की लड़की हाबि ने मैना के छोटे लड़के के मुंह पर चांटा मार दिया। बच्चों का झगड़ा था, लड़ लड़ाकर एक हो जाते, बड़ों को बीच में बोलने की जरूरत नहीं थी, पर लड़के का रोना सुनकर मैना भागी आयी और बोली — किसने मारा केष्टो को?

सब एक साथ बोले — हाबि ने मारा है, मूड़ी पर झगड़ा हुआ था। इतना सुनना था बस, दो थप्पड़ जोर-जोर से हाबि की पीठ पर मारकर मैना ने चिल्लाना शुरू कर दिया — तेरे बहुत हाथ चलने लगे हैं, मेरे बीमार लड़के पर हाथ उठाने लगी है। वह मर जाये तो तुम लोगों को चैन पड़ जायेगा। मां की शह मिले बिना ऐसा थोड़े ही हो सकता है।

तुलसी ने सुना तो वह भी बाहर निकल आयी, बोली — इसमें भला मेरी क्या शह है, बीबीजी? मैं तुम्हारे लड़के को मारने को कहूंगी? क्यों वह क्या मेरा पराया है?

पर मैना चुप होने के बजाय पहले बकती-झकती रही, फिर पागलों की तरह अपने लड़के को दनादन पीटती हुई बोली — मर क्यों नहीं जाता तू? सारी मुसीबतों की जड़ तू ही तो है। तेरे लिये भैया के इतने रुपये खर्च होने की वजह से ही तो सबके मुंह फूले हुए हैं। मर जा तो सबको चैन पड़े...

तुलसी पहले तो अवाक रह गयी यह देखकर, फिर झपटकर उसने लड़के को गोद में उठाकर कहा — पागल हो गयी हो क्या? बीमार लड़के पर क्यों गुस्सा उतार रही हो इस तरह? बेचारे की पीठ लाल हो गयी।

मैना स्वर को और भी चढ़ाकर कहने लगी — हो गयी तो हो जाने दो। इतना दरद दिखाने की जरूरत नहीं हैं, कहते हैं न मां से ज्यादा जिसके दिल में दरद हो, उसे डायन कहते हैं। उतार दो उसे नीचे....

तुलसी बोली — नहीं, नहीं उतारूंगी। मेरी आंखों के सामने तुम बीमार लड़के को नहीं मार सकतीं। यह कहकर लड़के को लेकर अपने कमरे में जाकर अंदर से चिटकनी लगा ली उसने।

दोपहर को नालू घर आया तो तुलसी रसोई में बच्चों को खाना खिला रही थी। भैया को देखकर मैना ने जोर-जोर से रोना शुरू कर दिया। बोली — मुझे मेरी सुसराल भेज दो, बाप के घर की साध मिट गयी। पीहर के दरवाजे तो उसी दिन बंद हो गये जिस दिन मां मरी। दुनिया में भाई-भाभी किसके हुए हैं, जो मेरे होंगे, आदि-आदि।

नालू बोला — क्यों आज क्या हो गया? मर खप कर घर आओ तो यहां भी शांति नहीं। जब देखो रोना-पीटना मचा रहता है।

तुलसी ने न तो पति की बात का जवाब दिया और न कुछ कहा। उठकर तेल-गमछा लायी और नहाने का पानी रखवाकर बोली — नहा कर खाना खा लो।

— नहीं, पहले बताओ, तब नहाऊंगा, खाऊंगा।

—तुम भी नासमझ हो गये हो क्या जी? फिर मैं किसकी तरफ देखूंगी। कह रही हूं ना कि नहा खा लो।

नालू बोला — यह रोज-रोज की अशांति बर्दाश्त नहीं होती। जब तुम दोनों की बनती ही नहीं तो आज ही दोनों को अलग-अलग किये देता हूं।

पर तुलसी में वास्तव में गजब का धीरज था। कहावत है एक चुप सौ को हराये, सो चुप्पी साध गयी। पति के खाने के बाद किसी तरह हाथ-पैर जोड़कर मैना को खिलाया, तब जाकर कहीं तीसरे पहर खुद खाने बैठी।

दिन ढले यतीन की बहन नंदरानी आ गयी। तुलसी ने बैठने को पीढ़ा बिछा कर पान लगाकर खाने को दिया और बोली — आज कैसे याद आ गयी?

नंदरानी ने जरा सकुचाते हुए कहा — अपने ही मतलब से आयी थी भाभी। हाथ बिल्कुल खाली हो गया है, कल सुबह से लड़के को खिलाने को कुछ भी नहीं है। एक रुपया उधार दे सको तो... तुम तो सब कुछ जानती हो भाभी? बाबूजी की इतनी क्षमता नहीं थी कि अच्छे घर में ब्याहते, जो सामने दीखा उसी के गले मढ़ गये। अब वह तो चले गये, मुझे रोज-रोज मरने को छोड़ गये।

तुलसी कभी याचक को विमुख नहीं करती थी। वह भी गरीब घर की लड़की थी, यह भूली नहीं थी वह। बोली — इसमें इतना सकुचाने की क्या बात है, जब जिस चीज की जरूरत हो मुझसे आकर मांग लिया करो। मुझे तो बड़ा अच्छा लगा कि अपना समझकर तुम मेरे पास आयी। एक पान और दूं? तमाखू चलेगा या नहीं? स्वर्ण दीदी अच्छी हैं?

नंदरानी को रुपया देकर तुलसी ने नौकरानी को बुलाया और उसे षष्ठीतला तक छोड़ आने को कहा।

तिलु और निलु इमली कूट रही थीं। चैत के महीने का तीसरा पहर था। खजूर के पत्तों की चटाई बिछाकर निलु इमली कूट रही थी और तिलु बीज निकाल-निकाल कर इकट्ठी कर रही थी।

तिलु ने पूछा — कौन से पेड़ की इमली हैं री?

—पता नहीं दीदी। गोपाल मोची का लड़का तोड़कर दे गया।

—गांग के किनारे के पेड़ की हैं?

—बहुत स्वाद है। खाकर देख लेना।

—तिलु ने एक इमली मुंह में डालकर कहा — हां, उसी पेड़ की हैं।

—जल्दी-जल्दी निपटा दीदी। मुन्ना पाठशाला से आने वाला है। आते ही मुंह में भरेगा।

—इमली साफ करते समय बिलु की बड़ी याद आती है। याद है तीनों इसी तरह बैठकर इमली साफ किया करते थे?

—हुं।

दोनों बहनें चुप हो गयीं। बहुत सी बातें याद आ गयीं। कभी तो लगता है बिलु को मरे युग बीत गये और कभी लगता है जैसे कल की बात है। चैत के महीने की ऐसी दोपहर को बांस के पत्तों की मर्मर और पपीहे की उदास पुकार जैसे पुरानी यादें दिला देती है। मां-बाप के मर जाने पर उन जैसा प्यार देने वाले भैया-भाभी याद आ जाते हैं।

तभी पड़ोस के शरत बांडुज्जे की बहू हेमलता पान चबाते हुए आकर बोली — क्या हो रहा है भाभी? इमली कूट रही हो?

तिलु बोली —यह कितनी है भला। अभी तो दो टोकरी रखी हैं? बैठने को चटाई खींच लो।

—बैठूंगी नहीं, मैं तो पूछने आयी थी कि तिरोदशी क्या आज है? बैंगन खाने चाहिये या नहीं?

—बिल्कुल है। तुम्हारे भैया कह रहे थे, आज आधी रात से तिरोदशी लग जायेगी।

—भैया घर पर हैं?

—नहीं कहीं गये हैं। भैया कैसे हैं?

—ठीक हैं। बुड्ढे आदमी का क्या अच्छा क्या बुरा। खांसी बुखार तो नहीं है अब।

—दुलु कहां है?

—अभी पाठशाला से नहीं आया।

—तुम लोग तो बहुत सारी इमली तैयार कर रही हो। हमारे तो दोनों पेड़ों की इमली बेकार हो गयी इस बार। इतने बड़े-बड़े कीड़े पड़ गये। सावन में अंबल के लिये थोड़ी इमली देना मुझे। तुम्हारे भैया को हिसला मछली वाला अंबल बहुत पसंद है।

शाम हो रही थी। पेड़ की फुनगी पर कोयल बोल रही थी। कहीं से सूखे कुई के अचार की खुशबू आ रही थी। कमरख के पेड़ के नीचे नले नाइयों के दो हलवाहे ढोर चरा रहे थे। दूसरे मुहल्ले के सते चौधरी की पुत्रबधू विराजमोहिनी गमछा कंधे पर डाले सामने से निकली तो निलु ने आवाज लगायी — विराज, ओ विराज....

बांये हाथ से नथ पकड़कर उनकी तरफ मुंह घुमाकर विराज ने पूछा — क्या है?

—ठहर जरा।

—चलोगी छोटी दीदी?

—हां चलूंगी।

विराज का मायका नदेशांतिपुर के पास बाघआंचड़ा गांव में था। अतएव उसकी बोली में यशोर का पुट नहीं था और हमेशा इस बात को जताना चाहती थी। तिलु और निलु घर की कुंडी लगा उसके साथ चल दीं।

इस मुहल्ले में नहाने के केवल दो घाट थे, एक का नाम रायपाड़ा का घाट था और दूसरा साहब घाट कहलाता था। कुछ दूर नदी के मोड़ पर वनसिमतला का घाट था।

मुहल्ले से दूर होने के कारण वहां लड़कियां-बहुएं नहीं जाती थीं, जबकि वही घाट सबसे ज्यादा हरा-भरा और सुंदर था।

तिलु बोली — चल ना, वनसिमतला घाट पर चलें।

विराज बोली — अब इस वक्त?

—है ही कितनी दूर।

—चली तो चलती दीदी, पर सास घर पर नहीं हैं। दाल दलकर आंगन में सुखा गयी थीं, मैं उठाकर लाना भूल गयी। ढोर-डंगर घुसकर खा गये तो मुझे जिंदा नहीं छोड़ेंगी।

निलु बोली — हम कोई बहाना नहीं सुनेंगे, चलना पड़ेगा तुम्हें।

विराज हंसकर आंखें नचाते हुए बोली — क्यों, वहां क्या कोई नागर ताक लगाये बैठा है शायद?

तिलु बोली — अब इस उमर में हमारे लिये कौन सा नागर बैठा रहेगा, यह सब तो तुम लोगों की उमर की बातें हैं, एक घाट पर क्या, तुम्हारे नागर तो हर घाट पर हो सकते हैं।

—हिश! इतना बता दूं कि इस उमर में भी यह रूप देखकर जवानों का सिर घूम जायेगा। चलो, किस घाट पर ले जाना है, ले चलो। नागर की आंखें ठंडी कर आऊं।

लेकिन अंत में रायपाड़ा के घाट पर ही जाना पड़ा उन्हें। रास्ते में और औरतें मिल गयीं, उन्होंने छोड़ा ही नहीं। गरमी के अंत में नदी का ठंडा पानी सबको इतना सुहा रहा था कि कोई भी नदी से बाहर नहीं आना चाह रही थी।

सीतानाथ राय की पुत्रवधू हिमि ने तिलु को पुकार कर कहा — ए ...बड़ीदी, कई दिनों से दिखीं नहीं, कहां थी?

तिलु बोली — इस घाट पर नहीं आती न....

—क्यों? फिर किस घाट पर जाती हैं?

विराज तपाक से बोली — तुम लोग अपने नागरों के बारे में बताती हो जो वह बतायेंगी? मैं तो नहीं बताती।

हिमि बोली — बड़ीदी की उमर मेरी मां के बराबर है, उनसे ऐसी बात मत कहो। यह सब तो तुम्हारे जैसी रूपवती का काम है। उसमें क्या है?

—उसमें उबटना है। बदन पर मैल चढ़ गया था, इसलिये लगाने को ले आयी थी। लगाओगी?

—नहीं। तुम सुंदर हो, तुम्हीं लगाओ यह सब।

सब खिलखिलाकर हंस पड़ी। इतनी तरुणियों की बातचीत और हंसी से घाट मुखर हो उठा। विराज का मन एक ऐसे विचित्र आनंद से भर उठा, जैसे इस संसार में दुख का लेश भी न हो, हर जगह बस उसके रूप की चर्चा हो रही हो, सुहागिनों में उसका आसन सबसे ऊंचा हो। सब हमेशा उसके लिये फेनी-बताशे का थाल सजाये तैयार रहेंगी। उसके लड़के के अन्नप्राशन, जनेऊ अथवा विवाह में पक्षी की पहली पुकार के

साथ अल-सुबह सब शंख बजाती हुई डलिया सजाकर जल भरने निकलेंगी और वह शांतिपुरी साड़ी पहनकर फूलों भरी टोकरी और तेल हल्दी की कांसे की कटोरी लिये झमर-झमर पैरों की झांझर बजाती सुहागिनों के आगे-आगे चलेगी... और भी जाने क्या-क्या याद आकर मन पुलकित हो रहा था।

जीवन में बस केवल सुख हो। आनंद हो। खाना-पीना, मौज मस्ती हो। हंसी ही हंसी हो।

तभी हिमि ने टोका — अरे, यह क्या विराज दीदी, इस कुवेला में डुबकी लगा रही हो? इरादा क्या है?

निलु बोली — और नहीं तो क्या? देखो तो, बाल भिगो लिये, रात को सूखेगा यह बालों का ढेर? तेरी भी क्या अक्ल है?

पर विराज को तो जैसे किसी भी बात की परवाह ही नहीं थी। अपने में विभोर वह बोली — ए... एक गाना गाऊं, सुनोगी? और यह कहकर उसने गाना शुरू कर दिया....

बोलूं तुझसे मन की बात,
सुन री सखि....

हिमि एकदम से बोली — अरी, चुप, कोई आ रहा है.... भारी भरकम लगता है कोई...

इतने में दांतों को मंजन से घिसते हुए निस्तारिणी दिखायी दी। सबने नजर उठाकर उसकी ओर देखा, पर मुंह से कोई नहीं बोली। गांव की औरतों में अधिकतर उससे बोलती नहीं थी। उसके संबंध में जितने मुंह उतनी बातें होती थीं। यद्यपि किसी ने कुछ देखा नहीं थी, इसलिये कुछ कह नहीं सकता था, पर तब भी उसका अकेले घर से निकलना, जिस-तिस से बोलना वगैरह घर-घर की चर्चा बन गया था। इसी कारण उससे बात करने का किसी को साहस नहीं होता था, कि कहीं उसका नाम भी उसके साथ जुड़ जाये।

परंतु गांव में निलु और तिलु के सात खून माफ थे। वैसे भी तिलू किसी के कहे मुताबिक चलने वाली नहीं थी, यह सभी जानते थे। लेकिन तब भी मजे की बात यह थी कि उसके या निलु के बारे में कभी किसी के मुंह से ऐसी-वैसी बात नहीं सुनी गयी थी। ऐसा क्यों था, यह कहना मुश्किल था। तिलु ने निस्तारिणी पर ममतामय दृष्टि डालकर कहा — आ भाई आ। इतनी देर में आयी?

सब पर तिरस्कारपूर्ण दृष्टि डालकर निस्तारिणी ऐसे बोली, जैसे स्वयं से कह रही हो — इमली कूटते-कूटते वक्त का पता ही नहीं चला।

—अच्छा। मैं और निलु भी आज यही काम कर रहे थे। हमसे नाराज हो क्या?

—क्यों? ऐसा कैसे सोच लिया?

—कई दिनों से हमारे यहां आयी नहीं?

—कब आती बीबीजी? सब्जी उबाली, धोयी। चिवड़ा कूटा, धान उबाला, कूटा। सब अकेले ही करना पड़ता है। सास ने आजकल हाथ समेट रखा है!

निस्तारिणी ढलती जवानी में भी अनेकों से अच्छी लगती थी। उसके ओंठ बिचकाकर, हाथ नचाकर बात करने की भंगिमा से हिमि और विराज खिलखिलाकर हंस पड़ीं और साथ-साथ जैसे बांध टूट गया, हर तरफ से हंसी का रोल उठने लगा।

हिमि बोली — निस्तारदी तो बस रोते को भी हंसा दे, ऐसी बातें करती हैं। आओ, पानी में उतरो ना निस्तारदी।

विराज बोली — वो गाना गाओ ना दीदी। निधुबाबू का, वही जो विधु दीदी गाती थीं।

सब जानते थे कि निस्तारिणी बड़ा सुरीला गाती थी। गाने बजाने और हंसी-ठट्ठा में महफिल जमाने में उस जैसी बहू गांव में दूसरी नहीं थी। इसी कारण बहुत-सी तो मुंह फिराकर कहती थीं —औरत का इतना हंसना-बोलना अच्छा नहीं है। जितना निभे वही अच्छा है।

निस्तारिणी ने हाथ हिलाकर गाना शुरू किया—

प्यार क्या ऐसी-वैसी बात सखी,
मन किसी का मिलता मन से
सूखे तरूवर बचती क्या जड़ित लता
प्राण बसे जिसके प्राणों में...

मुग्ध हो गये सब। एक बोली —वाह "नीलवरणी" गाना भी बहुत अच्छा गाती हैं आप।

निस्तारिणी का भी मन पुलकित हो उठा। वह भूल गयी कि सात साल की उमर में उसके पिता ने बहुत सा रुपया लेकर श्रोत्रिय घर में बेच दिया था उसे — बहुत से रुपये — पचहत्तर। सास और लंगड़े पति के साथ कभी तालमेल नहीं बिठा पायी वह, जब कि पति अच्छा ही था। ससुर भजगोविंद सबसे अच्छे थे, हमेशा उसकी इच्छा का ख्याल करते थे। इधर गरीबी ने धर दबोचा था, खाने-पहनने को पूरा नहीं पड़ता था। कभी-कभी तो बच्चों को भी भरपेट खाने को नहीं मिलता था, पर तब भी निस्तारिणी हर हाल में खुश रहती थी। वह जानती थी कि गांव में बहुत से लोग उसे अच्छी दृष्टि से नहीं देखते थे, पर वह किसी भी परवाह नहीं करती थी।

वह पानी में उतरी तो विराज उससे लिपटकर बोली — निस्तार दीदी, कितना सुंदर गाती हो तुम, कितनी सुंदर हो तुम। मैं अगर पुरुष होती तो तुमसे प्रेम करने लगती। चलो एक दिन वनभोज करने चलोगी।

जाने क्यों निस्तारिणी को अचानक वह दिन याद आ गया, जब वह अपने प्रणयी के साथ नदी किनारे झाड़ियों में बैठी थी और भवानी एवं तिलु ने उन्हें देख लिया था।

और फिर एक दुःसाहस का काम कर बैठी वह। तिलु से बोली — दीदी, नन्दोईजी अच्छे हैं?

हालांकि परपुरुष के बारे में सबके सामने बात करने की रीति नहीं थी गांव में, पर उसे सब जानते थे इस कारण अजीब नहीं लगा किसी को।

पूजा आ गयी थी। फणी चकत्ति के चंडीमंडप में गांव के लोगों की सभा बैठी हुई थी। तमाखू के धूएं से दालान में अंधेरा सा हो गया था। ब्राह्मणों के लिये एक ओर चटाई बिछी हुई थी, और दूसरी जाति के लोगों के लिए दूसरी तरफ बोरिया बिछा हुआ था। बीच में जाने-आने का रास्ता था।

नीलमणी समाद्दार बोले — देखते-देखते क्या से क्या हो गया?

फणी चकत्ति बोले — यह सब अचानक बड़े आदमी बन जाने वाले लोगों के कारण हुआ। तुम और हम क्या कर सकते हैं? तुम्हें अच्छा नहीं लगता तो वहां मत जाना। बस बात खतम हो गयी।

श्यामलाल मुखुज्जे बोले — तुम तो नहीं जाओगे, पर जब अबाइपुर के ब्राह्मण आयेंगे तब इज्जत कहां रहेगी?

—क्यों, क्या सुना?

—इस बार दुर्गा उत्सव पर गांव के सारे ब्राह्मण निमंत्रित करेगा।

—स्पर्धा बढ़ गयी है बेटे की। अचानक बड़ा आदमी बन गया है न।

नालू मोहन पाल ने गांव के लोगों की आलोचना समालोचना की परवाह न करके बड़ी धूमधाम से अपने यहां दुर्गा की प्रतिमा की प्रतिष्ठा करायी। उसका निमंत्रण गांव के किसी ब्राह्मण ने स्वीकार नहीं किया। अब तक वह पैसे देकर दूसरे के घर ब्राह्मणभोज कराता रहा था। पर उसके अपने घर ब्राह्मण भोजन कराने की सम्मति पंचों ने नहीं दी। नालू ने स्वयं घर-घर जाकर हाथ जोड़े। इसी प्रश्न पर एक दिन फणी चकत्ति के चंडीमडंप में फुलबेंच का विचार हुआ, पर अंत में उसकी अपील डिसमिस हो गयी।

षष्ठी के दिन तुलसी तिलु-निलु के पास आयी। चौड़े लाल पाड़ की साड़ी, गले में सोने की मटरमाला और हाथों में कंगन पहने थी। घुटने टेककर जमीन से मस्तक लगाकर प्रणाम किया उसने और बोली — देखिये तो दीदी, हमारे ऊपर गांव के ठाकुरों का कैसा अत्याचार हो रहा है?

—हां, सब सुना है।

—कच्ची रसोई तो ठीक है नहीं खायेंगे। मैंने गाय का घी मंगवाया है, पूरी तलकर खिलाऊंगी। आप नन्दोईजी से कहियेगा दीदी। हमेशा तो आप लोगों के यहां होता ही है, मेरे घर में ब्राह्मण जीमें, आप लोगों के चरणों की धूल मेरे घर पड़े, यह क्या मेरी साध नहीं हो सकती? चीनी-पूरी के फलाहार पर क्यों एतराज कर रहे हैं?

भवानी बांडुज्जे अभिज्ञ आदमी थे। तिलु से सब सुनकर बोले — यह मेरे बस की

बात नहीं है। कुलीनों के इस गांव में यह सब नहीं होता। पर अंगरालि, गदाधरपुर और नरसापुर के काफी ब्राह्मण आ जायेंगे, वहां श्रोत्रिय ब्राह्मण ज्यादा हैं। नालू को उन्होंने यही सलाह दी।

नालू ने हाथ जोड़कर कहा — जमाई ठाकुर, आप यह बताइये कि आप आयेंगे या नहीं?

—आऊंगा।

—पक्की बात?

—नहीं तो तुम्हारे यहां क्यों आता?

—बस! और किसी ब्राह्मण देवता की जरूरत नहीं है मुझे, आप और दीदी रहेंगे तो पूरा पुण्य मिल जायेगा मुझे।

—ऐसा नहीं हो सकता नालू। तुम उन गांवों के ब्राह्मणों के पास या तो आदमी भेजो या खुद जाओ। उनकी राय लेना जरूरी है।

अंगरालि से रामहरि चक्रवर्ती और नरसापुर से सातकड़ि घोषाल आये। वही अपने गांव के समाज के मुखिया थे। नालू के साथ संधि की शर्त करने आये थे दोनों।

रामहरि चक्रवर्ती की उम्र पचपन-छप्पन के आस-पास थी। नाटे-काले, चेहरा घनी दाढ़ी मूंछ से भरा हुआ। सिर की मोटी लंबी चुटिया में एक तावीज और दूसरा बांह में। विद्या के नाम पर गांव के उस जमाने के हरू गुरू मोशाय की पाठशाला में पहाड़ों तक पढ़ा था बस। कक्षा में वही चिल्ला-चिल्ला कर बच्चों से पहाड़े बुलवाया करते थे।

सब सुनकर उन्होंने कहा — सातकड़ि भाई भी हैं। पाल मोशाय, आप धनी आदमी हैं, हमें सब मालूम है। आपके घर बाहमन जीमने वाली बात यहां पहले कभी नहीं हुई, पर हम वह भी कर देंगे। क्यों सातकड़ि?

सातकड़ि घोषाल अपेक्षाकृत अल्पवयसी थे। लंबे, पतले, गोरा रंग। चेहरे से ही बड़े निरीह व भले लगते थे, शायद अभावग्रस्त भी थे। सिर हिलाकर बोले — हां, बात तो ऐसी ही है।

—तो तुम क्या कहते हो?

—जैसा आप कहें।

—तो फिर मैं कह दूं?

—कह दीजिये।

नालू की ओर घूमकर रामहरि ने दाहिने हाथ की पांचों उंगलियों फैलाकर दिखाते हुए कहा — हम दोनों को पांच-पांच रुपये देने पड़ेंगे।

—दूंगा।

—ब्राह्मणों को दक्षिणा में एक-एक रुपया देना होगा।

—वह कम करके आठ आने करने होंगे।

—साथ में परोसे की एक-एक हंडिया चीनी, पूरी और नारियल के लड्डूओं की खाने के पहले देनी होगी।

—वह भी दूंगा, पर दक्षिणा आठ आने कर लीजिये।

—हमारे पांच रुपये भी खाने के पहले देने होंगे। इससे कम नहीं लेंगे।

—दूंगा। पर कम से कम सौ ब्राह्मण लाने होंगे। उससे कम आये तो आप लोगों का मान नहीं रख पाऊंगा।

रामहरि चक्रवर्ती ने ताबीज समेत अपनी चुटिया हिलाकर कहा — बिल्कुल लाऊंगा। मेरे अपने परिवार के और सातकड़ि के परिवार के लोग मिलाकर ही आधे से ज्यादा हो जायेंगे।

रामहरि चक्रवर्ती में क्षमता थी, यह मानना पड़ा सबको। ब्राह्मण भोजन के दिन झुंड बनाकर ब्राह्मण आने लगे। बड़े आंगन में लगा शामियाना भी छोटा पड़ा गया। "दीयतां भूज्यतां" वाला मामला हो गया। देखने लायक दृश्य था। उस इलाके में इतना बड़ा और इतनी उच्च श्रेणी के भोज का आयोजन किसी ने नहीं किया था। सबको जी भरकर गरम-गरम पूरियां, मालपुए, चीनी, नारियल के लड और बैकुंठपुर की सोना ग्वालिन का उत्कृष्ट सूखा दही खिलाया गया। सारे ब्राह्मण धन्य-धन्य करने लगे। एक वृद्ध ब्राह्मण बोले — बेटा नालू, इन सब चीजों के नाम बस किताब में ही पढ़े थे, कभी खाने को नहीं मिली थीं। इस गरीब अंचल में कौन खिलाता है? आज तुम्हारे यहां आकर मन प्रसन्न हो गया।

समवेत स्वर में सबने हां में हां मिलायी।

जब दक्षिणा और परोसे की हंडियां लेकर ब्राह्मण चले गये तो रामहरि चक्रवर्ती नालू के सामने आकर बोले — क्यों पाल मोशाय? क्या कहा था मैंने? अनाज डालने पर भी कहीं कौओं का अभाव होता है?

नालू ने संकुचित भाव से हाथ जोड़कर कहा — छिः, छिः, ऐसा मत कहिये। इससे मुझे पाप लगेगा। मेरा कितना बड़ा भाग्य है कि आज मेरे घर आप लोगों के चरण पड़े। अपनी दलाली ले जाइये। सचमुच क्षमता है आप लोगों में।

—कुछ क्षमता नहीं है। वह क्षमता की बात नहीं है पाल मोशाय। रामहरि सच और हक की बात करता है हमेशा। ऐसे बाप की संतान नहीं है वह। असली बात तो यह है कि इस इलाके में पूरी चीनी का फलाहार कितने जनों ने कितनी बार खिलाया है? उसी का नाम सुनकर दौड़े आये हैं सब। इस गांव का शायद कोई नहीं आया? आयेगा भी नहीं। इन लोगों का पाया बुलंद है ना।

—एक जने आये हैं, भवानी बांडुज्जे मोशाय।

—रामहरि ने आश्चर्य से कहा — क्या? दीवानजी के जमाई?

—हां, वही।

—एक बार उनसे मुझे मिलवा दीजिये ना पाल मोशाय?

सारे ब्राह्मणों के खा लेने के पश्चात् भवानी मुन्ना के साथ एकांत में बैठे भोजन कर रहे थे। मुन्ना ने जीवन में पहली बार पूरी देखी थी। कह रहा था — बाबा, इसी को पूरी कहते हैं?

—हां बेटा, खाओ। और लेगा?

—हूं।

भवानी के इशारे पर तिलु दोनों की पत्तलों में गरम पूरियां डाल गयी। तभी नालू रामहरि चक्रवर्ती को लेकर वहां पहुंचा और करीब दस हाथ दूर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

—क्या है? भवानी ने पूछा।

—ये आपसे मिलने आये हैं।

रामहरि ने प्रणाम करके कहा — आज तो जाने किसका मुंह देखकर उठा था सुबह।

भवानी ने हंसकर कहा — बहुत ही खराब आदमी का मुंह था ना?

—ऐसी बात मत कहिये जमाई बाबू। मुझे अगर पहले पता होता कि आप और मां यहां आकर खायेंगे तो पाल मोशाय से कह देता कि फिर और कोई ब्राह्मण आये या न आये, आपको कोई फर्क नहीं पड़ेगा। ऐसी निधि पाकर ब्राह्मणों को खिलाने का खर्च करना भी कोई मायने रखता है? कहां हैं, मां कहां है? बाहर निकलो मां, लड़का दर्शन किये बिना नहीं जायेगा।

तिलु के सिर पर पल्ला लिये सामने आकर खड़े होते ही रामहरि ने हाथ जोड़कर नमस्कार करते हुए कहा — जैसे शिव वैसी शिवानी। आज दिन बड़ा अच्छा बीता पाल मोशाय। मां, लड़के को याद रखना।

तिलु ने भवानी से फुसफुसाकर कहा — पूर्णिमा के दिन हमारे यहां पधारियेगा? मुन्ना के जन्मदिन का खाना-पीना होगा, आप भी खाइयेगा।

प्रथानुसार तिलु सीधे न बात करके भवानी के माध्यम से बात कर रही थी। भवानी कुछ कहते उससे पहले ही रामहरि बोले — जरूर आऊंगा मां। यह तो मेरा सौभाग्य होगा। यह बात तो घर जाकर तुम्हारी बहू को भी बतानी पड़ेगी।

—उनको भी ले आइयेगा।

—नहीं मां, बहुत पुराने विचारों की है वह। आप लोगों के समान आजकल के उपयुक्त नहीं है। पुरुष के सामने निकलेगी ही नहीं वह। मैं ही आकर अपने मुन्ना भाई के साथ उसके जन्मदिन का खाना खाकर आपके गुण गा जाऊंगा।

नीलमणि समाद्दार की पत्नी अन्नाकाली ने अपनी बहू सुवासी से पूछा— बहू, वहां की कोई खबर मिली क्या?

बहू जानती थी कि सास जानना चाहती थी को ्ड़े आदमी के घर के दुर्गा उत्सव में

महाभोज सफल होगा या नहीं। उनकी अवस्था हीन होने की वजह से किसी भी क्रियाकर्म के निमंत्रण आमन्त्रण की ओर उनकी दृष्टि जरा प्रखर रहती थी।

सुवासी अच्छी बहू थी। पहले शर्मीली थी, पर रोज-रोज दूसरों के घर जाकर उधार मांगते रहने से बेशर्म हो गयी थी। उसने भी खोज-खबर न ली हो, ऐसी बात नहीं थी। बोली — गांव का कोई ब्राह्मण नालू के घर नहीं खायेगा।

अन्नाकाली बोली — जरा एक बार स्वर्ण के पास हो आ।

—तुम क्यों नहीं चली जाती मां?

—मैंने दाल भिगो दी थी, पीस लूं नहीं तो खराब हो जायेगी। सुन बहू....

—क्या?

इधर-उधर देखकर धीमे से अन्नाकाली ने कहा — स्वर्ण से कह आ कि अगर कोई और नहीं भी गया तो हम दोनों घर की औरतें रात को देर से छिपकर जायेंगे। क्यों तेरी क्या राय है?

—अपनी बहू को फणी ताऊजी ने देख लिया तो क्या जिंदा छोड़ेंगे?

—रात को जायेंगे, किसी को पता नहीं चलेगा।

—इस गांव के तो पेड़-पौधों के भी कान हैं।

—तू पूछ तो आ जाकर।

सुवासी यतीन की बहू स्वर्ण के पास चली गयी। वे लोग भी अत्यंत दरिद्र थे। स्वर्ण बैठी केले का थोर कूट रही थी। सुवासी ने पूछा — क्या बना रही हो स्वर्ण दीदी?

—आओ सुवासी। वे घर पर नहीं थे तो सोचा अब अपने लिये क्या बनाऊंगी। बस मसूर की दाल और सहजन की चच्चड़ि।

—बिल्कुल ठीक कह रही हो।

—बैठो सुवासी।

—बैठूंगी नहीं दीदी। सास ने पुछवाया है कि तुम लोग तुलसी दीदी के यहां भोज में जाओगे क्या?

—ननद तो कह रही थी चलने को। पर मैंने कहा कि जब गांव का कोई बाहमन नहीं जा रहा तो हम कैसे चलें। तुम लोग जाओगे?

—जरा नंदरानी को बुला ला जाकर।

यतीन को बहन नंदरानी को उसका पति छोड़कर चला गया था। बड़ी मुश्किल से गुजारा करती थी वह। यतीन के पिता रूपलाला मुखुज्जे ने ढूंढ़-ढ़ांढ़कर कुलीन लड़के से ही लड़की ब्याही थी, पर उस लड़के ने और भी बहुत से विवाह कर रखे थे। साल में एक बार आता और कुछ लेकर चला जाता। नंदरानी के सिर पर तीन कुलीन कन्याओं का बोझा लादकर चार-पांच सालों से एकदम गायब हो गया। वैसे कुलीन घरों में यह आम बात थी।

नंदरानी पीढ़े पर बैठी धूप में बाल सुखा रही थी। सुवासी की आवाज सुनकर उठ आयी। तीनों में परामर्श होने लगा।

नंदरानी बोली — रता को देर से जायेंगे तो कौन देखेगा?

स्वर्ण ने कहा — तो ठीक है, चलो। तुलसी को नाराज करना ठीक नहीं है। आपद-विपद में वही काम आती है, और कोई हाथ नहीं रखता और सब तो बस जाति से निकालने में एक हैं।

रात को बड़ी देर से वे लोग छिपती-छिपाती तुलसी के यहां पहुंची। तुलसी ने बड़े यत्न से सबको खिलाया और साथ में एक-एक पोटली बांध कर भी दे दी। स्वर्ण लौटी तो देखा यतीन दरवाजा खोले बत्ती जलाकर बैठा था। पत्नी को देखकर पूछा — कहां गयी थी? ओर हाथ में क्या है? गाइघाट से एक यजमान के यहां से दो सेर मूंग की धुली दाल ले आया हूं। बच्चे खुश होकर खायेंगे। तुम्हारे हाथ में कैसी पोटली है?

यह जानने की तुम्हें जरूरत नहीं है। खाना तो खाओगे ना?

—हां बड़ी जोर की भूख लगी है। भात है?

—बैठो। जो है खा लो।

बहुत दिन बाद पति की थाली में अच्छा खाना परोसते हुए स्वर्ण को अपार आनंद हो रहा था। मोटे चावलों के अलावा कभी और कुछ नसीब ही नहीं हुआ था उसे। ससुर के सारे दांत गिर गये थे, तब भी खाने को और कुछ नहीं दे पाती थी, बस मोटे भुने हुए चावल कूटकर दे देती थी।

यतीन बोला — यह सब कहां से आया?

—किसी से कहना मत। तुलसी के यहां से। बहुत खुश हुई तुलसी दीदी। सामने खड़े होकर खिलाया और आते समय जबरदस्ती साथ भी बांध दिया।

—अच्छा किया तुमने। खाने को मिलता नहीं, उस पर अच्छा खाने को कौन देता है?

—अगर गांव में किसी को भनक पड़ गयी तो?

—फांसी देंगे या सूली पर चढ़ायेंगे? बुरा क्या किया। उसने बुलाया था, तो गयी थी ना? बिना बुलाये तो नहीं गयी थी।

—तिलु दीदी और नन्दोई भी थे।

—उनसे कुछ कहने की कोई हिम्मत नहीं करेगा। हम गरीब हैं, इसलिये सारे दोष हम पर ही मढ़े जायेंगे।

तो डालने दो। तुमने पेट भरकर पूरियां खायीं? बच्चों को खिलाया? उनके लिये रख दो, सुबह उठकर खा लेंगे। और यहां-वहां दस जगह बातें मत करना, बस। अच्छा, तुमने अच्छी तरह खाया था कि नहीं?

—बिना खाये तुलसी दीदी क्या छोड़तीं। हाथ जोड़े खड़ी बस यही कहती रहीं, तुमने खाया नहीं कुछ। और लो थोड़ा-सा।

मुन्ना के जन्मदिन पर रामहरि चक्रवर्ती भवानी के घर आये। साथ में दो लड़के भी थे। उनकी पत्नी ने मुन्ना के लिये महीन धान की खील और रबड़ी भेजी थी। भवानी के मकान के पश्चिमी ओर के दालान में अतिथियों के लिये चटाई बिछाई हुई थी। बहुत अधिक लोग नहीं थे, रामकनाई कविराज, फणी चकत्ति, श्याम मुखुज्जे, नीलमणि समाद्दर और यतीन थे बस। औरतों में निस्तारिणी, यतीन की पत्नी स्वर्ण और नीलमणि समाद्दार की पुत्रबधू सुवासी को बुलाया था।

फणी चकत्ति बोले — अरे रामहरि हैं! अच्छे हो?

—जी प्रणाम भैया। आप कैसे हैं?

—अरे कैसे क्या! अब उमर हो गयी है, जल्दी से चले जायें, वही अच्छा है। बुड्ढों में मैं और नीलमणि भैया ही रह गये हैं और ठीक-ठीक हैं। और तो एक-एक करके सब चले गये।

—कितनी उमर हो गयी आपकी?

—उनहत्तरवां चल रहा है।

—क्या कह रहे हो? देखकर तो नहीं लगता। अभी तो दांत भी नहीं गिरे।

—अभी भी आधा सेर चावल का भात खाता हूं। आधी कठौती चिवड़ा और आधा पक्का कटहल एक बार में खा लेता हूं। दोनों वक्त ढाई सेर दूध पीता हूं और सब हजम कर लेता हूं।

—इसलिये तो ऐसा शरीर है, नहीं तो...

—अच्छा एक बात पूछूं रामहरि? यह उस दिन तुम लोगों ने क्या किया। अंगरालि और गदाधरपुर के ब्राह्मणों की क्या बुद्धि भ्रष्ट हो गयी है? केवल बुलाने से ही क्या शूद्र के घर पत्तल चाटने चला जाता है कोई। छिः, छिः, हो तो ब्राह्मण ही? गले में जनेऊ भी है न? कुलीन नहीं हो तो क्या हुआ। सभी तो कुलीन नहीं होते, पर मान अपमान का ज्ञान तो होना चाहिये।

इस बात से नीलमणि समाद्दार का दिल घबराने लगा। कहीं उनकी पत्नी और पुत्रवधू के उस दिन छुपकर भोज में सम्मिलित होने की बात न खुल जाये, यह सोचकर भयभीत हो उठे। पर भगवान की मर्जी से ठीक उसी समय भवानी ने आकर सबसे खाने के लिये चलने की विनती की। बात जहां की तहां रह गयी।

फणी चकत्ति वगैरह जितने भी कुलीन ब्राह्मण थे, श्रोत्रिय ब्राह्मण रामहरि चक्रवर्ती के साथ एक पंक्ति में बैठकर नहीं खा सकते थे, इस कारण उनका आसन अलग बिछाया गया। मुन्ना को जन्मदिन की खील खिलाने का भार रामहरि चक्रवर्ती को सौंपा भवानी ने, अतएव मुन्ने का आसन भी उनकी बगल में ही लगाया गया। घूंघट निकालकर तिलु पास बैठी दोनों को पंखा झलने लगी।

रामहरि बोले — तुम्हारा नाम क्या है?

मुन्ना ने शर्माकर जवाब दिया — श्री राजेश्वर बंद्योपाध्याय।

—क्या पढ़ते हो?

उत्साहित होकर मुन्ना बोला — हरू गुरु मोशाय की पाठशाला में पढ़ता हूं। कलकत्ता में जो शंभू रहते हैं, उनसे अंगरेजी पढ़ाने को कहा था, वे तैयार हो गये हैं।

—अरे वाह। इतना सा लड़का अंगरेजी पढ़ेगा। तब तो तुम हाकिम बन जाओगे।

—मां पूछ रही है आप और कुछ नहीं लेंगे?

—नहीं, नहीं बहुत खा लिया। तीन बार तो खीर ले ली? बहुत लंबी उमर हो भैया।

ब्राह्मण भोजन के दलाल रामहरि चक्रवर्ती को किसी कुलीन ब्राह्मण के यहां इतना सम्मान नहीं मिला था। विदा लेते समय तिलु को प्रणाम करके बोले — चलता हूं मां, आज का दिन जीवन भर याद रहेगा। यह सम्मान कभी नहीं भूलूंगा। आज जाना कि केवल दो हाथ पैर होने से ही मनुष्य नहीं होता मां। गले में जनेऊ पहन लेने से ही कोई कुलीन ब्राह्मण नहीं बन जाता....

इसके बाद कितना कुछ बदल गया। चाकदा से चूयाडांगा तक रेल चलने लगी। एक दिन तिलु और निलु जेठ के महीने में पति के साथ आडंघाटा के भगवान देखने गयीं। चाकदा तक सब बैलगाड़ी में गये। वहां से गंगास्नान करके पका-खाकर निकले और रेल से आड़ंघाटा गये आये।

मुन्ना ने पाठशाला की पढ़ाई समाप्त कर ली तो भवानी ने तिलु से बात की कि मुख्तारी पढ़ायें या टोल में संस्कृत पढ़ने भेजें। अगर मुख्तारी पढ़ानी हो तो सतीश मुख्तार से सलाह लेना आवश्यक था।

तिलु बोली — निलु को बुलाओ।

निलु में बचपना नहीं रह गया था अब, पक्की गृहस्थन हो गयी थी। आकर बोली — टुलु से ही पूछो ना? जाने तुम दोनों की अक्ल कहां चली गयी है।

टुलु का वास्तविक नाम राजेश्वर था। गंभीर स्वभाव का लड़का था वह। जितना रूपवान था, उतना ही बुद्धिमान भी था। बहुत ही पितृभक्त था। बोला — बाबा, तुम बताओ ना? मुझे क्या पता और छोटी मां को तो कुछ भी नहीं मालूम। उस दिन रेलगाड़ी में नहीं देखा था, बैठकर पान लगाने लगी थी। पांच मिनट में गाड़ी रानाघाट से आड़ंघाटा पहुंच गयी थी तो मां को तो जैसे लेने के देने पड़ गये थे, बुड़बुड़ाने लगी थी कि दो पान लगाये नहीं और गाड़ी तीन कोस आ गयी। ही-ही....

निलु बोली — क्या पता बेटा, हम ठहरे बुड्ढे-ठुड्ढे। पहले चाकदा गंगास्नान करने जाते थे तो सारा रास्ता पान लगाते हुए जाते थे। अब ऐसे हंसी उड़ाने की जरूरत नहीं है।

—तो मैंने गलत क्या कहा? तुम भला पढ़ाई-लिखाई के बारे में क्या जानो? मां ने तो तब भी थोड़ी बहुत संस्कृत पढ़ी है, पर तुम तो एकदम मूरख हो।

—तो तू सिखा-पढ़ा देना मुझे।

—मैं सिखाऊंगा? अब इस उमर में ये क, ख, अ, आ सीखेंगी.... क्या कहने?

—शाम को तुझे छेने की खील खिलाऊंगी।

—सच कह रही हो?

—बिल्कुल सच।

—तो फिर तुम बहुत अच्छी हो। मूरख नहीं हो।

भवानी बोले — ए... टुलु। क्या हो रहा है यह? काम की बात करो। असली बात का जवाब दे।

—तुम बताओ ना।

—तुम ही अपनी इच्छा बताओ ना?

—तभी निलु फिर बोली — मुख्तारी-टुख्तारी की बात छोड़ो, अंगरेजी पढ़ाओ इसे। कलकत्ता भेजना पड़ेगा। देखते नहीं शंभू वहां कितनी अच्छी नौकरी कर रहा है। टुलु क्या उससे कम बुद्धिमान है?

भवानी बोले — क्यों, क्या कहते हो तुम ?

—छोटी मां ठीक कह रही है बाबा? क्यों मां, तुम भी तो बोलो?

निलु अभिमान भरे स्वर में बोली — क्यों मैं तो मूरख हूं। मैं भला यह सब क्या जानूं?

टुलु बोला — नहीं छोटी मां। हंसी की बात नहीं है। तुम्हारी बात मन में बैठ गयी है। मेरी भी अंगरेजी पढ़ने की इच्छा है। पर पढ़ायेगा कौन बाबा?

—हां, यह भी सोचने की बात है। अंगरेजी पढ़ायेगा कौन? गांव में तो कोई अंगरेजी जानता नहीं, केवल शंभू राय जानता है। बहुत दिनों से आमूटि कंपनी के हौस में काम करता है, साहबों के साथ अंगरेजी में बात करता है। जब भी गांव आता है, सब पर रोब डालने के लिये जब-तब अंगरेजी झाड़ता रहता है।

तिलु हंसकर बोली — तेरे शंभू भैया कैसे अंगरेजी बोलते हैं, बता तो?

—इट सेंस्ट मट फुट... इट सुनटु-फुट-फिट...

भवानी खुश होकर बोले — अरे वाह! कब सीखी तूने?

—सुन-सुन कर सीखी है।

तीनों जने खुश हो गये। उत्साह पाकर मुन्ना बोला — मैं और जानता हूं बाबा, बोलूं? सिट ए हिप-सिट-फुट-ए पट-आइ-माइ। बाबा, वह आइ और माइ बहुत बोलता है बार-बार।

मुन्ना की बुद्धि देखकर निलु की बोलती बंद थी।

नील कोठी की नौकरी छूटने के बाद प्रसन्न चक्रवर्ती के दो साल बड़े कष्ट में बीते। अमीन की नौकरी जुटाना बड़ा कठिन था। अंत में बहुत टक्करें मारने के बाद नौकरी

मिली तो पर नील कोठी की नौकरी जैसी न तो आमदनी थी और न वैसा सुख। तब भी चार साल गुजर गये। पाल स्टेट की बहादुरपुर कचहरी में काम कर रहे थे। सुबह घनश्याम चकलादार पालकी में बैठकर चितलमारि के खलिहान का मुआयना करने निकल गये तो प्रसन्न अमीन ने चैन की सांस ली। नये मालिक थे, बड़ी सोच समझकर चलना पड़ता था। अब न वह राजाराम दीवान थे और न वह बड़े साहब। नायब का नौकर रतिलाल नाई कमरे में आकर बोला — क्या कर रहे हैं अमीन बाबू?

—बस बैठा हूं। क्यों?

—नायब बाबू का हंस देखा आपने? इधर तो नहीं आया?

—नहीं, मैंने तो नहीं देखा।

—तमाखू पीयेंगे?

—चल, भर ले एक चिलम।

रतिलाल चिलम भर लाया। वह स्वयं नहीं पूछता तो नायब के नौकर को हुकुम देने का साहस प्रसन्न में नहीं था।

रतिलाल बैठते हुए बोला — अमीन बाबू, गिरे मछुआरा सुबह मछली तो दे नहीं गया?

—दे जाने की बात थी क्या? कल शाम को तो हाट में मछली बेचते देखा था।

—रोज तो दे जाता है, आज पता नहीं क्यों नहीं आया? मछली के बिना खाना ही नहीं खा पाते। और थोड़ी देर देखता हूं नहीं आया तो जेलेपाड़ा भागना पड़ेगा मछली लाने।

रतिलाल की बक-बक अच्छी नहीं लग रही थी प्रसन्न चकत्ति को। आज एक तो उनका मन अच्छा नहीं था और इसके अलावा नायब के नौकर के साथ ज्यादा देर बात करने की प्रवृत्ति भी नहीं होती। आज भले ही परिस्थिति के फेरवश वह यहां पड़े थे, परंतु मुल्लाहाटि की कोठी में जिस सम्मान और रोबदाब से दिन बिताये थे, वह भूल नहीं पा रहे थे।

बला टालने के उद्देश्य से प्रसन्न ने जल्दी से कहा — अगर मछली लेनी है तो अभी चले जाओ, अगर देर हो गयी तो सारी मछलियां सोनाखालि के बाजार में बेचने को ले जायेंगे।

—आप का ख्याल है चला जाऊं?

—अभी चले जाओ, देर मत करो।

रतिलाल के जाने के जरा देर बाद ही वह मछली की टोकरी लिये कचहरी के अहाते से निकलता दिखायी दिया। प्रसन्न चकत्ति का मन शांत हो गया। सोचा धूप में बैठकर तेल की मालिश करके नहा लिया जाये। कटहल के पेड़ के नीचे आधी धूप आधी छाया में लाल गमछा लपेटकर बैठे वह और तेल मलने लगे। नहाने के बाद खाना भी बनाना था।

कितनी चीजें दे जाया करते थे लोग इन दिनों। बैंगन, झिंगा, मूली। सिर्फ उनको

नहीं, कचहरी के सभी लोगों को मिलती थीं। उनके हिस्से की चीज़ें उन्हें देकर नरहरि पेशकार कहा करता था — प्रसन्नदा, आप ठहरे ब्राह्मण। रसोई आप लोगों की वंशगत चीज है। मेरे लिये भी बना लीजेयेगा।

आराम था। एक आदमी और दो आदमियों के खाने के खर्च में कोई बहुत फर्क नहीं पड़ता। दोनों का मिलाकर कुल तीन-चार रुपये महीना पड़ता था। चावल दाल सब नरहरि लाता था। दूध भी असली मिल जाता था, कोई न कोई दे जाता था, सामान खरीदने के लिये पैसे खर्च नहीं करने पड़ते थे। तभी गया की याद आ गयी।

गया।... गया मेम।

नहीं। उसकी याद आते ही मन खराब क्यों हो जाता है? गया मेम की उन पर नेक नजर पड़ी थी। यों तो उनके जीवन में दुख का पारावार नहीं था, बचपन से ही दुख भोगते-भोगते जीवन बीत गया था। कभी किसी ने दो मीठे बोल नहीं बोले थे, हंसकर नहीं बुलाया था। गया ने जीवन की केवल यही साध पूरी की थी। ऐसा सुडौल बदन, ऐसे घने काले बाल, बड़े साहब की सिरचढ़ी आया मेम गया उन जैसे आदमी पर क्यों सदय दृष्टि डालेगी, इसका कोई कारण मिल सकता है भला? पर तब भी ऐसा हुआ था।

कैसे मधुर कंठ से पुकारती थी — काका मोशाय, ओ काका मोशाय...

उम्र में उससे बहुत बड़े होते भी गया ने कभी उनकी अवहेलना नहीं की। क्यों नहीं की? क्यों बहाना ढूंढ़कर उनके साथ हंसी मजाक करती थी? क्यों उन्हें प्रश्रय देती थी? क्यों उनकी तरफ देखकर उस तरह हंसती थी? क्यों उन्हें तंग करने में आनंद आता था उसे? आजकल कैसी है वह? कब से मिलना नहीं हुआ। हो सकता है बड़ी मुसीबत में हो, कौन जाने? कितनी बार रात को जब उसकी याद आ जाती है तो आंखों की नींद उड़ जाती है। लगता है युग बीत गये उसे देखे।

—ओ अमीन मोशाय, मछली नहीं मिली — यह कहते हुए रतिलाल हाथ में खाली टोकरी झुलाता अंदर प्रविष्ठ हुआ। बदन में आग लग गयी प्रसन्न चकत्ति के। भाड़-चूल्हें में जा, बोल तो ऐसे रहा है जैसे मैं तेरा यार हूं, तेरी बराबरी का हूं? साला पानी भरते, बर्त्तन मांजने वाला दो कौड़ी का नौकर दांत निपोरकर बात करने आया है। पहचानता नहीं प्रसन्न अमीन को अभी? पर अब उनके दिन चले गये हैं, विषहीन ढोंड़ा सांप बनकर रह गये हैं, नहीं तो मजा चखा देते अभी।

नीलकोठी के जमाने में शासन नाम की कोई चीज थी, लाल मुंह देखकर लोगों का डर से पेशाब निकल जाता था, इन देशी जमींदारों की कचहरी में तो भूतों का नाच होता है। कोई किसी की सुनता है? झाड़ू मारो।

बड़े नीरस कंठ से अमीन ने रतिलाल की बात का जवाब दिया — ओ।

रतिलाल बोला — तेल मल रहे हैं?

—हूं।

—नहायेंगे?

—हूं।

—क्या बनायेंगे?

—कोई खास नहीं। दाल और करेले की सब्जी। मट्ठा है।

—मट्ठा नहीं हो तो दे दूंगा। सनका ग्वालिन आधी कलसी मट्ठा दे गयी हे। लेंगे?

—नहीं, मेरे पास है।

कहकर रतिलाल को आगे कुछ कहने का मौका न देते हुए जल्दी से गमछा कंधे पर डालकर नदी पर नहाने चले गये। अच्छी मुसीबत है, उसके साथ बैठे-बैठे बक-सब करो, जैसे कोई काम ही न हो। बेअदब कहीं का।

खाना बनाते-बनाते भी प्रसन्न फिर से खयालों में खो गये — कब से वह इस तरह अकेले अपने लिये खाना बनाते आ रहे हैं — बीस साल से? नहीं, उससे भी ज्यादा हो गये। जब से पत्नी सरस्वती परलोक सिधारी, तब से जो हंड़िया कलछी हाथ में आयी तो उतरी कहां? जो रोज पकाते थे, वही पकाया।

अत्यंत प्रिय वस्तुएं — खूब सारी हरी मिर्चें डालकर मसूर की दाल और करेला भाजा। बस हो गया काम। कौन ज्यादा झंझट करे। फिर मट्ठा तो था ही।

—दाल बना ली क्या?

पानी का लोटा ऊपर करके सीधे गले में डालते हुए पी रहे थे, सुनते ही धसका लग गया। कहां का भूत है साला, जो सिर पर सवार हो गया है। इतनी अबेर खाना खाने बैठे तो भी चैन नहीं। बदमाश, पाजी। चिढ़कर प्रसन्न चकत्ति ने कहा — हूं। क्यों?

—कौन-सी दाल बनायी है?

—मसूर की।

—थोड़ी-सी मुझे देंगे? कटोरी लाऊं?

—और तो नहीं है। थोड़ी-सी बनायी थी, खा ली।

—मैं तो आपके लिये मट्ठा लाया था।

—मट्ठा है। खरीद लिया था।

—यह बहुत अच्छा मट्ठा है, सनका ग्वालन का मशहूर मट्ठा। बिष्टु घोष की विधवा बहन, पहचानते हैं? ऐसा मट्ठा कोई नहीं बनाता। पी कर देखिये।

—नहीं।

फिर एक चिलम तमाखू पीकर प्रसन्न अपने मैले बिस्तर पर लेट गये। आंख लगी ही थी कि कारिंदे ने आकर आवाज लगायी — नायब मोशाय बुला रहे हैं आपको।

हड़बड़ाकर उठे प्रसन्न चकत्ति और आफिस में पहुंचे। भीड़ लगी हुई थी। आठ-दस आदमी अमीन के जरीबी चिट्ठे की नकल लेने आये थे। नायब घनश्याम चकलादार रोबीले आदमी थे, आधी धोती बदन पर लपेटे, गाव तकिये से टिक गद्दी पर बैठे हुए चांदी की नली वाला फर्शी हुक्का पी रहे थे। प्रसन्न के पहुंचते ही बोले — अपने ताल्लुके की जमीन का चिट्ठा तैयार कर लिया?

—करीब-करीब हो गया है, बस थोड़ा-सा रह गया है।

—इन लोगों को दे सकेंगे। दूर से आये हैं, आज ही चले जायेंगे। फिर उपस्थित लोगों से बोले —जाओ अमीन मोशाय के पास चले जाओ।

प्रसन्न चकत्ति बरसों से यही काम करते आ रहे थे। गुड़ की कलसी में किस तरफ जमा हुआ अच्छा गुड़ होता है और किस तरफ ढीला, यह सीखना नहीं था उन्हें। चिट्ठा तैयार रहने से ही क्या सारी गड़बड़ी शेष हो जाती है? चकबंदी वगैरह की गड़बड़ी रहती है, फिर उस पर नायब के दस्तखत कराने पड़ते हैं। दिन के इस वक्त इतनी अबेर इतने काम भला कैसे होंगे? हां, कोशिश करके देखेंगे।

नीलकोठियों के जमाने में ऐसे मामलों में चार पैसों की कमाई भी तो होती थी। पर अब तो सब सपना लगता है।

आये हुए लोगों में से एक आगे आकर बोला — कर दीजिये अमीन बाबू! आपको पान खाने के जो बन पड़ेगा दे देंगे....

—कितना?

—एक आना हर आदमी का अभी दे देंगे।

बही नीचे रखकर प्रसन्न चकत्ति बोले — तो अभी नहीं होगा। चाहो तो अपने नायब मोशाय से जाकर कह सकते हो। चिट्ठा तो तैयार हो गया है, पर अभी रिकार्ड से मिलाया नहीं गया, दस्तखत नहीं हुए। पंद्रह बीस दिन और लग जायेंगे, हो सकता है महीना भी लग जाये।

आये हुए लोगों का मुखिया विनीत भाव से बोला — आप कितना कहते हैं अमीन बाबू?

वह भी मंजा हुआ आदमी था। अमीन बाबू क्यों अड़ गये थे, अच्छी तरह जानता था।

प्रसन्न चकत्ति अप्रसन्न वदन बोले — नहीं, नहीं, वह नहीं होगा। तुम लोग नायब के पास ही जाओ। मुझे अभी दस पंद्रह दिन कम से कम लगेंगे।

मुखिया ने हाथ जोड़कर कहा — नाराज मत होइये अमीन मोशाय, अच्छा छह पैसे आदमी के हिसाब से दे देंगे।

—छह आने से एक कौड़ी कम नहीं होगा।

—गरीब आदमी हैं, मर जायेंगे अमीन बाबू।

—नहीं, नहीं हो सकता।

मजबूर होकर मुखिया को दस आदमियों को पांच चँवन्नी निकालकर देनी पड़ीं। मन ही मन बोला — चलो, किसी तरह रस्ते पर तो आओ मेरे बाप।

दिन का तीसरा पहर था। घनश्याम ने फिर से प्रसन्न को बुला भेजा। धनश्याम बड़े कर्मठ आदमी थे, दोपहर को सोने की आदत नहीं थी, गाव तकिया गोद में रख खाते पर दस्तखत कर रहे थे, पेशकार पास खड़ा पन्ने उलटता जा रहा था। फर्शी में तमाखू जल रहा था।

प्रसन्न चकत्ति की ओर देखकर बोले — उन लोगों का चिट्ठा दे दिया?

—जी दे दिया।

—आप घोड़े पर चढ़ना जानते हैं?

—जी, जानता हूं।

—आपको इस वक्त रहातनपुर जाना पड़ेगा। बिलातालि सरदार और उसमान गणि के मुकदमे में आप प्रमुख गवाह होंगे, इसलिये मौके पर जाकर देख आइये। वहां कचहरी की तरफ से नुकड़ कापाली रहेगा, वह आपको सब समझा देगा। उसमान गणि की जमीन के पीछे जो सेमल का पेड़ है, वह सड़क से कितनी चेन दूर है, नापकर आना है।

—चेन ले जाऊं?

—ले जाइये। मेरा कटे कान वाला घोड़ा ले जाइये। बस बायें पैर से जरा सी ठोकर मारियेगा पेट में, बहुत तेज दौड़ेगा।

अब इतनी देर से रहातनपुर जाओ। यहीं रखा है क्या वह। लौटने में पता नहीं कितनी रात हो जाये। वहां नुकड़ कापाली सिखायेगा प्रसन्न चकत्ति को! हंसी भी आती है। वह जरीब के काम के बारे में भला जाने? अमीन के पीछे-पीछे खूंटे लेकर दौड़ता है, बड़े साहब जिसे "पिनमैन" कहते थे, वही नुकड़ कापाली अब उन्हें जरीब का काम समझायेगा।

यशोर चूयाडांगा की पक्की सड़क पर घोड़ा सरपट दौड़ने लगा। रेल चलने लगी थी इस तरफ। सड़क से कोई कोस भर दूर थी रेल लाइन। प्रसन्न ने सोचा एक दिन चढ़कर देखना पड़ेगा रेल पर भी। पर डर लगता है, कहीं इस बुढ़ापे में कोई नई मुसीबत न खड़ी हो जाये। मानिक मुखुज्जे कह रहा था कि रेल से कालीगंज जाकर गंगास्नान कर आया जाये। रानाघाट तक छह आने किराया है। पर हिम्मत नहीं पड़ती।

तीन घंटे में घोड़ा रहातनपुर पहुंच गया। करीब ग्यारह कोस का रास्ता था। वहां का हर आदमी उन्हें पहचानता था। नीलकोठी के जमाने में प्रायः वह और कारकुन नील का निशान लगाने आया करते थे।

बड़ा मुखिया अब्दुल लतीफ मर गया था, उसका लड़का समसुल आकर प्रसन्न चकत्ति को अपने घर ले गया। तेज धूप में घोड़ा दौड़ाते हुए आये थे। समसुल ने पूछा — कहां है आजकल अमीन मोशाय?

—तुम लोग सब ठीक तो हो? अब्दुल शायद मर गया है? कितने दिन हुए? बड़ा अच्छा आदमी था। मैं बहादुरपुर में हूं। बड़ी दूर पड़ गया हूं ना, पुराने लोगों से मिलना-जुलना एक तरह से बंद सा हो गया है।

हुक्का तो पियेंगे ना? चिलम भरूं?

नुकड़ कापाली कहां मिलेगा? बता सकते हो?

बांओड़ के किनारे जो फूस वाला घर है, जो जरीब के समय अमीन के ठहरने का स्थान था, वहीं हैं।

परंतु प्रसन्न चकत्ति के मन में रह-रह कर एक बार पुरानी कोठी देखने की इच्छा सिर उठा रही थी। सूरज ढल गया था, सांझ होने में देर नहीं थी, मुल्लाहाटि की कोठी वहां से तीन कोस थी। थोड़ा तेजी से भागने पर भी घंटे भर का रास्ता तो था ही। फिर कुछ सोच कर घोड़े का मुंह मुल्लाहाटि की ओर मोड़ दिया उन्होंने। बहुत दिन हो गये थे वहां गये।

जीवन सूना था, एकदम सूना —मड़िघाटा के बड़े मैदान सा सूना। कुछ अच्छा नहीं लगता। यों तो काम करना, खाना-पीना सोना सभी कुछ करते थे, पर चाबी के खिलौने की तरह। पर अच्छा कुछ नहीं लगता था। करना पड़ता था, इसलिये करते थे।

रास्ते में ही सांझ उतर आयी। पश्चिम के आकाश में कुम्हड़े की फांक सा पंचमी की चांद दिखायी देने लगा था। चलते-चलते घोड़ा पसीना-पसीना हो गया था। तेज तमाखू होने के कारण उनको भी बराबर खांसी आ रही थी। तभी दूर लंबे वृक्षों की आड़ से झांकती सफेद नीलकोठी पर नजर पड़ी। मन प्रफुल्ल हो उठा। उनके यौवन की लीलाभूमि थी, आमोद-प्रमोद का अड्डा थी वह जगह। पर आजकल निशाचरों का अड्डा बन गयी थी। नाल मोहन पाल व्यवसायी जमींदार थे, उनके हाथों में पड़ कर कोठी का मान कैसे रह सकता था?

अचानक प्रसन्न चकत्ति का ध्यान भंग हुआ। रास्ता भूलकर वह कोठी से कुछ दूर कब्रिस्तान में आ गये थे। सड़क के दोनों ओर घना बगीचा था, रॉब्सन साहब के जमाने में विलायत से लाकर जाने कौन-कौन से पेड़ लगाये गये थे। जरा दूर रॉब्सन साहब की लड़की की कब्र नजर आ रही थी। पास ही डनियन साहब की कब्र थी। इन लोगों को उन्होंने नहीं देखा था। सुना था रॉब्सन साहब ने ही सफेद वाली बड़ी कोठी बनवायी थी।

सारे कब्रिस्तान में झाड़-झंखाड उग आये थे। नील कोठी के जमाने में कितनी सफाई रहती थी, सारी कब्रें चमकती रहती थीं। अब कौन देखने वाला रह गया था।

सहसा घोड़ा जैसे रुक गया। सामने दृष्टि गयी तो सारा बदन जैसे डोल गया। उन्हें तो याद ही नहीं था कि यहीं शिप्टन साहब की कब्र थी। पर वह सफेद सा क्या हिल-डुल रहा था?

निर्जन कोठी के कब्रिस्तान की अस्पष्ट ज्योत्स्ना में चमकती कब्रें प्रेत लोक का आभास दे रही थीं जैसे। कितने भी साहसी हों प्रसन्न चकत्ति पर डर के मारे घिग्घी सी बंद गयी। हकलाते से बोले — कौन है वहां? बोलते क्यों नहीं? कौन हो?

—शिप्टन साहब की समाधि के चारों ओर उग आयी कांस की झाड़ियों की हवा में झूमते सफेद फूलों की आड़ से एक नारी मूर्ति त्रस्त व चकित भाव से निकली और पत्थर-सी खड़ी हो गयी।

—कौन हो तुम?

—कौन? काका मोशाय?

उसके स्वर में असीमित विस्मय था। जरा आगे बढ़कर बोली — मैं गया हूं।

कुछ क्षण के लिये प्रसन्न की जैसे बोलती बंद हो गयी। जल्दी से घोड़े से कूदकर आल्हाद भरे स्वर में बोले — गया ! तुम यहां? चलो, चलो, इस जंगल से बाहर निकलो.... यहां कहां आयी थीं ?

उस अस्पष्ट आलोक में भी प्रसन्न को गया की आंखों की कोर भीगी हुई स्पष्ट दिखायी दे गयीं। ऐसा लगा, जैसे वह वहां बैठी रो रही थी। बोला — चलो गया, उस तरफ से निकलकर चलो। उफ, कैसा जंगल उग आया है यहां।

उनकी बात पर कर्णपात न करके गया बोली — काका मोशाय, बड़े साहब की कब्र नहीं देखेंगे? आइये। जब आये ही हैं, तो देख जाइये।

यह कहकर उनका हाथ पकड़कर खींचती हुई सी ले चली उन्हें। समाधि पर ताजे मालती और बकुल के फूल चढ़ाये हुए थे। उनमें से मालती के फूलों का एक गुच्छा उठाकर उनके हाथ में देते हुए बोली — लीजिये, बिखेर दीजिये। याद है न, आज साहब की पुण्य तिथि है? कितना नमक खाया है उनका!

प्रसन्न चकत्ति ने देखा, उसके दोनों गालों पर आंसुओं की धारा बह रही थी।

इसके बाद दोनों कब्रिस्तान के जंगल से निकलकर एक विलायती पेड़ के नीचे बैठ गये। दोनों के मुंह से कुछ देर कोई आवाज नहीं निकली। दोनों एक दूसरे को अप्रत्याशित रूप से देखकर बहुत खुश हो गये थे। गया दुबली हो गयी थी, पहले वाला चेहरा नहीं रह गया था। सामने के दांत गिर गये थे। अंग प्रत्यंग पर दुखों की छाप स्पष्ट थी। बुढ़ापा बड़ी जल्दी आ गया था।

—कैसी हो गया? प्रसन्न ने पूछा।

—अच्छी हूं। आप कहां हैं आजकल?

—बहुत दूर। बहादुरपुर की कचहरी में अमीन हूं। पहले तुम अपनी सुनाओ। चेहरा ऐसा कैसे हो गया?

—चेहरे की बात छोड़िये। अगर साहब के कहने पर आप वह जमीन नहीं नाप देते, तो खाने को भी नहीं मिलता। जब तक दिन अच्छे थे, मेरे से काम निकलता था, लोग मानते थे, आदर करते थे। अब कोई क्यों पूछेगा? अब तो उल्टे नीचा दिखाते हैं। पिछली बार आपको बताया तो था कि हुक्का-पानी बंद कर रखा है।

—अभी भी वही चल रहा है?

—आप क्या सोचते हैं कि जीते जी इसका कोई रास्ता निकलेगा काका मोशाय? मेरी जात जो चली गयी है। बीमार पड़ने पर कोई झांकने भी नहीं आता, दो घूंट पानी भी नहीं पिलाता कोई। अकेली औरत देखकर मेरी जमीन का धान काट ले जाते हैं रात को। किससे झगड़ूंगी? मेरे तो दिन थोड़े ही हैं अब।

सब सुनकर प्रसन्न की आंखें भीग गयीं। उनका ज़ीवन भी उस जैसा ही नीरस और दुखी था।

गया उनकी ओर देखकर बोली — अब अपनी बताइये। बहुत दिनों से नहीं दिखायी दिये। अरे... आपका घोड़ा भागा, काका मोशाय, पकड़िये....

जल्दी से उठकर घोड़े को पकड़कर पेड़ से अच्छी तरह बांध दिया और गया के पास आकर बैठ गये। आज मन उमड़ा पड़ा रहा था। किसी के दुख की कहानी कौन सुनना चाहता है? और हरेक के सामने क्या दिल खोला जाता है? पर गया जैसे बड़ी अपनी थी। उससे कहकर दिल हलका हो जाता था।

जरा-सा मुस्कुराकर बोले — बुड्ढ़ा हो गया हूं गया। बाल पक गये हैं। मन में हमेशा डर बना रहता है। उन्नति करने की कितनी इच्छा थी, पर अब इस उमर में नौकरी चली गयी तो क्या कोई दो मुट्ठी खाने को देगा? मनोबल नहीं रहा अब। चारों तरफ जो हाल देख रहा हूं, उससे तो लगता है कोई पूछेगा भी नहीं हमें तुम्हें।

चिंता मत करिये काका मोशाय। आप मेरे पास रहियेगा। आपकी नापी हुई जमीन से हम दोनों का गुजारा हो जायेगा। और मुझे लोग जो कहते हैं, उससे ज्यादा क्या कहेंगे? अब और क्या डूबूंगी। सिर पर एक व्यक्ति हैं, जो हम दोनों को अलग नहीं करेंगे। मेरे बाबा ने बड़ा सहारा दिया है मुझे। पहले सोचती थी, मेरा कोई नहीं है। चलिये मेरे साथ। जब तक मैं हूं, इस गरीब लड़की की सेवा मिलती रहेगी आपको। चाहे जितनी छोटी जात होंऊं पर इतनी इंसानियत है मुझमें।

एक अपूर्व अनुभूति से वृद्ध प्रसन्न चकत्ति का मन भर उठा। अपने सुख के दिनों में भी कभी ऐसी अनुभूति का अनुभव नहीं हुआ था उन्हें। सब कुछ खोकर भी जैसे आज उस भुतहे कब्रिस्तान में उन्हें सब कुछ मिल गया। अचानक वह उठकर खड़े हो गये और बोले— अच्छा, अब चलता हूं, गया।

गया अवाक होकर बोली — इतनी रात को कहां जायेंगे काका मोशाय?

—दूसरे का घोड़ा लाया हूं। जब दूसरे की नौकरी करता हूं तो पहले उसी का काम देखना पड़ेगा। अगर कभी मिलना न हो सके तो इस बूढ़े को याद रखना। अब तुम भी चली जाओ, अंधेरे में सांप, बिच्छू का डर रहता है।

उसके बाद और न रुककर जल्दी से घोड़ा खोला प्रसन्न ने और रकाब पर पैर रखकर उछलकर घोड़े पर बैठ गये। फिर घोड़े का मुंह फिराते हुए जैसे स्वयं से कहा उन्होंने — तुमने मुंह से कहा, गया, यही बहुत है, इस दुनिया में एक नितांत अपने को छोड़कर इतना भी कौन कहता है? बहुत अपनी लगती हो तुम।

जूनियर वृक्षों की आड़ से पंचमी का चांद मड़िघाटा के बांओड़ पर पड़ रहा था। नीलकोठी के पुराने विस्मृत साहबों के भग्न समाधिस्थल के झाड़-झंखाड़ के अंधेरे में झींगुर बोल रहे थे।

इछामती के हर मोड़ के जंगल में कितनी ही जंगली झाड़ियां व लताएं उग आयीं। देखते-देखते छोटे-छोटे चरागाह जंगलों में परिणत हो गये। आबादी विहीन मैदानों में जंगली पौधों ने डेरा जमा लिया और फलने-फूलने लगे। वर्षा के अंत में कांस के फूल उड़-उड़ कर कीचड़ में गिरते और नये बीज रोप देते। इछामती के निर्जन स्थलों पर कितनी ही बार वसंत मूर्तिमान हो उठा। फागुन चैत में कितनी मालवाहक नौकाओं के मल्लाहों ने लंगर डालकर पेड़ों के नीचे पकाया खाया और मोम एवं मधु संग्रह करने सुंदरवन की ओर चले गये। मछुआरों ने मछलियां पकड़ने के लिये जाल डाले।

पांचपोता गांव के दोनों तरफ की नील की खेती बंद हो जाने के फलस्वरूप वहां भी घना जंगल उग आने के कारण अब मल्लाह वहां नाव नहीं बांधते। पौधों लताओं और शेयाकुल के कांटों के कारण किनारे से नदी में उतरना असंभव हो गया। बस स्वाति और उत्तर भाद्रपद नक्षत्र के जल के सीपियों में जाकर मोती बनने की दुराशा में दूसरे गांवों के गोताखोर जंगल के पास सीपियों का ढेर लगाकर छोड़ देते, जिस पर बाधा लता के पीले फूल झड़कर गिरते रहते।

तब भी इछामती का पानी कितने ही लोगों की चिताओं की राख बहाकर सागर की ओर ले गया, जो ज्वार के साथ जाती और भाटा के साथ फिर लौट आती, इस प्रकार बार-बार मिले — मिलते दूर सागर के नीले जल की गहराई में जाकर बैठ गयी। जिसने बड़ी साध से, आशा से उत्तर के मैदान में केले का बगीचा लगाया था, गोता लगाने वाले मोड़ पर बांस खपच्चियां चीरकर बुनकर, डेरा डाला था, आज उसकी अस्थियां हो सकता है इछामती के डांग पर धूप बारिश में पड़ी सड़ रही हों। नदी के दोनों तीरों के घाटों वाले पथों पर कितनी तरुणी वधुओं के पदचिन्ह पड़े और प्रौढ़ाओं वृद्धाओं के पदचिह्न मिटते होंगे। गांव-गांव में विभिन्न अवसरों पर मंगल शंख की आनंद ध्वनि बजती होगी.... उन सब वधुओं के पैरों का आलता धुलते-धुलते बिल्कुल धूमिल हो जाता होगा। मृत्यु को, गरीयसी मृत्यु माता को कौन पहचान पाया है? पथ प्रदर्शक मायामृग के समान जीवन के पथ का मार्ग दिखाती चलती है। अपना अपूर्व रहस्यमय अवगुंठन कभी शिशु के सामने खोलती है तो कभी वृद्ध के। वर्षा ऋतु में इस इछामती के किनारों के भरे छलकते रूप में कोई-कोई ही उस अनजान महासमुद्र की तीरहीन असीमता की कल्पना कर पाता है। अतीत के इतिहास से जुड़े उन सब मैदानों, उन सब निर्जन खंडहरों पर कितने विलुप्त चेहरों की मुस्कान अदृश्य रेखांओं में अंकित है।

उन सबके सामने से होती हुई इछामती की जलधारा चंचल वेग से बड़े खारे गांग की ओर जा रही है और वहां से मुहाना, रायमंगल और फिर गंगा-सागर पार करके महासमुद्र की ओर......

दि सेन्ट्रल इलैक्ट्रिक प्रेस, ए-12/1 नरायणा इन्डस्ट्रियल एरिया-I, नई दिल्ली 110028 द्वारा मुद्रित